Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्
पुस्तक संख्या ...... ५५.६ / ५४
पञ्जिका संख्या २६१०५
पुस्तक पर सर्व प्रकार की निशानियां लगाना वर्जित है। कोई सज्जन पन्द्रह दिन से अधिक देर तक पुस्तक अपने पास नहीं रख सकते। अधिक देर तक रखने के लिये पुनः आज्ञा प्राप्त करनी चाहिये।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि न लगायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय

गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या 55.6/54 आगत संख्या 27105

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30 वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए अन्यथा 50 पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्टाक

55.6,54
27105
55.1.113 H

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्वन्तरि

इन्जेक्शन विज्ञानांक

(द्वितीय भाग)

--लेखक--

श्री. चौधरी. तेजबहादुरसिंह D.I. M., B. I. M. S.

—प्रकाशक—

धन्वन्तरि कार्यालय
विजयगढ़ (अलीगढ़)

ई १९५७
३६ अङ्क १०

इस अङ्क का
मूल्य २)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वर्ण-मुक्ता एवं कस्तूरी मिश्रित रस

आयुर्वेदीय चिकित्सा में रसों का विशिष्ट स्थान है। रसों के आश्चर्यजनक प्रयोगों के भरोसे ही आयुर्वेदिक चिकित्सक समाज डाक्टरों से लोहा लेने में समर्थ होता है। किंतु यह अचिन्त्य प्रभाव केवल उन्हीं रसों से प्राप्त हो सकता है जिनमें स्वर्ण, मुक्ता, कस्तूरी आदि बहुमूल्य द्रव्य असली और शास्त्रलिखित मात्रा में डाले गये हों। आजकल कतिपय फार्मेसियां इस विषय में बहुत गिर गई हैं। हम आपको यह विश्वास दिला देना चाहते हैं कि धन्वन्तरि कार्यालय द्वारा निर्मित ये औषधियां असली बहुमूल्य द्रव्य डालकर बनाई जाती हैं।

वृ० कस्तूरीभैरव रस—(भैषज्य०) वायु की उग्रावस्था, सन्निपात, नाड़ी की कमजोरी, बालकों के न्यूमोनियां आदि पर शीघ्र प्रभावकारी है। मूल्य १ तोला १४)

कुमारकल्याण रस—(भैषज्य०) यथा नाम तथा गुण। बालकों के सभी रोगों में लाभप्रद है, ज्वर, श्वास, वमन, पारिगर्भिकरोग, ग्रह दोष, दूध न पीना, कामला, अतिसार, सूखारोग अग्नि विकृति नाशक है। मात्रा-आधी गोली से १ गोली। अनुपान-माता का दुग्ध या खांड। मूल्य १ तोला २७)

चतुर्मुख चिन्तामणि रस-(भैषज्य०) यह रसायन है। बलीपलित नाशक है। अपस्मार, तीव्र उन्माद एवं वातजन्य रोगों को नष्ट करता है। मात्रा—२ रत्ती से ४ रत्ती तक। अनुपान-मधु और त्रिफला। मूल्य १ तोला १६)

जयमङ्गल रस—(भैषज्य०) जीर्ण ज्वर, साध्य व असाध्य आठों प्रकार के ज्वर, विविध प्रकार के एकदोषज, विषम, मेदोगत, मांसगत, अस्थिगत, मज्जागत, अन्तर्वेग, बहिर्वेग, नाना दोषों से उत्पन्न, शुक्रगत आदि ज्वर संज्ञक संपूर्ण व्याधियों को शिवाज्ञा से नष्ट करता है। मात्रा-१ रत्ती से ४ रत्ती तक। अनुपान जीरक चूर्ण और मधु। मूल्य १ तोला २५)

वसन्तकुसुमाकर रस—(भैषज्य०) यह रस बुद्धिवर्द्धक, कामद, पुष्टिकर तथा आरोग्यकर है। इसके निरन्तर सेवन करने से वीर्य शुद्ध व पुष्टि होकर पुत्र जन्म का कारण होता है। यह प्रमेह विशेषतः मधुमेह में सहस्रशः सफल रसायन है। खांड तथा चन्दन के योग से अम्लपित्त प्रभृति रोगों को नष्ट करता है। मात्रा २ रत्ती। अनुपान खांड, घी तथा मधु। मूल्य—१ तोला २१)

स्वर्ण वसन्त मालती नं० १— (भैषज्य०) इसके गुणों से वैद्य तो क्या आम जनता भी परिचित है। जीर्णज्वर के लिए यह प्रसिद्ध योग है। इसके निर्माण में शुद्ध हिंगुल के स्थान पर हम सिद्ध मकरध्वज नं० १ डालते हैं अतएव यह अत्यन्त प्रभावशाली औषधि बन जाती है। मात्रा—१ रत्ती से २ रत्ती तक। अनुपान-सितोफलादि चूर्ण, या पिप्पली चूर्ण और मधु। मूल्य-१ तोला २१) शास्त्रीय विधि से बनी स्वर्णबसन्त मालती नं० २, मूल्य १ तोला १२)

रसराज रस— (भैषज्य०) इसके सेवन से पक्षाघात, अर्दित, धनुस्तम्भ, अपतानक, भीषण शूल आदि वातज व्याधियां शीघ्र नष्ट होती हैं। अनुपान—मधु या मलाई। मात्रा—१ रत्ती से २ रत्ती तक। मूल्य १ तोला १८)

अन्य सभी औषधियों का मूल्यादि मालूम करने के लिए सूची मंगावें।

निर्माता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्वन्तरि--विषचिकित्सांक

[धन्वन्तरि के वर्ष २७ का विशेषाङ्क]

प्रधान सम्पादक
श्री. ताराशंकर मिश्र आयुर्वेदाचार्य
वाइस प्रिंसपल-अर्जुन आयुर्वेद विद्यालय, काशी
सदस्य-उत्तरप्रदेशीय भारतीय चिकित्सा परिषद

भास्कर आयुर्वेदिक औषधालय
दारानगर,
काशी।

CHECKED 1973
Initial

प्रिय दर्शन !

धन्वन्तरि विष चिकित्सांक की प्रस्तावित सूची आपके समक्ष है। अपनी इच्छानुसार इसमें किसी विषय पर लेखनी उठा लें और पूरा कर दें उसका अथ से इति तक साहित्य !! इतना ध्यान रक्खें कि अनावश्यक रूप से बढ़ डम्बर न होने पाये, साथ ही आवश्यक कुछ छूट भी न जाय

यह तो आप जानते ही हैं कि 'अगद तन्त्र' आयुर्वेद के आठ अङ्गों में महत्वपूर्ण अङ्ग है परन्तु इस पर व्यापक रूप से साहित्य निर्माण नहीं हो सका है। जो कुछ है भी, वह यत्र तत्र सर्वत्र है।

धन्वन्तरि ने इस अभाव को दूर करने के लिए ठीक समय से कदम उठाया है। पर विषय महा कठिन है यहां तक कि अद्यावधि के विशेषांकों में सबसे कठिन। आगे भी इससे कठिन कोई विषय सामने आयेगा, भगवान ही जाने।

इसलिए कठिन है कि इस पर साहित्य बहुत कम है। जो है भी वह अनन्त कोनों में बिखरा हुआ। चोटी के लेखक या क्रियाकुशल वैद्य ही इसके विषयों पर श्रीगणेश कर सकेंगे और सुचारू रूप से समाप्त कर लेंगे, यह परिणाम ही बताएगा।

आज धन्वन्तरि ने आपको निमंत्रण दिया है। उठाइये लेखनी! एकत्र कर लीजिये कोने कोने से सामग्री! सम्पर्क स्थापित कर लीजिये तद्विदों से। मथ डालिये 'विष चिकित्सांक' के क्षेत्र को और विजय कर लीजिये अगदतन्त्र की शुभ श्री को। तब कृतकृत्य हो पूज्य आयुर्वेद के चरणों में प्रणाम कर बड़भागी बन जाइयेगा।

शीघ्र बता दें हमें! किस विषय पर आपकी लेखनी चलेगी? याद कर लीजिए आपके शुभकार्य के परिणाम स्वरूप निबंध हमें ७ जुलाई ५२ तक मिल जाय। ऐसा कर "कार्यकालं न हापयेत्" (भगवान आत्रेय पुनर्वसु) को आप चरितार्थ करेंगे। अन्यथा "कालः पिबति तद्रसम्" होजायगा।

मनाइए ईश्वर से आपके सक्रिय सहयोग से धन्वन्तरि सफल हो।

ताराशङ्कर
का
प्रणाम।

55.6,54
27105

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्वन्तरि

विष चिकित्साङ्क की

प्रस्तावित विषय सूची

सूची प्रत्येक विषय के स्पष्टीकरण के दृष्टिकोण से लिखी गई है। निबन्ध संग्रह होजाने पर शीर्षक सुन्दर एवं संक्षिप्त बनाए जा सकते हैं। आवश्यकतानुसार पूर्व और पश्चिम का समन्वय अवश्य करने की कृपा करें। ❀चिन्हांकित को छोड़ कर किसी खण्ड के किसी स्तम्भ में उल्लिखित किसी विषय पर निबन्ध लिखिए।

परिभाषा खंड–

❀१—तन्त्रस्यास्य प्रयोजनम् (विष चिकित्सांक की आवश्यकता)।

२–इतिहास की दृष्टि में विष–

क–विष का सामान्य ज्ञान (परिभाषा, पर्याय एवं उत्पत्ति)

❀ख–वेदों एवं पुराणों में विषों एवं उनकी चिकित्सा का वर्णन।

ग–प्राचीन युद्धकला में विष प्रयोग एवं उसके प्रतिकार।

घ–विषकन्या (ललित कथा के रूप में)

ङ–वे महापुरुष जिन पर विष प्रयुक्त हुए (नीलकण्ठ भगवान शङ्कर, प्रह्लाद, भीम, मीरा, चांदबीबी एवं महर्षि दयानन्द आदि पर विष प्रयोग प्रकार, उत्पन्न लक्षण एवं परिणाम आदि का विवरण)

च–विष का साहित्य (विष विषयक लेखक, ग्रन्थ, संहिता, पत्रपत्रिका आदि)

३–भूगोलिक की दृष्टि में विष–

❀क–विभिन्न विषों का भूगोलिक ज्ञान(संसार अथच भारत में विभिन्न विषों की उत्पत्ति स्थल, ऋतु, प्रधान विक्रय केन्द्र और प्रमुख व्यापारी आदि का विवरण मानचित्र सहित)

४–विधि (कानून) की दृष्टि में विष–

क–विष के क्रय-विक्रय और रखने के नियम

ख–विष जुष्ट के चिकित्सक का कर्तव्य (चिकित्सा के पूर्व चिकित्साकाल में और उसके पश्चात मृत्यु के पूर्व और पश्चात)

ग–विष जुष्ट प्राणी से सम्बद्ध वस्तुएँ। (वमन, मल, मूत्र, भोजन, पेय एवं वस्त्र आदि का संरक्षण, परीक्षण या एतन्निमित्त अन्यत्र प्रेषण)

घ–विषदाता की परीक्षा।

ङ–पोस्टमार्टम

च–विषों की अनुसन्धान शालायें, चिकित्सालय या अन्यान्य प्रतिष्ठान।

छ–अगदतन्त्र का अध्ययनाध्यापन (भारत के आयुर्वेद-विद्यालयों, मेडिकल कालेजों या अन्यान्य संस्थाओं में एवं विदेशों में)

५–निदान—

क–विषोपविष का वर्गीकरण (प्राच्य-पाश्चात्य दृष्टिकोण)

ख–विष के गुण एवं मद्य से उसका समन्वय

ग–विष जुष्ट प्राणी के निदान करने की प्रणाली एवं साधन।

घ–विषजुष्ट के लक्षण।

ङ–विष सेवन अथच विषदान के प्रकार।

च–विष युक्त अस्त्रशस्त्र एवं अङ्गों पर उसका प्रभाव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छ-शल्य या शालाक्य कर्म में प्रयुक्त विष
ज-विषाक्त पदार्थ (भोजन, जल, वस्त्र, माल्य, गन्धानुलेपन, उपनाह, मार्ग एवं वायु आदि के लक्षण और रासायनिक परीक्षण)
झ-चिकित्सार्थ प्रयुक्त विष की अतिमात्रा के लक्षण
ञ-मृत शरीर के चिन्हों से प्रयुक्त विष का ज्ञान
ट-विष से मृत व्यक्ति की अन्त्येष्टि

६-चिकित्सा —
*क-विष-जुष्ट की चिकित्सा के साधन एवं उपाय
*ख-विषजुष्ट प्राणी की चिकित्सा में सावधानी
*ग-चिकित्सार्थ विष का प्रयोग प्रकार एवं मात्रा निर्धारण।
घ-विष के वेग-वेगान्तर, उसके (वेग के) रहस्य और प्रतिकार।
ङ-विष वेग बढ़ाने वाले कारण एवं उनका प्रतिकार
च-सप्तधातुओं, आशयों एवं अन्यान्य अङ्गों पर प्रयुक्त विष की चिकित्सा।
*छ-विभिन्न विषों के उपशामक अथच प्रतिकारक द्रव्य एवं उपाय
ज-विष चिकित्सा में पञ्चकर्म का प्रयोग
झ-विष चिकित्सा में पंचगव्य का प्रयोग
ञ-विष चिकित्सा में पंचामृत का प्रयोग
ट-विष-चिकित्सा में क्षीर का प्रयोग
*ठ-नरमूत्रं विषहरं
ड-कुछ विशिष्ट अगद
ढ-विष की साम-निराम अवस्था का लक्षण एवं प्रतिकार।
ण-स्थावर एवं जंगम विष की पारस्परिक चिकित्सा
त-विषनाशक औषधियां एवं हृदयावरण।

७-त्रिदोष की दृष्टि से विष-
क-सभी विषों का त्रिदोष में अन्तर्भाव करने का प्रकार।
ख-स्थावर विष का त्रिदोष से सम्बन्ध व तदनुसार प्रतिकार।
ग-जंगम विष का त्रिदोष से संबन्ध एवं तदनुसार प्रतिकार।
घ-गर विष, दूषी विष एवं पाश्चात्य विषों का त्रिदोष से सम्बन्ध।

स्थावर विष विज्ञानीय खण्ड—
क-स्थावर विष का सामान्य ज्ञान (परिभाषा भेद, अधिष्ठान, गति, शरीर पर प्रभाव एवं चिकित्सा)
ख-स्थावर विषों का सामान्य शोधन एवं चिकित्सा के दृष्टिकोण से प्रयोग प्रकार।
ग-किसी अपरिचित स्थावर विष के गुणधर्म जानने एवं चिकित्सा में प्रयोग करने की रीति।
घ-निम्नांकित विषों में से किसी एक का परिचय (सचित्र हो तो उत्तम), पर्याय, पर्याय के रहस्य, व्यापारिक पैंतरेबाजी, उत्पत्ति स्थल, ग्रहणकाल, उपयोगी अङ्ग, शोधन, हीन शोधन का प्रतिकार, प्राप्ति के उपाय (वैधानिक दृष्टिकोण) शरीर पर प्रभाव, अङ्ग विशेष पर विशेष प्रभाव, मात्रा, घातक मात्रा, उसके यौगिक, आमयिक प्रयोग, घातक काल, पूर्ण चिकित्सा, पथ्यापथ्य, परिचर्या, उससे मृत व्यक्ति की पहचान (शारीरिक चिन्ह, वमन, मल, मूत्र, वस्त्र आदि का पूर्ण विवरण) वेग और वेगकाल, वेग बढ़ाने वाले कारण, लैटिन या अंगरेजी नाम और आमयिक प्रयोग आदि का पूर्ण विवरण—

६ विष—

वत्सनाभ	हारिद्र	सक्तुक
प्रदीपन	सौराष्ट्रिक	शृङ्गिक
कालकूट	हालाहल	ब्रह्मपुत्र

७ उपविष—

अर्कक्षीर		स्नुही क्षीर
कलिहारी	सेंहड़ का दूध	करवीर
गुञ्जा		*अहिफेन

अन्य विष—

*धत्तूर	कुचिला	कचूर
भल्लातक	कपूर	इन्द्रायण
जयपाल	भांग	गांजा
चरस	सुरती	तमालपत्र
कोकीन	संखिया	तुत्थ
ताम्र	नाग	*हीरक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारद. रसपुष्प, रसकपूर

कज्जल मिट्टी का तैल (किरासीन आयल)

अन्यान्य खनिजों के हीन शोधन के कारण उत्पन्न विष लक्षण एवं उनका प्रतिकार।

जंगम विष विज्ञानीय खण्ड—

क-जंगम विष का सामान्य ज्ञान(भेद, अधिष्ठान. परिभाषा, शरीर पर प्रभाव, गति और चिकित्सा आदि)

ख-जंगम विषों का शोधन एवं चिकित्सा की दृष्टिकोण से प्रयोग प्रकार।

ग-अपरीक्षित जंगम विष के गुणधर्म जानने एवं चिकित्सा में प्रयोग करने की रीति।

घ-निम्नांकित जन्तुओं में किसी एक का परिचय, चित्र, जन्तु में विषाधिष्ठान. निर्विष एवं सविष के लक्षण, दंश का लक्षण स्थानीय, शरीर पर सामान्य प्रभाव, विशिष्ट अङ्ग पर प्रभाव, विष का वेग, वेगकाल, चिकित्सा (सद्यः और स्थायी दोनों) सेवा,पथ्यापथ्य वेग बढ़ाने वाले कारण, शमन करने के अन्यान्य उपाय, अरिष्टाबन्धन, क्षत. प्रदाह, मन्त्र, घातक काल, असाध्य लक्षण, उससे मरने के शारीरिक चिन्ह, शव-परीक्षा, चिकित्सा के लिए उपयोगी अंश का ग्रहण प्रकार, उसका शोधन, हीनशोधन से होने वाली व्यापत्ति और प्रतिकार, घातक मात्रा, यौगिक, आमयिक प्रयोग आदि का पूर्ण विवरण—

सर्प※		वृश्चिक
शरट (गिरगिट)		छिपकली
गोधा	शतपदी	बर्रे
मधुमक्खी		लूता (मकड़ी)
मूषक		जलौका
श्वान (कुत्ता)		मनुष्य

ङ-अन्यान्य विषाक्त प्राणी।

च-सर्पों की विभिन्न जातियां

छ-नागराज शेष, वासुकी एवं तक्षक।

ज-सर्प और संगीत (महुअर आदि)

झ-सर्पविष पर मन्त्र प्रयोग, सर्पदूरीकरण. नागदमनी बूटी।

ञ-जनमेजय का सर्पयज्ञ एवं उसके होता आस्तीक मुनि।

ट-नागपंचमी पर्व एवं काशी का नागकूप अथवा अन्यान्य विष नाशक तीर्थ।

ठ-मांसज एवं मत्स्यज विष(लक्षण और चिकित्सा)

ड-सर्प बनाम नकुल।

ढ-सर्पविष पर जहरमोहरा का प्रयोग।

गरविष विज्ञानीय खण्ड—

क-गरविष की परिभाषा, शरीर पर उसका प्रभाव वेगकाल एवं चिकित्सा

ख-अन्न विष के लक्षण एवं चिकित्सा आदि।

ग-आम विष के ,, ,, ,,

※घ-मृत गर्भ विष के ,, ,,

※ङ-मूत्र विष के ,, ,, ,,

च-पुरीष विष ,, ,, ,,

छ दूष्योदर का निदान और चिकित्सा, इसमें सर्प विष युक्त फल भक्षण की व्यवस्था, प्रकार, रहस्य, व्युत्पत्ति, व्यापत्ति की चिकित्सा।

ज-वे राजनीतिज्ञ महापुरुष जिन पर गरविष प्रयुक्त हुआ—

पं० मोतीलाल नेहरू, जे. एम. सेन गुप्त, महादेव देसाई।

(विष के प्रगट लक्षण, चिकित्सा परिणाम)

दूषी विष विज्ञानीय खण्ड—

क-दूषीविष की परिभाषा, लक्षण, वेगकाल और चिकित्सा।

※ ख वैद्यों द्वारा अज्ञात में दूषी विष का प्रयोग ("मन्त्रौषधिभिर्हन्त" के अनुसार सभी वैद्यों द्वारा अपने रोगियों पर दूषीविष का प्रयोग, उससे हानि एवं निराकरण)

विष घटित प्रमुख प्रयोग—

※ क-संजीवनी वटी।

ख--सूचिका भरण रस

ग-विसूची विध्वंसन रस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरल व सिद्ध प्रयोगों का भण्डार

गुप्तसिद्धप्रयोगाङ्क—(द्वितीय भाग) यह धन्वन्तरि का विशेषांक है। एक-एक सफल चिकित्सक से २ या ३ सरल व सफल प्रयोग बड़े आग्रह से प्राप्त कर संग्रह कर प्रकाशित किए गए हैं। लगभग २५० प्रयोगों का उपयोगी संग्रह है। मू० २)

गुप्तसिद्ध प्रयोगांक—(तृतीय भाग) द्वितीय भाग के समान ही इसमें भी २५० उत्तमोत्तम सिद्ध प्रयोगों का संग्रह है। मू० २)

सिद्धयोगसंग्रह—आयुर्वेद मार्तण्ड माननीय यादव जी त्रिक्रम जी द्वारा अनुभूत सफल प्रयोगों का संग्रह. हर चिकित्सक के लिए उपयोगी पुस्तक है। सभी वैद्यों को अवश्य मंगा कर लाभ उठाना चाहिए। मू० २॥)

अनुभूत योग चिन्तामणि—प्र. भाग ५३२ सफल प्रयोगों का अभूतपूर्व संग्रह। लेखक-डा० गणपति-सिंह वर्मा, पृष्ठ संख्या ४०६ मू० ४)

द्वितीय भाग—इसमें ३११ अनुभूत प्रयोग हैं। मू० ४)

अनुभूतयोग प्रकाश—डा० जी० एस० वर्मा द्वारा १५ वर्ष के परिश्रम से प्राप्त अनुभूत प्रयोगों का संग्रह है। प्रायः सभी रोगों पर आपको सफल प्रयोग इस पुस्तक में मिलेंगे। दो भागों में मू० ६)

पेटेण्ट औषधियां और भारतवर्ष—(बरालोकपुर से प्रकाशित) देशी-विदेशी पेटेण्ट औषधियों का भंडाफोड़ किया है। उनके प्रयोग इसमें दिए हैं। दो भागों में मू० १॥)

पेटेण्ट औषधियां और भारतवर्ष—इसमें ५११ पेटेण्ट औषधियों के प्रयोगों का स्पष्ट वर्णन किया है। दो भाग हैं। मू० ३≡)

पैसे पैसे के चुटकुले—सरल, सस्ते तथा सफल प्रयोगों का संग्रह। मू० ३)

यूनानी सिद्ध योग संग्रह—श्री० दलजीतसिंह जी द्वारा संकलित यूनानी पद्धति के सफल प्रयोगों का उपयोगी संग्रह है। मू० २॥)

अनुभूत प्रयोग—श्री० श्यामसुन्दराचार्य जी वैश्य के सफल प्रयोगों का उपयोगी संग्रह। २ भागों में। मू. २)

रसतंत्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह—(प्रथम भाग) इसमें आयुर्वेद के प्रायः सभी प्रसिद्ध एवं परीक्षित प्रयोगों का उपयोगी संग्रह है। उनकी विस्तृत निर्माण विधि, गुण, सेवन विधि आदि दी है। सातवां संस्करण, पृष्ठ-संख्या ६००। पुस्तक हर वैद्य के लिये पठनीय है। मू० ६॥)

राजकीय औषधियोग संग्रह—उत्तर प्रदेश के सरकारी आयुर्वेदिक औषधालयों में व्यवहार आने वाली ४०० से ऊपर औषधियों के प्रयोग, निर्माण विधि, गुण, सेवनविधि आदि श्री. रघुवीरप्रसाद जी त्रिवेदी द्वारा लिखित उपयोगी ग्रंथ। पुस्तक विद्यार्थियों तथा विद्वानों सभी के लिए पठनीय है। मू० ७)

राष्ट्रीयचिकित्सा सिद्धयोग संग्रह—श्री. रघुवीरप्रसाद जी ने इस छोटी सी पुस्तक में आयुर्वेद के सभी प्रसिद्ध प्रयोगों को संक्षिप्त रूप में संग्रहीत किया है। पुस्तक चिकित्सकों के लिए उपयोगी है। मू० १॥)

वृ० पाक संग्रह—इसमें ४०० से अधिक पाकों के प्रयोगों का उपयोगी संग्रह है। चिकित्सक एवं रोगी इसे मंगा कर लाभ उठावें। मू० ३॥)

सिद्धौषधि प्रकाश—२८० पृष्ठों में प्रायः सभी रोगों के संक्षिप्त वर्णन के साथ-साथ उन रोगों को सफलता पूर्वक नष्ट करने वाले सिद्ध प्रयोगों का उपयोगी संग्रह दिया है। तृतीय संस्करण, मू० १॥) मात्र।

एकौषधि गुण विधान—लेखक-डा० गणपतिसिंह वर्मा। एक-एक औषधि के व्यवहार से भयंकर व्याधियों की सफल चिकित्सा इसमें पढ़िए। ग्रामीण, साधनहीन चिकित्सकों को अत्युपयोगी पुस्तक है। कौड़ियों की वस्तुओं से आप सैकड़ों रुपये पैदा कर सकेंगे। मू. १॥।≈)

सिद्ध मृत्युञ्जय योग—इस पुस्तक में ५३ सफल प्रयोगों का वर्णन है। प्रयोग, मात्रा, सेवन विधि गुण आदि देकर यह भी स्पष्ट लिख दिया है कि प्रयोग किस प्रकार प्राप्त हुआ तथा कहां कहां सफलता के साथ व्यवहृत हुआ है। मू० १)

मिलने का पता— धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेदीय

आश्चर्यमय खोज

इस विशेषांक के मूल लेखक, जननेन्द्रिय रोग कामविज्ञान विशेषज्ञ श्री. तेजबहादुर चौधरी का अनूठा आविष्कार "वीरसतरल" पहले के शुष्क वीरस से कई गुना प्रभावशाली और सभी असुविधाओं से मुक्त।

इसकी केवल १५ बूंद शीतल जल में घोलकर उसमें केवल अण्डकोषों को ही ५-१५ मिनट तक डुबोने मात्र से ही औषधि का शोषित होकर अण्ड कोषों पर ऐसा विलक्षण प्रभाव पड़ता है कि स्वप्नदोष तो उसी दिन से रुक जाता है और इसके अतिरिक्त कामांगों में बेचैनी सी छा जाती है।

बुढ़ापे, रोग, दुर्बलता, अतिमैथुन, किसी भी कारण से हारे थके ढीले, लटके और छोटे शक्ति हीन अण्डकोषों में नई जान सी आनी आरम्भ होकर उपरोक्त सभी विकार शान्त होकर नवीन शुक्र निर्माण हो, कामाङ्गों की वृद्धि होनी आरम्भ होजाती है। जिनके वीर्य में पुंबीज नहीं आते, 'वीरस तरल' के प्रयोगोपरांत खुर्द बीन से देखने पर उनके वीर्य में पुंबीज दिखाई देने लगते हैं और सन्तान पैदा करने की अपार शक्ति आजाती है।

१५ दिन के एक कोर्स का मूल्य २।।)
पोस्ट व्यय पृथक।

नोट—हमारे अन्य कामसम्बन्धी सामान औषधियों का विशेष सूचीपत्र मंगावें।

नवयुग आयुर्वेद भवन
पो० अकरौली जिला मुरादाबाद,
उ० प्र०।

मर्दन गुणवर्द्धनम्।

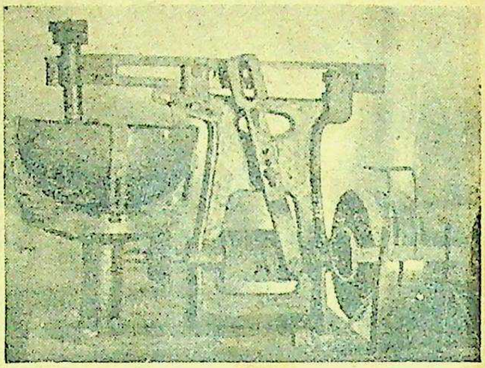

अपनी औषधि निर्माणशाला में रस और भस्मों के कणों को शास्त्रीय वचनानुसार सूक्ष्माणुओं में परिवर्तित करने के लिए इस नव्यतम खरलयन्त्र को स्थान देकर औषधियों के गुणों में वृद्धि करें।

निर्माता—
दयालु फार्मास्युटिकल वर्क्स
सुनारों का मुहल्ला, बीकानेर।

प्रगति की ओर

★ आधुनिक ऑटोमेटिक मशीनों द्वारा
★ सब प्रकार की रंगीन छपाई के लिए—
★ हर साइज के सादा व छपे हुए खोलों व डिब्बों के लिए
★ टीटागढ़ मिल्स के हाथी छाप कागज व अन्य सब कागजों के लिए आप

अपने सुपरिचित सुविख्यात—

अग्रवाल प्रेस, मथुरा

को लिखिये या मिलिये।
फोन नं०: १५०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

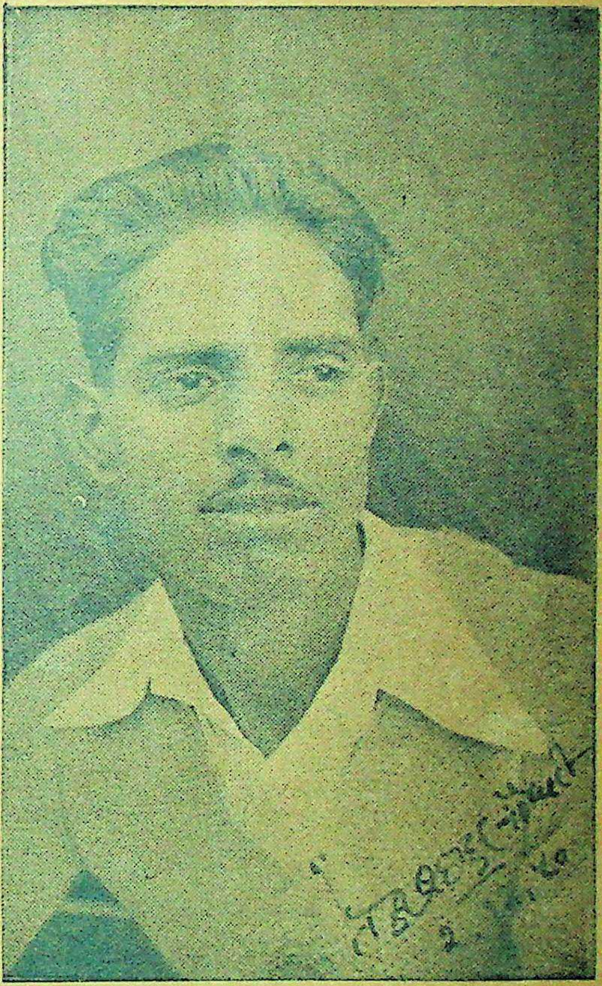

श्री. चौधरी तेजबहादुर सिंह D. I. M., B. I. M. S.

—लेखक—

इन्जेक्शन विज्ञानाङ्क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लवणोदक चढ़ाने के यन्त्र

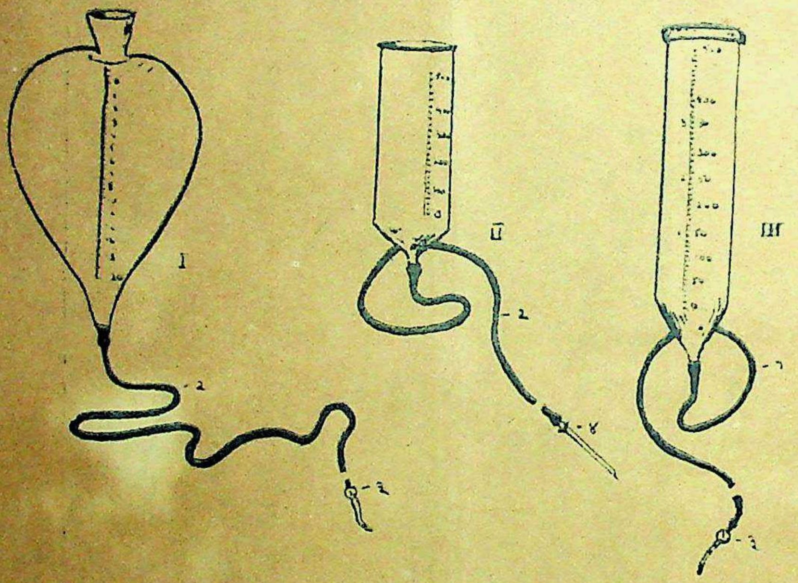

१--शीशे का पात्र--लवणोदक के लिए।

२--रबड़ की नलिका।

३-केनुला जिसमें प्रवाहगति न्यूनाधिक करने के लिए टोंटी लगी है।

४-सूई जिसके अन्दर Trocar है जिसके द्वारा उदरकलाच्छद के मध्य लवणोदक देते हैं।

(विवरण पृष्ठ ८०५ पर देखें)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"धन्वन्तरि"

इन्जेक्शन-विज्ञानाङ्क

[द्वितीय भाग]

हमारी ओर से----

इन्जेक्शन विज्ञानांक का यह द्वितीय भाग पाठकों के करकमलों में जब तक आएगा तब तक इन्जेक्शन सम्बन्धी अनेकों चर्चायें, निबंध, इत्यादि पाठकों को इसके प्रथम भाग में विस्तार से मिल चुके होंगे। प्रथम भाग में यद्यपि अत्यन्त स्पष्टता, विस्तार, उदारता एवं निःसंकोच्य भाव से जो भी इन्जेक्शन विषय पर हम सामग्री और विविध मत मतान्तर दे सके, तथा अपनी निजी सम्मति और दृष्टिकोण को जो विशेष कर आयुर्वेदीय इन्जेक्शनों पर ही था, दे सके, पाठक उससे भली भांति परिचित हो गए हैं।

प्रथम भाग में अपना मौलिक विचार, इन्जेक्शन की आवश्यकता, इसके भेद, उन भेदों का वर्णन जैसे त्वचान्तर्गत,मांसगत,शिरागत कलाओंगत इन्जेक्शनों के भेदों का स्पष्टीकरण करते हुये इन्जेक्शन सम्बन्धी उपकरण, उन उपकरणों के पूतिकरण सम्बन्धी विषय को स्पष्ट करते हुए हमने साथ-साथ में प्रयोग होने वाली औषधियों को पूतिकृत करने की भी विधियां उनकी मात्रा,मान, विलियन Solutions घोल बनाने की विधियां, एवं विविध निर्माण विधियों पर गम्भीरता से प्रकाश डाला, और उनको इस उद्देश्य से ही लिखने का प्रयत्न किया कि साधारण व्यक्ति भी इस गहन विषय को आसानी से घर बैठे सीख सके। तदुपरान्त आधुनिक मतानुसार वेक्सीन ग्रन्थि रस (Harmones) जीवतिक्त Vitamins, होम्योपेथिक इन्जेक्शन प्रणाली, और इन्जेक्शनोपयोगी द्रव्यों के निर्माण का उल्लेख किया है, अन्त में जाकर औषधियों को सिरिंज में भरने की विधि देकर तब प्रयोग अर्थात इन्जेक्शन लगाने की विधि का स्पष्टीकरण किया है, इसके साथ-साथ आयुर्वेदिक इन्जे-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

917 160

क्शन प्रणाली पर हमने अपना जो निजी मत निर्धारित किया था कि अन्य विधियां किसी रूप से मूल द्रव्य का प्रतिनिधित्व कर सकती हैं, पर क्षार तो मूल द्रव्य के नष्ट होने पर अग्नि सम्पर्क से एक और ही द्रव्य बनता है जो मूल द्रव्य का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता। कहने का तात्पर्य यही है कि क्षार द्वारा बने इन्जेक्शन जो केवल क्षार का जलीय या रेक्टीफाईड स्प्रिट में बने हुए विलियन ही होते हैं, रोगी के लिए हानिकर और बेकार की सूझ है।

जब यह मत हमने पाठकों के, आज के आयुर्वेद के महारथि कहे जाने वाले विद्वानों, आयुर्वेद महामण्डल एवं क्षार मत के समर्थकों के सम्मुख रखा तो अधिकांश में मत हमारे पक्ष में ही रहे कि क्षारों का प्रयोग इन्जेक्शन रूप में ठीक नहीं है बल्कि हानिप्रद है, फिर भी कुछ निर्माताओं ने हमारे मत को खण्डन करने के अभिप्राय से अपनी सम्मतियां, प्रमाण प्रकाशित कराये, परन्तु उनकी सेवा में हमने उनको उत्तर देकर उनके भ्रमों का सादर निवारण कर दिया है, यह झगड़ा अभी समाप्त नहीं हुआ है और अभी इस अंक के पूर्व या उपरान्त इस झगड़े से सम्बन्धित हमारी और हमारे विरोध में दिये गए मत पाठकों के सम्मुख रखे जायंगे। यह तो अब भविष्य ही निर्णय करेगा कि कहां तक हमारा मत ठीक है।

इस बीच यह द्वितीय भाग आपके हाथों में है इसमें लगभग एक हजार से ऊपर इन्जेक्शन दिए गए हैं जो प्रधानतया एलोपैथिक और आयुर्वेदिक ही हैं, एलोपैथिक इन्जेक्शनों को यथासम्भव अकारादि क्रम से रखने का ही प्रयास किया गया है परंतु जहां पुनः संशोधन और परिवर्धन किया गया है वहां अकारादि क्रम की शृंखला टूट गई है। एलोपैथिक इन्जेक्शनों के साथ-साथ आयुर्वेदिक इन्जेक्शनों के विषय में यह ध्यान रखा गया है कि आज तक के प्रयुक्त और प्रयोग होने वाले, नवीन आविष्कृत इन्जेक्शनों को यथाशक्ति संचित करने की कोशिश की गई है। फिर भी जो इन्जेक्शन रह गए हैं, अथवा आगे निकलेंगे उनको फिर कभी पाठकों को धन्वन्तरि द्वारा भेंट कर दिया जाएगा।

हमने अपनी ओर से यही कोशिश की है कि व्यर्थ में अनावश्यक सामग्री का चयन न करें, क्यों कि पाठकों के अनेकों पत्र मेरे पास इसी आशय के आचुके थे कि अनावश्यक और व्यर्थ की पोथाभरण सामग्री पाने की हमसे आशा उनको नहीं है, इसी लिए होम्योपैथिक या बायोकैमिक इन्जेक्शनों की चर्चा और गुण बखान नहीं किये गए। कारण होम्योपैथिक और बायोकेमिक औषधियों के गुण ही उनके इन्जेक्शनों का गुण है, सभी का वर्णन करने का अर्थ इस इन्जे० विज्ञानाङ्क को होम्योपैथिक और बायोकेमिक औषधियों की एक मेटीरिया मेडिका ही बना देना हो जाता। यही कारण हमने इस भाग के अन्त में स्पष्टतया होम्योपैथिक इन्जेक्शन की चर्चा न करने के लिए लिखे हैं।

अब सम्पादक धन्वन्तरि की कृपाओं के प्रति हमको आभार सूचक कुछ लिख देना शेष रह जाता है, जो बरबस मुझ जैसे आलसी और हठरोगी के प्रति उन्होंने इतने विलम्ब को भी सहर्ष सहन किया, उनके पत्र आते रहे कि मैटर शीघ्र भेजो, पत्र पर टेलीग्राम शब्द लिखे हुए लाल रोशनाई से मैटर की मांग आई, और मैं चुप और शय्या पर निरन्तर रह-रह गया, सभी बातों को उन्होंने निभाया, साथ-साथ में हमारे मत के विरोध में जो भी वक्तव्य आए और हमारे उत्तर-प्रत्युत्तर गए, सभी उन्होंने ज्यों के त्यों पाठकों के आगे रखकर अपने प्रधान कर्त्तव्य को निभाया। मुझे आशा है कि इस बीच हुई इन सभी घटनाओं से उन्हें जो भी कष्ट और इन्तजारी की कोफ्त भुगतनी पड़ी उसे वे सहर्ष क्षमा करेंगे तथा पाठक गणों से भी मेरा यही अनुरोध है कि इन दोनों अङ्कों में यदा कदा आए अशुद्ध शब्दों, वाक्यों, प्रेस की गलतियों एवं और जो भी सिद्धान्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरुद्ध यदि कोई बात लिखी गई है तो उसे क्षमा करते हुए मुझे मेरी त्रुटियों से अवगत करने की कृपा करें। विचारकों से निवेदन है कि हमारे अपने मत पर मुझे निःसंकोच होकर सुझाव दें, और कृपा कर बताने का कष्ट करें कि कहां तक हमारे विचार अनायुर्वेदीय और सिद्धान्त विरुद्ध हैं ताकि उनके सुझावों के अनुरूप ही हम और वे विद्वान विचारक आगे बनने वाले आयुर्वेदीय इन्जेक्शनों में सुधार कर सकें, क्योंकि जब तक विचारों का आदान-प्रदान नहीं होगा यह बात निखरेगी नहीं, क्या हम आशा करें कि वर्तमान युग में आयुर्वेद प्रेमी इस ओर अपनी लेखनी उठाकर इस ओर में भी संशोधन एवं परिवर्धन करने को कटिबद्ध होंगे?

अकरौली] —तेजबहादुर चौधरी।

\+ + +

भूल-सुधार

प्रथम भाग में पृष्ठ ८११ पर पहले कालम के नीचे का वाक्य अशुद्ध छपा है उसका शुद्ध रूपान्तर इस प्रकार पढ़ें—

'यूं आयुर्वेद को एलोपैथी के पीछे पीछे चेरी की तरह चलना, या दास की तरह नाचता देखना कोई आयुर्वेद प्रेमी सहन नहीं करेगा।'

—तेजबहादुर चौधरी।

प्रकाशक की ओर से—

चिर अभिलाषित इन्जेक्शन विज्ञानांक का द्वितीय भाग धन्वन्तरि के पाठक एवं आयुर्वेद समाज के समक्ष प्रस्तुत है। इसके प्रथम भाग के १६४ पृष्ठों में इञ्जेक्शन-विषयक जो सचित्र साहित्य दिया गया है उसे सभी विद्वानों ने अत्युपयोगी घोषित किया है। विविध चित्रों एवं तालिकाओं द्वारा विद्वान एवं अनुभवी लेखक ने विषय को जिस सुन्दरता से प्रतिपादित किया है वह श्लाघनीय है। यह सभी विषय केवल एक भाग में प्रकाशित करने की अभिलाषा थी किन्तु विषय की गम्भीरता तथा विशालता ने ऐसा करना असम्भव बना दिया। लेखक द्वारा प्रस्तुत सम्पूर्ण साहित्य इस द्वितीय भाग में भी पूरा नहीं आसका, यद्यपि इस बार १-१ लाइन को बचाते हुए अधिक से अधिक साहित्य समावेश करनी की भरसक चेष्टा की गई है। एलोपैथिक इन्जेक्शनों का परिशिष्ट भाग, जीवाणुज इन्जेक्शनों के प्रयोग तथा वैक्सीन इन तीन अध्यायों को समयाभाव एवं स्थानाभाव के कारण नहीं दे सके हैं। धन्वन्तरि ५।) मात्र में जितना साहित्य ग्राहकों के समक्ष प्रेषित करता है वह इस महर्घता के समय में बहुत अधिक है, इससे अधिक देना सर्वथा असम्भव है। इसी लिए उपर्युक्त शेष साहित्य को इच्छा रहते हुए भी इस विशेषांक में नहीं दे सके हैं। इसे आगामी वर्ष के एक अङ्क में (यदि पाठकों ने चाहा तो) अवश्य प्रकाशित किया जायगा।

इन्जेक्शन विज्ञानांक के इन दोनों भागों में तथा अन्य साधारण अंकों में श्री.चौधरी जी ने वर्तमान में निर्माण होने वाले आयुर्वेदीय इन्जेक्शनों के विषय में जो अपने क्रान्तकारी और सप्रमाण मत व्यक्त किए हैं तथा इन बाजारीइन्जेक्शनों को निरुपयोगी घोषित किया है उनका हमारे पर पर्याप्त प्रभाव हुआ है। १-१॥ वर्ष पूर्व से हम इन्जेक्शन-निर्माण कार्य प्रारम्भ करने का विचार कर रहे थे तथा कई इन्जेक्शन निर्माण कार्य के ज्ञाता व्यक्तियों से वार्तालाप भी चल रही थी किन्तु ये सभी ज्ञाता झांसी की फार्मेसियों से सीखे हुये तथा बाजारू इन्जेक्शन निर्माण करने वाले ही जान पड़े इसलिए कुछ समय के लिये अपना विचार स्थगित करना ही उचित प्रतीत हुआ। यदि इन्जेक्शनों के विषय में यह चर्चा न चली होती तो अब से बहुत पहिले हमारे इन्जेक्शन बाजार में आगये होते। अब हमारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचार है कि श्री. चौधरी जी के विचारों के अनुरूप उत्तम, कोटि-निर्धारित, पूर्ण निरापद एवं आयुर्वेदीय सिद्धान्त सम्मत इन्जेक्शन ही निर्माण किए जांय। ऐसा कैसे और कब कर सकेंगे यह नहीं कह सकते; हम यह नहीं चाहते कि 'येनकेन-प्रकारेण' उल्टे-सीधे इन्जेक्शन निर्माण कर पैसा पैदा किया जाय। क्या कोई विद्वान आयुर्वेदज्ञ, इन्जेक्शन निर्माण कार्य में दक्ष हमारे सहयोग के लिये आगे आएंगे।

अप्रैल का अङ्क "इन्जेक्शन विज्ञानांक" द्वितीय भाग प्रकाशित करने का विचार था; श्री. चौधरी जी ने इस अंक का साहित्य तो गतवर्ष ही लिख दिया था लेकिन उनकी इच्छा थी कि उसे पुनः पढ़कर उचित संशोधन किया जाऐ। अतएव वह मैटर आपको वापस करना पड़ा। इधर आप अस्वस्थ होगये और इसी लिए निर्धारित समय पर उसका संशोधन नहीं कर पाये। स्वस्थ होने पर सर्व प्रथम आपने इस ओर ही ध्यान दिया और उसे पढ़कर तुरन्त वापिस किया। इस दैविक कारण से मैटर देर से मिला। धन्वन्तरि से अङ्क पहिले से ही लेट होरहे थे। प्रतीक्षा में इनको और अधिक लेट करना असुविधाजनक प्रतीत हुआ और अप्रैल का अंक साधारण अंक के रूप में ही प्रकाशित करना पड़ा। आशा है पाठक विलम्ब-जन्य कष्ट के लिऐ क्षमा करेंगे।

इन्जेक्शन विज्ञानाङ्क के दोनों भागों को समक्ष रखकर यदि आप इस विषय की हिन्दी की अन्य पुस्तकों से तुलना करें तो हमारा विश्वास है कि आप जो साहित्य इनमें पाऐंगे वह अन्य किसी पुस्तक में न मिल सकेगा।

इस दूसरे भाग में जिस प्रकार विविध इन्जेक्शनों का विवरण लिखते हुए, उनका गुण, मात्रा, प्रयोग विधि, उनके प्रयोग में सावधानियां, उनसे हानि, उनका प्रतिकार सभी कुछ बोध-गम्य भाषा में विस्तार से दिया गया है जिसे सभी हिन्दी भाषा-भाषी भला प्रकार समझ सकते हैं; इसी प्रकार प्रथम भाग में पूतिकरण, मात्रा, मान, विलियन बनाने के उपाय, वैक्सीन चिकित्सा, इन्जेक्शन प्रकार, लगाने की विधियां आदि सचित्र एवं विस्तार से दिये हैं।

आगामी वर्ष—

का प्रथम विशाल विशेषांक "विष-चिकित्साङ्क" होगा जिसकी विस्तृत सूचना इसी अंक के प्रारम्भ में है। दूसरा छोटा विशेषांक किस विषय पर प्रकाशित किया जाय अभी यह निर्णय नहीं हो सका है। पाठकों एवं विद्वान लेखकों से साग्रह निवेदन है कि वे इस ओर अपने सुझाव रखें और सूचित करें कि आगामी वर्ष का छोटा विशेषांक किस विषय पर प्रकाशित किया जाय। आपके विचारों को प्राप्त कर समयोचित एवं उपयोगी विशेषांक निकालने में हमको सहायता मिले।।।

वैद्य देवीशरण गर्ग
प्रधान सम्पादक "धन्वन्तरि"

ग्राहक नम्बर

आगामी वर्ष के लिए मनियार्डर भेजते समय अथवा अन्य किसी प्रकार का पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखियेगा। ग्राहक नम्बर लिखा न होने से उचित व्यवस्था करने और उत्तर देने में विलम्ब होता है।

—व्यवस्थापक 'धन्वन्तरि'।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इञ्जेक्शनोपयोगी औषधियां
(INJECTABLE PRODUCTS)

इस अध्याय में प्राय: सभी विशेष रूप से प्रयुक्त होने वाली औषधियों का उल्लेख, नाम, पर्याय, मूल द्रव्य जिससे उनका निर्माण हुआ है, मात्रा, प्रयोग विधि, मार्ग, गुण, उपद्रव तथा विशेष कोई उल्लेखनीय बात हुई तो उसकी चर्चा, जहां पर आवश्यक होगा वहां उस औषधि के निर्माता का नाम भी देने का प्रयत्न होगा। यदि किसी औषधि का वर्णन विस्तार से देना ही आवश्यक होगा तो उसे विस्तार से ही दिया जायगा। रोगानुसार या अकारादि क्रम से देना विशेष महत्व नहीं रखता अत: इनके लिए पाठक सूची में देखने का कष्ट करें। उन रोगों को जिन्हें ये इञ्जेक्शन ठीक करने में सहायक होते हैं, उनके नाम अंग्रेजी तथा हिन्दी में देने का प्रयत्न किया जाएगा। जहां उनका नाम केवल अंग्रेजी में ही मिलता है, हिन्दी में नहीं उनके लिए पाठक को उसका साधारण खुलासा कर दिया जाएगा।

मल्ल संखिया (Arsenic)

इसके असंख्य योग, अनेकों नामों से आते हैं, प्रत्येक निर्माताओं ने अपने-अपने योगों का प्रथक नाम रखा है। मुख्यतया मल्ल का प्रयोग इंजेक्शन द्वारा पाण्डु, उपदंश, राजयक्ष्मा, चर्मरोग, उपदंशज विकार चाहे वे कुलज हों या वैसे, आज yaws, विषमज्वर, रक्तहीनता, कास श्वास Asthma, श्लीपद Filaria, पुनरावर्तक परिवर्तित ज्वर Relasping Fever, घातक पाण्डु रक्तहीनता Pernicious Anaemia मूत्र संस्थान के रोग; मूषकदंश ज्वर Rat-bite-fever, Vincent augina, उपदंशज व्रण, syphlitic ulcers इत्यादि।

सभी योग उपर्युक्त रोगों पर रामबाण नहीं, कुछ योग अत्यन्त उग्र हैं, तथा कुछ सौम्य, ऐसे कि उनको बहुधा प्रत्येक रोगी बर्दाश्त कर लेता है, कुछ रोग विशेष पर ही उपकारी हैं, तो कुछ रोगों की विशेष अवस्था पर ही गुणकारी हैं, इन्हें हम आगे देते हैं।

इससे पूर्व कि उनके योगों की नामावली दें, यह आवश्यक है कि संखिये के योग प्रयोग करने के अयोग्य अवस्थाओं एवं रोगों का उल्लेख किया जाए।

१--रोगी के हृदय की परीक्षा कर हृद्रोग Heart disease की जांच करें, हृत्कम्प Palpitation of Heart हृदय के आवरणों का प्रदाह Myo तथा Peri carditis इत्यादि कोई रोग न हो, यदि हो तो पारद या आयोडाइड Iodides के योग देकर उन्हें शान्त कर लेना चाहिये।

२--मूत्रसंस्थान Urinary tract के रोग, वृक्क रोग, वृक्कशोथ Nephritis, मधुमेह Diabetes, एल्ब्यूमिनोरिया Albuminuria अर्थात् मूत्र में एलब्यूमिन की उपस्थिति में मल्ल का प्रयोग हानिप्रद है।

३--आंतों का अवरोध, या मलबद्धता कब्ज नहीं होना चाहिये। मल्ल के प्रयोग से पूर्व पेट अवश्य साफ कर लेना चाहिए।

४--वातज विकारों में Rheumatoid, arthritis, संधिशोथ, हृद्रोग जो वात जन्य हो उनमें भी मल्ल नहीं देना चाहिए।

५--राजयक्ष्मा में यद्यपि यह लाभ करता है, परन्तु जब रोग अधिक बढ़ जाए तब इसका प्रयोग हानिप्रद होता है, ऐसे ही तीव्र ज्वरावस्था, Kalazar कालाजार इत्यादि में यह नहीं देना चाहिए।

६--जब दृष्टिनाड़ी optic-nerve में विकार आना आरम्भ हो जाय या पहले से ही नेत्र में दृष्टि सम्बन्धी विकार बढ़ रहे हों उस समय तो मल्ल को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कदापि व्यवहार नहीं करना चाहिए। बल्कि मल्ल प्रयोग काल में बारम्बार नेत्र-परीक्षा होनी जरूरी है, बहुत से रोगियों की दृष्टि मल्ल के प्रयोग से जाती रही है।

७—खाली पेट मल्ल का प्रयोग निषिद्ध नहीं है, चाहे मुख द्वारा करना हो चाहे इन्जेक्शन द्वारा।

८—मल्ल सेवी को धूप का सेवन व परिश्रम से बचना चाहिए।

९—औषधि के ऊपर के लेबिल, उसकी व्यवहार विधि, घोल बनाने की विधि, मात्रा, व्यवहार मार्ग इत्यादि का परिचय प्रत्येक योग के साथ आए साहित्य Literature pamphlet पत्रिका द्वारा करना पहला काम है, उसी के अनुसार कार्य करना चाहिये।

आजकल मल्ल का प्रयोग उपदंश एवं उपदंशज विकारों की शान्ति, या कुलज उपदंश के विकारों, श्वास, दमा, मलेरिया, रक्त-हीनता, फीलपांव (श्लीपद), याज Yaws एक प्रकार का चर्मरोग, कण्डु इत्यादि में अधिकतर किया जाता है।

यह भी ध्यान में रखने की बात है कि इन्जेक्शन लगाने के उपरांत एवं कुछ काल के उपरान्त कुछ थोड़े से ही रोगियों में विषैले लक्षण भी प्रगट होने लगते हैं, उसका कारण प्रायः मल्ल का असह्य होना, या शरीर में अन्य रोग जैसे वृक्क, प्रमेह, मूत्र में एल्ब्यूमिन, या कुछ चर्मरोगों का होना होता है। इस दशा में तुरन्त एड्रेनलिन Adrenaline एट्रोपिन Atropine इनमें से किसी एक का इन्जेक्शन लगा देना चाहिए। या फिर मल्ल को जितनी मात्रा में देना हो उसका १/१० भाग प्रथम देकर देख लेना चाहिए। यदि इससे उपद्रव न हों तो बाकी मात्रा १ घण्टे बाद लगा देनी चाहिए। यह नियम केवल कुछ ही योगों के लिए है। अतः हमेशा ध्यान में रखना चाहिये कि १-भरे पेट पर, २-जब रक्तभार Blood pressure बढ़ा हुआ हो, ३-जीर्ण वृक्कशोथ Nephritis जो कि उपदंशज न हो; ४-मधुमेही को, ५-हृदय के रोगी को, ६-जिनको शीघ्र रक्तस्राव हो जाता हो, ७-जिन्हें मल्ल सात्म्य नहीं है, ८-जिनके दृष्टिनाड़ी Retina में रोग हो, तथा ९-क्योंकि कि यह रक्तभार बढ़ाकर एवं कुछ शोथ उत्पन्न करके अपना कार्य करता है, अतः जिनमें तीव्र राजयक्ष्मा के चिन्ह हों, या फुफ्फुसशोथ अधिक होने से फैफड़ों का तीव्र रोग हो, इन दशाओं और रोगों में इसका व्यवहार नहीं करना चाहिये।

अस्तु सोच-विचार कर जो भी मार्ग मल्ल प्रयोग करने के लिए अपनाया जाए पूर्ण शुद्धि Asepsis का ध्यान रखना जरूरी हैं।

१-असेनो बेंजोल (Arseno Benzol)

पर्याय, सल्वार्सन Salvarsan, ६०६, आर्स-फेनामीन Arsphenamine।

मल्ल का योग है। उपदंश पर व्यवहार होता है, विशेषकर उपदंशव्रण कैसे भी हों दूर होजाते हैं, मगर रोग जड़ से दूर करने के लिए साथ में पारद या बिस्मथ के योग भी देते रहना चाहिए। इससे मस्तिष्क, सुषुम्ना, कभी-कभी यकृत और प्लीहा में स्थित उपदंशज जीवाणु नष्ट होने से रह जाते हैं, और चिकित्सा बन्द करते ही पुनः वृद्धि को प्राप्त हो रोग के लक्षण प्रगट हो जाते हैं।

हल्के पीले रङ्ग का, निर्गंध या हल्की गंध युक्त चूर्ण रूप में होता है। जल्दी सील जाता है। शुष्क खुली अवस्था. या विलियन के रूप में यह वायु की आक्सीजन को अपने में लेकर Oxidise होकर गहरे रङ्ग का और तीव्र विषैला होजाता है। अतः विलियन बनाते ही शीघ्र प्रयुक्त कर देना चाहिए। जल, सुरा, ग्लीसरीन में घुलनशील है। लगभग ३० प्रतिशत मल्ल इसमें होता है।

शीशे की नलिकाओं में जिनमें से वायु निकाल डाली गई होती है, सील बन्द आता है।

मात्रा—शिरागत Intravenous ०·४ ग्राम या ६॥ ग्रेन, मांसान्तर्गत भी प्रयुक्त होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१—मांसान्तर्गत प्रयोग के लिए निर्माण विधि—

एक चीनी मिट्टी की थाली में आवश्यकतानुसार औषधि (आर्सेनो बेन्ज़ोल) लेकर १५ प्रतिशत सोडियम हाइड्रो-आक्साईड के विलियन की ६-१० बूंद डालकर रगड़ कर, पुनः सावधानी से जितनी मात्रा में परिस्रुत जल की जरूरत हो बूंद-बूंद करके उसमें रगड़ते हुए डालते जाते हैं, लगभग ५-१० सी. सी. तक इसको निष्क्रिय Neutralise करने के लिए इसमें सोडियम हाईड्रो-आक्साईड या तनु हाइड्रोक्लोरिक एसिड मिलाया जाता है। निष्क्रिय होजाने पर इन्जेक्शन लगाते हैं।

२—शिरान्तर्गत के लिए निर्माण विधि—

एक ३०० सी. सी. वाली शीशे की डाट वाली शीशी में ३०-४० सी. सी. लवणोदक ला, इसमें ०.६ ग्राम सलवार्सन मिला दो। हिलाकर इस घोल लो। इसम २ ३ बूंद १५ प्रतिशत सोडियम हाइड्रो आक्साईड की मिला दो। घुल जायगा। अब इस पीले घोल को और हल्का करने के लिए सामान्य लवणोदक Normal Saline ३०० सी. सी. तक मिला लो।

इसके प्रत्येक ५० सी. सी. में १ ग्राम सलवार्सन है। अतः १५० सी. सी. साधारणतया एक स्त्री को तथा २०० सी. सी. तक पुरुष के लिए उपयुक्त मात्रा मानी गई है।

गुण—

उपदंश की प्रथम, द्वितीय, तृतीयावस्था, जन्मजात उपदंश, पुनरावर्तक ज्वर Relapsing fever, yaws. रक्तहीनता में विशेष लाभप्रद है।

उपद्रव—

असावधानी से प्रयोग करने पर प्रायः होते हैं। जैसे वमन, अङ्गों की शिथिलता, शिरःशूल अतिसार यकृत शोथ, कण्डू, वृक्क शोथ, Nephritis, भ्रम, नेत्र तारे का प्रसारित होजाना, श्वासावरोध, श्वास की गति बढ़ जाना, ज्वर, कभी-कभी बहरापन, पिड़िकायें Dermatitis इत्यादि।

चिकित्सा—

पूर्ण विश्राम, एड्रिनलीन का इन्जेक्शन लगा देना चाहिए। हृदय को बल देने के लिए, केम्फर इन आयल Camphor in oil, Coramine, ग्लूकोज Glucose २० सी. सी. २५ प्रतिशत वाले घोल का लगाना चाहिए।

मूर्च्छावस्था के लिए एट्रोपीन Atropine १/६० ग्रेन का इन्जेक्शन लगाना, या एनाकार्डीन Anacardone का १-२ सी. सी. इन्जेक्शन लगाना ठीक होता है। पाण्डु हो जाये तो Liver ext. यकृतसार या विटामिन बी. कम्प्लेक्स Vit. B. Complex का प्रयोग कुछ दिनों तक करना ठीक है।

अतः कमज़ोर, वृद्ध, श्वास से पीड़ित को, भोजन के बाद, बिना विरेचन कराये यह योग प्रयुक्त नहीं कराना चाहिये।

(२) नियोआर सेनोविलियन Neoarsenobillion, Neoarsphenamine निओआर्सफेनामीन, निओआर्सनाबेन्ज़ोल Neoarsenobenzol, निओ सलवार्सन Neosalvarsan. निओ आर्सेनोवेन्जेन Neoarsenobenzene, यह इसके पर्याय हैं, इसको साधारणतया एन. ए. बी. N. A. B. से बहुधा पुकारा जाता है, इसी नाम से मिल जाता है।

मात्रा—०·१५ से ०·६ ग्राम तक शिरान्तर्गत Intravenovsly प्रयुक्त होता है। भूलकर भी अन्य मार्ग द्वारा प्रयोग न करें।

परिचय—

यह पीले रङ्ग का बंद कांच की शिशियों Ampouls में शुष्क चूर्ण होता है, जो ०·१५, ०·३०, ०·४५, ०·६०, ०·७५, ०·९० प्रतिशत, इस क्रमसे छः मात्राओं में मिलता है। और इसी क्रम से प्रयुक्त होता है यदि नलिका टूट या तेज खा जाय, और वायु इसे लग जाय तो लगभग २०-६० मिनट में इसका वर्ण गहरा लाल या काला हो जायगा, यदि ऐसी दशा में यह हो तो कदापि भी व्यवहार नहीं करना चाहिये। सदैव पीले वर्ण के चूर्ण को प्रयुक्त करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विलियन निर्माण विधि--

यह शुद्ध सिरिंज में परिस्रुत जल (पाईरोजन रहित) १-१० सी. सी. तक लें। और N. A. B. एन. ए.बी. का एक एम्पूल जो उपयोग योग्य पीला हो लेकर उसके साथ आने वाली आरी से उसका गला काट कर प्रथक कर दें। अब या तो उस एम्पूल में बहुत ही धीरे-धीरे पिचकारी से जल को डालना चाहिये, ताकि एम्पूल में विलियन बनते समय झाग या वायु के बुलबुले न उठने पावें। या फिर एक एम्पूल जिसमें से परिस्रुत जल लिया गया था आवश्यक परिस्रुत जल लें, N.A.B. को उस परिस्रुत जल में डाल दें। किसी भी प्रकार में एम्पूल में विलियन बनाने के लिए एम्पूल को जोर से हिलाना (Shake) नहीं चाहिए, क्योंकि वायु का अधिक संस्पर्श होने से विलियन विषैला हो जायगा, पिचकारी में भी खींचते समय इस प्रकार न खींचना चाहिए जो विधान के आगे पीछे से वायु के बुलबुले उसमें आते रहें। यही विशेष सावधानी रखनी पड़ती है। इधर पूर्ण पूतिकरण का ध्यान आवश्यक है। साधारणतया उपदंश में इसका एक कोर्स लगाने के लिए निम्न प्रकार के विलियन बनाना और प्रयुक्त करना ठीक होता है।

(१) प्रथम मात्रा	प्रथम दिन	०.१५ ग्राम	N. A. B. में	शुद्ध	परिस्रुत	जल		३ सी. सी.	
(२) द्वितीय ,,	५ या ६ वें दिन	०.३० ,,	,,	,,	,,	,,	,,	४	,,
(३) तृतीय ,,	११ या १२ वें दिन	०.४५ ,,	,,	,,	,,	,,	,,	५	,,
(४) चतुर्थ ,,	१८ या १९ वें दिन	०.६० ,,	,,	,,	,,	,,	,,	६	,,
(५) पचमं ,,	२५ या २६ वें दिन	०.६० ,,	,,	,,	,,	,,	,,	७	,,
(६) षष्टम ,,	३२ या ३३ वें दिन	०.७५ ,,	,,	,,	,,	,,	,,	६	,,
(७) सप्तम ,,	३९ या ४० वें दिन	०.७५ ,,	,,	,,	,,	,,	,,	१०	,,
(८) अष्टम ,,	५० या ५१ वें दिन	०.९० ,,	,	,,	,,	,,	,,	१०	,,

उपदंश की सफल चिकित्सा के हेतु साथ-साथ विस्मथ या पारद का भी व्यवहार इन्जेकशन द्वारा होता रहे तो और भी जल्दी लाभ होता है। कभी-कभी पोटाशियम आयोडाईड Pot. Iodide का भी व्यवहार मुख द्वारा करना श्रेयस्कर होता है।

गुण—उपदंश की प्रत्येक अवस्था, याज़ Yaws, पुनरावर्तक ज्वर Relapsing fever इत्यादि।

३—मेटार्सेनोबिलान Metarsenobillon—

M& B. मे एण्ड बेकर कम्पनी ने सल्फार्सफेनामाईन Sulphasphenamine को उपरोक्त नाम से निकाला। N. A. B. की भांति यह भी पीले वर्ण का होता है और वायु में अधिक देर रखने से गहरे लाल कत्थई रङ्ग का होकर विषैला हो जाता है, अतः शीघ्र विलियन बनाकर प्रयुक्त करना चाहिए।

मात्रा तथा प्रयोग—

मासान्तर्गत Intramuscularily या त्वचान्तर्गत गम्भीर Deep subcutaneous देना चाहिए। रोगी की दशा, बल, भार के अनुसार पूर्ण वयस्क Adult को ०.१० ग्राम से ०.६० ग्राम तक, बच्चों में जो ३ से १२ वर्ष तक के हों उन्हें ०.२० ग्राम तक प्रयुक्त कर सकते हैं।

गुण—उपदंश की प्रत्येक दशा और अवस्था, पुनरावर्तक ज्वर, मूषकदंश ज्वर Rat Bite Fever, चर्मरोग इत्यादि।

४—निओखार्सीवान Neo Kharsivan—

यह भी निओआर्सफेनामीन का पर्याय है।

मात्रा प्रयोग—

०.१५, ०.३०, ०.४५, ०.६०, ०.७५, ०.९० ग्राम तक N. A. B. के समान शिरान्तर्गत प्रयोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है। सप्ताह में क्रम से बढ़ाते हुए एक-एक बार इन्जेक्शन देना चाहिये। इसके साथ पेनेसिलिन Penicillin, बिस्मथ इत्यादि का प्रयोग करते रहना अच्छा होता है।

गुण—N. A. B. की तरह उपदंशज विकार, पुनरावर्तकज्वर इत्यादि।

५—खार सल्फान Kharsulphan—

संखिये का योग गन्धक इत्यादि युक्त है। जिन रोगियों को मल्ल के योग शिरान्तर्गत देने में कुछ कठिनाई होती है उनमें मासान्तर्गत मार्ग से यही प्रयुक्त होता है, अधिक व्यक्तियों को यह सह्य है।

मात्रा—०.१५, ०.३०, ०.४५, ०.६० ग्राम तक १-२ सी. सी. परिस्रुत जल में घोलकर ही विलियन बना लिया जाता है, और तुरन्त प्रयोग कर दिया जाता है। प्रति सप्ताह १ बार दें।

मार्ग-मांसान्तर्गत, नितम्ब की मांस पेशियां उपयुक्त हैं।

गुण—बालकों को होने वाले उपदंश, कुलज उपदंश पुनरावर्तकज्वर।

६—निओ हेलार्सिन Neo-Halarsine—

मल्ल का यह योग Oxophenarsine Tartrate ऑक्सो फेनार्सिन टार्ट्रेट नामक रसायनिक द्रव्य का योग है। यह शुष्क चूर्ण रूप में ०.०४५, ०.०६, ०.०९ ग्राम की मात्रा में एम्पूल में आता है।

मात्रा तथा उपयोग—

द्विवार परिस्रुत जल में विलियन बनाकर शिरान्तर्गत सप्ताह में एक बार प्रयोग करें। स्त्रियों को ०.०६ ग्राम, पुरुषों को ०.०९ ग्राम तक व्यवहार करना ठीक होता है। इसके साथ बिस्मथ भी चलता रहे तो और भी जल्दी लाभ होता है। इसके चूर्ण की बुरकी देकर ऊपर से जल में भीगा फोया रखने या १० प्रतिशत घोल का फोया रखकर बांधने से उपदंशज व्रण Vincent angina में लाभ होता है साथ में यदि शिरान्तर्गत भी देते रहें तो और भी अच्छा होता है।

गुण—उपदंश की प्रत्येक अवस्था, उपदंशजव्रण, Vincent angina इत्यादि।

७-सल्फार्सेनोल Sulpharsenol—

मल्ल के इस योग के पर्याय Salpharsen oberzene सल्फार्सेनोबेजोल तथा Sulphar sphenamine सल्फार्सफेनामीन है। इसमें २० फीसदी संखिया होता है। पीतवर्ण का शुष्क चूर्ण, जल में अति शीघ्रघुलनशील है।

मात्रा एवं मार्ग—

०.१ ग्राम से ०.६ ग्राम तक यह प्रयुक्त होता है। निम्न रीति और प्रकार से विलियन बनाकर प्रयोग करना चाहिए।

पहले दिन-	०·१२ ग्राम से	०·१८ ग्राम तक	२-३ सी. सी. परिस्रुत	जल में		
तीसरे दिन-	०·१८ ,, ,,	०·३० ,, ,,	३-५	,,	,,	,,
पांचवें दिन-	०·३० ,, ,,	०·४२ ,, ,,	५-७	,,	,,	,,
आठवें दिन-	०·४२ ,, ,,	०.६ ,, ,,	७-१०	,,	,,	,,
तेरहवें ,,	०·४८ ,, ,,	०·६ ,, ,,	८-१०	,,	,,	,,
उन्नीसवें दिन	०·५४ ,, ,,	०·६ ,, ,,	८-१०	,,	,,	,,
पच्चीसवें दिन	०·५४ ,, ,,	०·६ ,, ,,	८-१०	,,	,,	,,

इसको मांसान्तर्गत तथा त्वगधःगत Subcutaneously प्रयोग किया जासकता है।

गुण—

केवल उपदंशज विष, उपदंशज विकार पर व्यवहृत होती है।

८-एनार्सेन Enarsan—

परिचय—cipla कम्पनी द्वारा प्रस्तुतः यह मल्ल का योग है। इसमें मुख्यतया पारद और मल्ल का

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिश्रण होता है। पारद मर्करी सेलीसेलेट Mercury salicylate .३६ ग्राम तथा संखिया मोनोमिथाईल आर्सेनेट Monomethyl Arsenate के रूप में ·१३१ ग्राम होता है। घुलनशील रूप में यह बाजार में मिलती है।

मात्रा-पूर्ण वयस्क को २ सी. सी., बालकों को उम्र के अनुसार $\frac{1}{2}$ से १ सी. सी. तक।

मार्ग-सप्ताह में दो बार मांसान्तर्गत नितम्ब प्रदेश में। एक कोर्स ८-१२ इन्जेक्शन का होता।

गुण—उपदंश की प्रत्येक दशाओं में, नाड़ी तथा मस्तिष्कगत उपदंशज विकार, उपदंशाग्नि, पक्षाघात तथा और रोग, विचर्चिका psoriasis (एक प्रकार का हाथ पांव में होने वाला चर्म रोग) कुछ त्वचा के उपदंश जनित रोगों को विशेष लाभकर होता है। आयुर्वेद के मल्लसिंदूर को प्रयोग करके भी यही लाभ देखा जा सकता है। परन्तु मल्लसिंदूर मुख द्वारा प्रयुक्त किया जायगा।

९ - नोवेस्टोब Novestob —

पर्याय—Neoarsphenamine निओ आर्सेफेनामीन N.A.B. के समान है, बूट्स Boots कम्पनी की यह औषधि निर्मित है। इसका विलियन परिस्रुत जल या सोडियमथियोसल्फेट Sodium thiosulphate के १०% घोल में बनाया जाता है।

मार्ग, मात्रा—

शिरान्तर्गत सप्ताह में १ या दो बार, यह भी N. A. B. की तरह ·१५, ·३०, ·४५, ·६०, ·७५, ·९०, ग्राम की मात्रा में प्रयुक्त होता है। समस्त विधि उसी प्रकार है, वैसे साधारणतया—

युवापुरुष को–०·१५ से ०·६० ग्राम तक

युवती स्त्री को–०·१५ से ०·४५ ग्राम तक

बालक को-०·१ से ०·३० " "

प्रयोग करने से हानि नहीं होती।

गुण-N. A. B. के समान।

१०–मल्ल के अन्य योगों में अनेकों योग बाजार में हैं, उनके कुछ नाम नीचे दिए जाते हैं।

(१) Thiosarmine थिओसार्मीन, (२) Thiarsin थाईआर्सीन, (३) Silver-salvarsan सिल्वर सल्वार्सन, (४) stabilarsan स्टेबिलार्सन, (५) Acetylarsan एसीटाईलार्सन, (६) Tryparsemide ट्राईपर्सामाईड, (७) सोआमीन Soamin (८) मेफार्साइड Mepharside आदि अनेकों संखिये के योग इंजेक्शन के व्यवहृत होते हैं।

i. Thiosarmine – पीले रंग की जल में शीघ्र घुलनशील यह औषधि शुष्क रूप में मिलती है और एम्पुल में बन्द रहती है। संखिये के अन्य योगों की तरह इसका भी उपयोग उपदंश के रोग पर होता है, विशेषता यह है कि शरीर पर इसका बुरा प्रभाव कम होता है। इसमें संखिए का मिश्रण १९·५ से २० प्रतिशत तक होता है। इसकी मात्रा भी धीरेधीरे बढ़ाकर लगाई जाती हैं।

१५ वर्ष की आयु वालों को उपरोक्त का ३।४ वां भाग, ८-१० वर्ष के बालकों को आधी मात्रा, ३-४ वर्ष के बच्चों को १।३ भाग, एवं १ वर्ष के शिशु को $\frac{1}{4}$ भाग, १ मास के बच्चे को १।१० वां भाग उपरोक्त का देना चाहिये।

मार्ग--

इसको तीनों विधियों से प्रयुक्त किया जा सकता है। साधारणतया परिस्रुत जल में घोलकर यदि व्यवहार किया जाय तो यह विलियन शिरान्तर्गत व्यवहार के लिए ही उपयुक्त होता है। अर्थात् शिरान्तर्गत प्रविष्ट करने के हेतु शुद्ध परिस्रुत जल में विलियन बनाना चाहिए। और यदि त्वचा या मांसान्तर्गत व्यवहार करना हो तो सार्सो साल्वेंट Sarsosolvent (जो इसी के साथ जल सदृश घोलक Solvent आता है) में विलियन बनाकर प्रयोग करना चाहिए। इसमें बना हुआ विलियन किसी प्रकार का दाह या पीड़ा नहीं करता, अन्यथा यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिस्रुत जल में इसको घोल कर मांस या चर्म मार्ग द्वारा व्यवहार किया जायगा तो भयंकर पीड़ा होगी जो कि असह्य होती है। N. A. B. की तरह कुछ काल व्यतीत होने पर इसका भी विलियन काला हो जाता है, इसके शुष्क रूप में एम्पूल यदि चटक जायगे और उनमें वायु प्रवेश हो जायगी तो भी शुष्क औषधि काली या गहरी लाल हो जायगी, उसे कदापि भी व्यवहार नहीं करना चाहिए।

व्यवहार पूर्व मूत्र और हृदय की परीक्षा कर लेना चाहिए। यदि—

हृद्रोग, वृक्करोग Nephritis, मधुमेह, यकृत वृद्धि, राजयक्ष्मा, दुर्बलता, नेत्र के दृष्टि सम्बन्धी रोग, विबंध इत्यादि पीछे वर्णित रोग हों तो व्यवहार नहीं करना चाहिए। व्यवहार काल में भी यदि किसी प्रकार का शिरःशूल, २४ घण्टे तक बना रहने वाला ज्वर, कम्प शीत लगना, वमन, अतिसार, हृद्रोग, रक्तस्राव, श्वासगति की तीव्रता इत्यादि लक्षण हो जावे तो भी मल्ल का प्रयोग बंद कर देना चाहिए, इन उपद्रवों के होते हुए भी यदि मल्ल का उपयोग जारी रहेगा तो अनिष्ट होने की सम्भावना होती है।

सप्ताह में दो बार प्रयुक्त करना चाहिए। शिरान्तर्गत मार्ग जब देना कठिन हो तब ही त्वचान्तर्गत और मांसान्तर्गत प्रयोग होता है।

गुण—उपदंश की प्रत्येक अवस्था एवं दशा पर मूषकदंश विष ज्वर Rat-bite-fever, पुनरावर्तक विषमज्वर, श्लीपद Filaria, Anthrax (जिसमें बांह और मुख पर फुंसियां होकर ज्वर हो जाता है), हृद्रोग Vincent angina, उपदंश जनित मुखपाक, अस्थि व्रण, एवं उपदंश जनित अन्य सभी रोग जैसे श्वास, कफ इत्यादि।

ii. Thiarsin थाई-आर्सीन—

यह भी उपरोक्त के समान तीनों मार्गों द्वारा प्रयुक्त होती है, मात्रा, मार्ग, गुण, उपरोक्त के समान हैं, यह बेंगाल केमिकल वर्क्स Bengal Chemical works की तैयार की गई है। उपदंश के रोगों पर सफलता से व्यवहार की जाती है।

iii. Silver Salvarsan सिल्वर सल्वार्सनः—

पर्याय सिल्वर आर्सफेनामीन Silver arsphenamine प्रथम लूआर्गोल Luargol नाम से दानीज Danysz ने निकाली, उसी का परिशोधित रूप अब निओ-सिलवर सल्वार्सन के नाम से प्राप्त होता है। इसमें २० प्रतिशत मल्ल तथा १५ प्रतिशत चान्दी है।

मात्रा व मार्ग—

प्रायः शिरागत, कहीं-कहीं मांसागत भी देते हैं चांदी के योग से मल्ल निर्विष हो जाता है, ऐसा विचार है। मात्रा ०.१ ग्राम से ०.६ ग्राम तक १० सी. सी. परिस्रुत में मिलाकर—

पुरुषों के लिए ०.१ ग्राम से ०.४५ ग्राम तक
स्त्रियों के लिए ०.१ ग्राम से ०.३० ग्राम तक
प्रायः ४-४ दिन के अन्तर से देते हैं।

इसका ०.१ ग्राम निओ-सल्वारसन के ०.३ ग्राम के बराबर होता है।

गुण—मल्ल के अन्य योगों के समान।

iv. स्टेबिलार्सन Stabilarsan—

मल्ल Aresnic तथा शर्करा Glucose का योग है, बाजार में इसी नाम से द्रव रूप में बंद एम्पूल में मिलता है। शरीर में प्रविष्ट होने पर यह अधिक समय तक शरीर में रुका रहता है। इसके इस गुण के कारण प्रायः फिरंग के सभी जीवाणु नष्ट हो जाते हैं, और कुछ चिकित्सक इसका व्यवहार अधिक करते हैं।

मात्रा—०.१ ग्राम से ०.६ ग्राम तक,

मार्ग—मांस तथा शिरागत।

गुण—मल्ल के अन्य योगों के समान।

V. एसीटायलार्सन Acetylarsan—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह जलीयवर्ण का घुला हुआ मल्ल का विलियन है, और दो प्रकार की बंद एम्पुल में मिलता है, युवावस्था वालों Adults के लिए तथा बच्चों के लिए। युवकों के लिए ३ सी. सी. की एक एम्पुल जिसमें मल्ल की मात्रा ०.०५ ग्राम होती है, बच्चों के लिये २ सी. सी. की एम्पुल जिसमें प्रत्येक में मल्ल की मात्रा ०.०२ ग्राम होती है, आता है।

इस योग का भी व्यवहार अधिकतर होता है, वह भी ऐसी दशा में जब अन्य योगों को देने में या तो कठिनाइयां हों या शिरागत मल्ल सह्य न हो।

गुण—मल्ल के तमाम गुणों से युक्त यह योग उपदंश फिरंग को प्रत्येक दशा में लाभ करता है, याज yaws, पेचिश, आंतों में amoebasis होना, खाज, व्रण, ऐसा चर्म रोग जिसमें शरीर पर से छिलके से उतरें, कण्ठमाला, गले के गद्द का फूलना Mumps, श्वास कास asthma और उपदंश जनित अन्य रोगों पर सफलता के साथ निःसंकोच (मल्ल के देने योग्य रोगियों पर) व्यवहृत होता है।

मात्रा, मार्ग—युवकों में प्रथम १ सी. सी. चूतड़ के मांस में लगाकर इसकी सह्यशक्ति की परीक्षा कर लेनी चाहिए, बच्चों में ½ सी. सी. से परीक्षा करके फिर सप्ताह में दो बार इस प्रकार प्रयोग करें कि दूसरी मात्रा युवकों में २ सी. सी. बच्चों में १ या १॥ सी. सी. लगाकर फिर पूरी मात्रा का व्यवहार लगभग ८ सप्ताह तक करें। यह मांसगत व्यवहार होती है, कोई-कोई इसे शिरागत भी प्रयुक्त कर देते हैं।

विशेष—जहां N. A. B. का व्यवहार शिरामार्ग द्वारा देने में कभी-कभी कठिनाई होने लगती है वहां इसका व्यवहार सरलपूर्वक मांसान्तगत करके N.A.B. के समान लाभ उठाया जा सकता है। मे+बेकर कम्पनी से इसके विषय में विशेष व्यवहार पत्रिका मंगाकर और भी ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

vi ट्राईपर्सामाईड Tryparsamide—

यह मल्ल का योग चूर्ण रूप में मिलता है, परिस्रुत जल में विलियन बनाकर दो विशेष रोग में व्यवहार किया जाता है (१) उपदंश, (२) मस्तिष्कगत उपदंश जनित विकार, नाड़ीगत फिरङ्ग Neurosyphilis, Trypnosomiasis ट्रिप्नोसोमियेसिस रोग में।

मात्रा—एक बार में १५ से ३० ग्रेन तक।

मार्ग तथा प्रयोग—शिरागत देना चाहिए; फिरङ्ग रोग में, नाड़ी फिरङ्ग में कुल १३० ग्राम तक प्रविष्ट कर देना चाहिए. और ट्रिपनोसोमियेसिस मस्तिष्क गत उपदंशज विकारों में २०-४० ग्राम तक दे देना चाहिए। ये मात्रायें ८-१० मात्राओं में विभक्त करके दे देनी चाहिए।

विशेष—कभी-कभी जब औषधि असात्म्य होती है निम्न उपद्रव आरम्भ हो जाते हैं।

(१) आंखों में पीड़ा होकर आंसू बहने लगते हैं।

(२) प्रकाश सहन नहीं होता (phosophobia)

(३) शिरःशूल।

अतः उपरोक्त उपद्रवों के आरम्भ होते ही इसका प्रयोग एक दम बंद कर देना चाहिए और जिसको पहले मल्ल का प्रयोग कराया गया हो, उसे इसका प्रयोग करने से उसके अंधे होने का भय रहता है तथा यकृत विकार, उदरशूल, कामला, तथा वमन इसका प्रयोग खतरे से खाली नहीं।

vii सोआमिन Soamin—

पर्याय Atoxyl एटोक्सील Arsamin आर्सामी यह मल्ल का Sadii para aminophenylarson साडाइ पेरा-अमीनो—फीनाईल-लार्सोनास के रूप होता है। मल्ल की मात्रा इसमें २४ प्रतिशत रहती है जब इसका विलियन बनाकर उसे शुद्ध करने के लिए उबाला जाता है तब भी कुछ मल्ल के उड़ जाने पर मल्ल की मात्रा २२.८ प्रतिशत रहनी चाहिए। मल्ल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अतिरिक्त अन्य रासायनिक द्रव्यों का इसमें मिश्रण होता है।

पाठकों को विशेष रूप से इसके विषय में बताने का प्रयत्न इसलिए किया जायगा कि इन्जेक्शन जगत में सोआमीन ने उपदंश के अतिरिक्त अन्य रोगों में अपना विशेष स्थान स्थापित कर लिया है।

चक्रिकाओं के रूप में यह १ ग्रेन तथा ३ ग्रेन की टिकियों में मिलता है। स्वाद में नमकीन, जल में सहसा नहीं घुलती, परन्तु चूर्ण करके गरम जल में घोलने से शीघ्र घुल जाता है। तदुपरान्त शुद्धिकरण हेतु इसको ५ मिनट तक उबाला भी जा सकता है। इस प्रकार २.२ प्रतिशत मल्ल उड़ सकता है।

मात्रा व मार्ग—

१ ग्रेन से ३ ग्रेन तक अधस्त्वगीय, मांसान्तर्गत एवं उपदंशज व्याधियां में शिरांतर्गत प्रयोग करना चाहिए।

नोट—अधिक से अधिक ३ ग्रेन की दैनिक मात्रा, (सो यह भी किसी विशेष रोगी में) से अधिक कदापि भी प्रयोग नहीं करनी चाहिये।

गुण—अनेकों रोगों पर यह रामबाण सिद्ध हुई है।

(i) उपदंश Syphilis—इसमें विलक्षण एवं आश्चर्यजनक कार्य करती है, रक्त में उपदंश का विषैला प्रभाव दूर कर के रक्त को शुद्ध करती है। रक्त विकार पर जब अन्य औषधियां असफल हो जाती हैं, तब यह अपना चमत्कारिक प्रभाव दिखाती है। अधिक से अधिक १६ इन्जेक्शन काफी होते हैं। उपदंश में इसे मांसान्तर्गत भी दिया जासकता है।

२-विषमज्वर Malaria—

जब हठीला विषमज्वर कुनैन से नहीं जाता तब सोआमीन को कुनीन के साथ अदल-बदल कर देने से ज्वर मुक्ति हो जाती है।

३-श्वास दमा Asthma—

इस रोग की यह रामबाण औषधि है। परन्तु नवीन श्वास में ही अधिक उपकारी सिद्ध हुई है, ८-१० इन्जेक्शन से रोग चला जाता है। पुराने दमा में १६ से २० इन्जेक्शनों से २-३ वर्ष के लिये श्वास से छुटकारा मिल जाता है। और यदि आराम होने के बाद भी प्रतिमाह १ वार इसका १ इन्जेक्शन लगवा लिया जाए तो रोग बहुत दिनों के लिये रुका रहता है। आरम्भिक मात्रा १ ग्रेन की, फिर बढ़ा कर ३ ग्रेन कर दें। नवीन श्वास निर्मूल हो जाता है।

४-रक्तहीनता Anaemia तथा पाण्डुरोग Jaundice—

किसी रोग से मुक्त होने के उपरान्त होने वाली रक्तहीनता में जैसे मलेरिया कालाजार इत्यादि के बाद, देने से शीघ्र रक्ताल्पता दूर होकर रक्त की वृद्धि होकर दशा ठीक हो जाती है।

५-जीर्ण कास—

शीतकाल में जिनको प्रायः कास हो जाया करती है, तथा बारम्बार प्रतिश्याय होकर आने वाली कास में यह अपना विशेष प्रभाव करती है।

इसके अतिरिक्त स्नायुउपदंश neurosyphilis, पेलाग्रा Pellagra, मस्तिष्कावरण शोथ, क्षय, जीर्ण चर्म रोग इत्यादि में व्यवहार किया जाता है। अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा श्वास में विशेष फलप्रद है।

प्रयोग विधि—

जीर्ण रोग में जहां चिकित्सा अधिक दिनों तक चालू रखनी हो वहां पहली मात्रा थोड़ी-थोड़ी (१-१ ग्रेन की) और इन्जेक्शन लगाने की अवधि भी जल्दी-जल्दी अर्थात् अल्प होनी चाहिए, ज्यों-ज्यों रोग कम होता जाए, मात्रा भी अधिक और इन्जेक्शन लगाने का समय भी बढ़ा देना चाहिए। प्रारम्भ में १-१ ग्रेन सोआमीन २-२ दिन के अन्तर से लगाना चाहिए, फिर बढ़ाते हुए ३ ग्रेन तक सप्ताह में १ या दो बार लगाना चाहिए।

विलयन निर्माण विधि—

एक परख नली Test tube में परिस्रुत जल आवश्यकतानुसार लेकर उसे सुरादीप Spirit Lamp पर रख कर गरम करें, जब जल खौलने लगे तो एक या तीन ग्रेन की टिकिया उसमें डालदें, टिकिया पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर भी डाली जा सकती है। पूर्णतया घुल जाने पर विलियन को स्वयं शीतल होने दें और उपयुक्त मार्ग द्वारा इन्जेक्शन लगावें।

यह विलियन अधस्त्वगीय विधि द्वारा लगाने पर पीड़ा पैदा करता है अतः सोडियम साईट्रेट Sodium Citrats का १० प्रतिशत विलियन लेकर उसमें विलियन बनावें, इसका लाभ तो यह होगा कि पीड़ा कम होगी, दूसरे सोआमीन का आत्मीकरण भी शीघ्रता से होगा।

सावधानी—

दृष्टिपटल Optic disc के नाश के कारण बहुत से रोगी अन्धे भी होगए हैं। बहुधा इसका कारण मात्रा की असावधानी से अधिक प्रयुक्त होते रहना है। या बहुतों को जिन्हें मल्ल असात्म्य है। (Idiosyncrasy) या पहले से ही दृष्टिपटल में विकार है अन्धे हो सकते हैं। अतः ऐसे रोगियों में सावधानी से प्रयोग आरम्भ करना चाहिए। निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए।

(१) हमेशा दृष्टिपटल Retina की परीक्षा कर के किसी विशेष रोग की जांच कर लेनी चाहिए। यदि पटल ठीक है तो चिकित्साकाल में भी कभी कभी परीक्षा करते रहना चाहिए। यदि चिकित्सा काल में दृष्टि में कुछ भी फर्क दिखाई दे तो तुरन्त मल्ल का प्रयोग बन्द कर देना चाहिए।

(२) वृक्क या यकृत रोगों में तथा धमनीकला-काठिन्य Arteriosclerosis में इसका प्रयोग न करें। यदि प्रयोग करें तो बहुत ही सावधानी से; विशेषकर वृद्ध रोगियों में।

(३) जब १०० ग्रेन तक औषधि शरीर में पहुंच चुके; प्रयोग ४ सप्ताह के लिए बंद कर दें।

तुरन्त होने वाले विषैले लक्षण जिनका ध्यान रखा जाना चाहिए। निन्द्रानाश, उदर आमाशयपीड़ा तथा दृष्टि में धुंधलापन हो जाना, इत्यादि होता है।

Viii मेफार्साइड Mapharside—

मल्ल का यह योग प्रसिद्ध औषधि निर्माता Parke Davis Co. के यहां का बना है। और प्रचलित भी काफी है यह कम अनिष्टकारी है। दो की मात्रा में यह आता है। पुरुषों के लिए जिनका शरीर भार १५० पौण्ड हो उनको ०.०६ ग्राम की मात्रा, स्त्रियों को जिनका शरीर भार १२५ पौण्ड हो उन्हें ०.०४ ग्राम की मात्रा, एक बार में दी जाती हैं। यदि रोगी का शरीर भार कम हो तो मात्रा भी उसी के अनुसार कम कर दी जाती ही है। प्रति २५ पौंड भार पर ·०१ ग्राम औषधि प्रयुक्त होनी चाहिए।

प्रथम रोगी के बलाबल को देखकर ·०३ ग्राम की मात्रा देकर देखनी चाहिये। शायद किसी प्रकार की हानि न हो और रोगी उसे बर्दाश्त करले तो तीन या चार दिनों के बाद पुनः कुछ और अधिक बढ़ाकर इस प्रकार एक-दो सप्ताह तक इसी क्रम से औषध प्रयुक्त करनी चाहिये; फिर पूर्ण मात्रा का व्यवहार १० सी. सी. परिस्रुत जल (पाइरोजन रहित) में विलीन करके शिरा द्वारा प्रयुक्त करना चाहिए।

उपदंश की चिकित्सा के लिए जब इसका व्यवहार होता है तब साथ में यदि पेनिसिलीन या विस्मथ Bismuth का प्रयोग भी किया जाय तो और भी अधिक प्रभावकारी एवं चिरस्थाई लाभ होजाता है।

मेफार्साईड सप्ताह में दो बार प्रयुक्त होता है, रोग निर्मूल करने के लिए इसको ३० सप्ताह तक व्यवहार करना चाहिए। बहुत से चिकित्सक इसका प्रयोग अन्य योगों जैसे विस्मथ थिओ-विस्मोल Thio Bismol के साथ साथ करते हैं, यदि ४० इन्जेक्शन मेफार्साईड के लगायें तो कम से १६ इन्जेक्शन थिओ-बिस्मोल के लगाने चाहिये। इस प्रकार चिकित्सा में कुछ अधिक समय लग जाता है।

गुण—उपदंश की प्रत्येक अवस्था में सफलता से प्रयुक्त हो सकता है। सुप्त और अनिश्चित उपदंश Latent syphilis कुलज, जन्मजात conjenital syphilis तथा गर्भावस्था का उपदंश,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्यादि में सफलता से इसका व्यवहार होता है।

मार्ग—शिरान्तर्गत (Intravenously) सप्ताह में दो बार।

बिस्मथ BISMUTH

बिस्मथ एक प्रकार के खनिज पदार्थ द्वारा निर्मित होता है, जिनका व्यवहार वर्तमान में मुख द्वारा असख्य रोगों तथा इंजेक्शन द्वारा विशेषकर उपदंश Syphilis को दूर करने के हेतु होता है। हमने इससे पहले मल्ल Arsenic का बर्णन उपदंश की चिकित्सा के लिए लिखा, परन्तु व्यवहार में यह देखा गया है कि मल्ल, बिस्मथ, पारद, इन तीनों का व्यवहार कभी-कभी किसी न किसी कारणवश करना ही पड़ता है। इन तीनों में बिस्मथ का प्रभाव यद्यपि मल्ल के समान शीघ्र नहीं होता फिर भी पारद से शीघ्र गुणकारी और स्थाई प्रभावकारी होता है और यह भी बात है कि मल्ल की अपेक्षा बिस्मथ के गुण अधिक चिरस्थाई रहते हैं। इसकी अल्प मात्रा शरीर द्वारा शोषित होकर अपना प्रभाव अधिक काल तक बनाए रखती है। वाह्य भागों पर उपदंशज विकारों पर बिस्मथ का प्रभाव पारद से शीघ्र और मल्ल के ही समान तत्काल होता है। पारद, मल्ल के साथ मिली जुली चिकित्सा चालू रखने से और मात्रा से अधिक न बढ़ने पर कोई भी उपद्रव या हानिकारक लक्षण उत्पन्न नहीं हो पाते। पारद या मल्ल की अपेक्षा बिस्मथ का धातु रूप में ही अत्यन्त सूक्ष्म चूर्ण ग्लूकोज विलियन में दिया गया इन्जेक्शन पीड़ा से रहित उपद्रवों से रहित तथा पूर्ण प्रभावकारी होता है। जब पारद या मल्ल का सेवन रोगी को निषिद्ध होता है तब बिस्मथ ही ऐसी औषधि रह जाती है जिसका सहारा लिया जाता है। यह नियम होना चाहिए कि बिस्मथ को अन्य चिकित्सा के साथ साथ सहायक औषधि के रूप में व्यवहार करना चाहिए। अकेला बिस्मथ को तभी प्रयोग करना चाहिए जब रोगी को मल्ल और पारद का व्यवहार निषिद्ध हो।

बिस्मथ सभी प्राणियों को यहां तक कि वृक्कशोथ नेत्र शोथ वालों तक को सह्य है। शिरा इत्यादि में देने का झंझट नहीं, सीधा मांसान्तर्गत प्रयुक्त होता है। प्रयोग के साथ-साथ यह रोगी का बल भार भी बढ़ाता है।

बिस्मथ के अनेकों योग बाजार में मिलते हैं जैसे—

१ बिस्मग्लूकोल (२) एम्बियल. (३) निऊट्रेपल (४) बिस्मोस्टाब. (५) हाईपोलाईड ब्रांड (६) बिस्मथ सेलोसिलेट (७) बिस्मथ मेटल (८) कोलोसोल विस्मथ. (९) कोलायडियल विस्मथ (१०) ओलीसल. (११) स्पाईरिलन, (१२) बिस-स्पेन, (१३) वेंजों विस्मथ, (१४) बिस्मोफनोल (१५) बिस्मथ आर्सेनिक. (१६) बिस्मोजेनल (१७) बिस्मथ सक्सीनेट, (१८) बिस्मथ ओलिवेट, (१९) सोलबिस्मथ, (२०) कार्बोकोल, (२१) बिसाक्सील (२२) बिस्मथ आक्सी क्लोराईड; (२३) ट्राईयाल, (२४) बिस्मुटाल, (२५) थिओबिस्मोल, (२६) क्लोरोस्टाव (२७) बिस्टोवाल, (२८) बिस्कोल, (२९) बिसार्सेनाल, आदि २।

कुछ भी हो बिस्मथ उपदंश की अव्यर्थ औषधि मानी गई है। वैसे मल्ल एवं पारद भी उपदंश पर सफलता पूर्वक व्यवहृत होते हैं पर जब मल्ल के साथ बिस्मथ प्रयोग किया जाता है तब विचित्र ही गुण और प्रभाव रोगी पर होता है।

बिस्मथ के उपरोक्त योग एक से कार्य करने वाले हैं। उनके निर्माण तथा रसानिक गठन और नाम में अवश्य ही अन्तर है। गुण प्रायः सभी के एक से हैं। मात्रा और मात्रा का नियमित बर्धन औषधि के साथ होता है। वैसे सभी प्रयोग मासांन्तर्गत, वे भी नितम्ब प्रदेश के मांस में लगाये जाते हैं। जब मल्ल के साथ प्रयोग करना होता है तब अदल-बदल कर इनका प्रयोग होता है।

बिस्मथ Bismuth के कुछ योग शुद्ध धातु के ही आते हैं। इनमें बिस्मथ का सूक्ष्म चूर्ण ही शर्क-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोदक में मिलाया हुआ होता है। ऐसे विलियन में विस्मथ नीचे बैठा हुआ होता है। अतः जब उसे पिचकारी में भरना हो तो सुई को रबड़ के आवरण में धंसाकर वायल Vial को (शीशी को) हिलाते हुए तब पिचकारी के पिधान को पीछे खींचना चाहिये। ताकि एक से विलियन का घोल पिचकारी में आ जाय। अब पिचकारी को भी बराबर घुमाते हुए इंजैक्शन लगाना चहिए। नहीं तो विस्मथ का चूर्ण सुई के अन्दर अटक जायेगा, या विधान और पिचकारी नलिका के मध्य में अड़कर पिधान को आगे पीछे होने में बाधक होगा। इसीलिये पिचकारी को घुमाते हुये इंजैक्शन लगाना होता है।

उपद्रव जो विस्मथ के प्रयोग समय हो सकते हैं:—

इनमें कुछ रसायनिक योगों को असावधानी से प्रयुक्त करने पर कुछ उपद्रव अवश्य हो जाते हैं, प्रतिकार तभी करना आवश्यक हो जाता है। मुख्यतया निम्न उपद्रव होजाते हैं जो विशेषकर शोडियम-पोटाशियम Sodiun Potassium Tarterate के प्रयोगोपरान्त अधिक देखने में आते हैं। अतः ऐसे योगों का इंजैक्शन गहरे Deep मांस गत लगाने चाहिये, भूल कर भी अधस्त्वगीय या शिरान्तर्गत नहीं लगाना चाहिए।

१—यदि रोगी को मुखपाक या दन्त रोग पहले से होगा तो उनके लक्षण और भी गम्भीर हो जाते हैं।

२—जहां पर इन्जेक्शन लगाया जाता है वहां अत्यधिक पीड़ा हो जाती है।

३—कभी-कभी इन्जेक्शन के उपरान्त शिरःशूल, इत्यादि लक्षण हो जाते हैं।

४—त्वचा तथा अन्य श्लैष्मिक कलाओं पर शोथ के लक्षण या फिर एक प्रकार की खुजली होजाने की सम्भावना रहती है।

५—आमाशय, आन्त्रशूल, वृक्कशूल इत्यादि होने का भय रहता है।

उपाय—

यदि स्थानीय शोथ कण्डू इत्यादि के लक्षण हो जावें तो सोडियम थियोसल्फेट Sodium Thio sulphate, या केल्शियम थियोसल्फेट Calcium thiosulphate का मांसान्तर्गत इन्जेक्शन लगाना श्रेयस्कर होता है, इससे समस्त उपद्रव शान्त होजाते हैं।

मानसिक आघात तथा शिरःशूलादि उपद्रवों में उत्तेजना को शान्त करने के लिए ग्लूकोज, या ब्रोमाईड का प्रयोग करना चाहिये, हृदय को बल देने के लिए कोरामीन Coramine केम्फर इन आयल Comphor in oil, एड्रीनिलिन इत्यादि का प्रयोग साथ में ग्लूकोज की प्रचुर मात्रा देनी चाहिए। विटामिन बी. vit B. complex का प्रयोग नाड़ियों को बल देने के हेतु करना चाहिये।

वृक्कशूल इत्यादि उपद्रवों में एट्रोपीन Atropine के इन्जेक्शन, या मार्फीन Morphine का प्रयोग करना पड़ जाता है।

मुखपाक के लिए सदैव जीवाणु नाशक विलियनों से कुल्ले करना, और ग्लीसरीन इत्यादि के शामक योगों का प्रयोग करना चाहिये।

एड्रीनेलीन (Adrenaline)

यह उपवृक्क Suprarenal Gland ग्रन्थि का सार या मद होता है। और इन्जेक्शन में तरल रक्त में व्यवहार किया जाता है। वृक्क के ऊपर यह ग्रन्थि स्थित है, और अन्य ग्रन्थियों की तरह यह भी अपना एक प्रकार का सार उद्रेचन करती हैं, उसी सार को एड्रीनेलीन कहते हैं।

इसका शरीर पर बहु-विधि विलक्षण प्रभाव होता है, और कोई ही ऐसा चिकित्सक होगा जो अपने नित्य प्रति के चिकित्सा कर्म में इसका उपयोग करने में तत्पर न रहता हो। हर समय उपयोग आने वाली यह औषधि है, इसके गुण साधारणतया निम्न हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके प्रयोग से Sympathetic Nerve पिंगल नाड़ी मण्डल उत्तेजित हो जाता है, जिससे Blood-Pressure रक्त भार बढ़ जाता है। दूसरी ओर शरीर की शिरायें Veins धमनियां arteries संकुचित हो जाती हैं, इस संकोचक गुण के कारण यदि कहीं से रक्तस्राव हो रहा हो तो वह भी कम हो जाता है अथवा बन्द हो जाता है। साथ-साथ श्वास की गति भी दृढ़ और खुल जाती है, नेत्र का तारा Puple प्रसारित हो जाता है। श्वास प्रणाली के प्रसारक गुणों के कारण दमे Asthma में यह अपना प्रभाव श्वास की कठिनाई को निवारण करने में विचित्र रूप से संपादन करता है। चोट जख्म पर यदि इसको लगा दिया जाए तो यह स्थानीय रक्त स्थापक गुण युक्त होने से रक्त रोकता है। इसी लिए जब कहीं पर शल्य कर्म किया जाता है तो कोकेन Cocaine के साथ इसको मिलाकर इस स्थान पर जहां शल्य कर्म करना होता है इन्जेक्शन लगा देते हैं। फल इसका यह होता है कि वह स्थान सुन्न और संज्ञाहीन तो हो ही जाता है साथ-साथ चीड़-फाड़ करते समय रक्तस्राव भी बहुत कम होता है। श्वास कास प्रतिश्याय में इसको स्थानीय उपचारार्थ नासिका में भी टपकाते हैं, अस्तु विशेष रूप से निम्न प्रकार से इसका इन रोगों पर व्यवहार होता है।

मात्रा—१ : १००० की शक्ति वाले घोल का व्यवहार ५-२० या २५ बूंद तक किया जाता है।

मार्ग—साधारणतया अधस्त्वगीय और अत्यन्त आवश्यकता पड़ने पर शिरान्तर्गत Intravenously भी प्रयोग कर सकते हैं। जब लवणोदक के साथ इसे मिलाना हो तो जिस मार्ग द्वारा लवणोदक दिया जा सके उस मार्ग द्वारा दिया जाना चाहिये।

गुण—अवसाद जो शल्य-कर्म जनित हो Surgical-Shock, हृदयगत वातज शोथ, हृदयावरोध, वातश्लेष्मिक ज्वर, श्वास, प्लीहावृद्धि, जीर्ण मलेरिया में शिरा द्वारा प्रयोग करने से शीघ्र ज्वर की मुक्ति होजाती है। रक्तस्राव शरीर के किसी भी भाग से किसी भी कारण हो रहा हो इसके लिए यह रामबाण एवं महौषधि मानी जाती है, विशूचिका में शैत्यावस्था में प्रयोग करते हैं, निम्न विशिष्ट रोगों पर इसका प्रयोग अधिकतर होता है।

रक्तस्राव—

(१) जब आंत्रिक ज्वर में व्रण होकर रक्त स्राव होने लगे।

(२) मूत्र में रक्त आने पर।

(३) अन्य मार्गीय ऋतुस्राव Vscarious menstruation में यह विशेष गुण करता है, जब रजःस्राव किसी कारणवश योनि द्वारा न आकर अन्य मार्ग जैसे नासिका मुख गुदा इत्यादि से आने लगे।

(४) रक्तष्ठीवन (वमन द्वारा रक्त आना) आमाशयगत आघात होने से जब मुख द्वारा रक्त वमन हो।

(५) बवासीर, अर्श में जब गुदा द्वारा रक्त का स्राव होता है तब उस अवस्था में १ : १००० वेसलीन में मिलाकर लगाने या गुदा में प्रविष्ट करने पर रक्त बन्द हो जाता है।

(६) त्वचा में लाल चकत्ते पड़कर जब रक्त स्राव होने लगता है तब यह महान उपयोगी सिद्ध हुआ है।

(७) बच्चों के गुदा मार्ग से चाहे वह कांच निकलने या जीर्ण अतिसार जन्य हो यह ५ बूंद अधस्त्वगीय विधि से प्रयोग करने से लाभ करता है।

(८) चेचक में से जब रक्त आने लगे, तब दशा भयङ्कर हो जाती है। ऐसी दशा में यह अत्यन्त लाभ करता है।

(९) रोहणी Diphtheria रोग में जब गले से रक्त आने लगे।

(१०) गर्भावस्था से जब प्रसवोपरान्त या ऋतु-निवृत्योपरान्त जब पुनः रक्तस्राव होना आरम्भ होता है, जब गर्भाशय में घातक व्रण हो जाये तब रक्तस्राव हो तो यह लाभ करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्तस्राव के अतिरिक्त यह निम्न रोगों में विशेष रूप से प्रयुक्त होती हैं—

१—श्वास—जब दमा का वेग हो, श्वास बड़ी कठिनाई से आरही हो, श्वास के अतिरिक्त जब किसी बेचैन करने वाली खांसी या अन्य कारण से भी सांसें आने में कष्ट होरहा हो तब ऐड्रीनैलीन का प्रयोग जादू की तरह श्वास गति को सामान्यावस्था पर ले आता है। यदि एक बार के प्रयोग से लाभ न हो तो २-२ घंटे बाद पुनः प्रयोग करना चाहिये।

२—निमोनियां में तीव्र पीड़ा होने पर ५-१० बूंद घंटे घंटे बाद पीड़ा शान्त होने तक दें।

३—विशूचिका हैजा cholera में जब शरीर शीतल होजाता है हृदय की श्वास गति धीमी पड़ कर रोगी मरणासन्न होजाता है तब इसको लवणोदक के २०-२५ औंस में ४-६ बूंद मिलाकर शिरा द्वारा देने से विशेष लाभ होता है और यदि लवणोदक को गुदा द्वारा या अधस्त्वगीय विधि से देना है तब १५-२० बूंद एड्रीनेलीन मिलाकर देने से आशातीत लाभ होता है।

४—गर्भिणी की प्रातःकालीन वमन में ५ बूंद से ८ बूंद तक अधस्त्वगीय इन्जेक्शन से लाभ होता है।

५—विविध प्रकार के चर्म रोगों पर जिन पर साधारण उपचार लाभ नहीं करते जैसे सूखी खाज जिसमें से स्राव वगैरा कुछ नहीं होता एड्रीनैलिन का चर्म द्वारा इंजेक्शन आश्चर्यप्रद लाभ करता है।

६—बहुत सी औषधियां ऐसी हैं जो प्रयोगोपरांत या सेवन करने के कुछ काल के उपरांत कुछ ऐसे लक्षण उत्पन्न कर देती हैं जिनसे अत्यधिक हानियां होजाती हैं जैसे शीतपित्त, रक्तचाप का गिर जाना, श्वास इत्यादि। ऐसे समय में उक्त औषधियों के सेवन से पूर्व यदि एड्रीनैलीन का प्रयोग कर दिया जाय, या जब उन लक्षणों का उदय होने लगे तभी एड्रीनैलीन का उपयोग कर दिया जाए तो तत्काल उपद्रव शान्त होजाते हैं। इसी प्रकार पारद के सेवन के उपरान्त जब बहुविधि उपद्रव पैदा होजाते हैं तब भी एड्रीनैलीन से विशेष लाभ होता।

७—जब हृदय किसी भी कारण से बलहीन होने लगे, या हृदय की गति सहसा रुकने लगे तब इसका अधस्त्वगीय अथवा शिरान्तर्गत प्रयोग तुरन्त लाभ करता है। यहां तक कि हृदय की गति यदि रुक जाय तब हृदयांतर्गत Intracardiac इन्जेक्शन विधि से ५-१० बूंद प्रयोग करने से कभी-कभी प्राणों का पुनः संचार होते देखा गया है और पुनः हृदय चालू होगया है।

८—नेत्रों के प्रदाह जन्य जब आंखों में सुर्खी ठहर जाती है तब आंखों में डालने के लिए भी एक औंस परिस्रुत जल में १-२ बूंद एड्रीनैलीन मिला कर आंखों में डालने या फिर अधस्त्वगीय प्रयोग से शीघ्र सभी लक्षण शान्त होजाते हैं।

९—सीरम के प्रयोग के उपरांत अथवा वैसे ही जब हे-फीवर Hay fever होकर ज्वर के साथ शुष्क कास होजाता है तब यह १ सी. सी. की मात्रा में प्रयुक्त करने पर सभी लक्षणों को जादू की तरह कम करती चली जाती है।

१०—संखिया, विस्मथ इत्यादि विषैले पदार्थों के सेवन के उपरांत जो उपद्रव और विषैले लक्षण हो जाते हैं उनमें इसका प्रयोग तो होता ही है, परन्तु कहीं-कहीं पर सर्पदंश Snake Bite पर भी उसी स्थान पर एड्रीनैलिन का प्रयोग विष को आगे बढ़ने से रोक कर विष को निष्क्रिय करने में सहायक होता है।

११—शीतकाय collapse आदि चाहे किसी रोग या शल्यकर्म जन्य हो, साथ में हृदय ग्रसित हो शून्यता एवं डूबने के बाद भी जब श्वासावरोध हो तब भी इसको प्रमुख औषधि मान कर प्रयोग कर सकते हैं।

इसका प्रयोग अन्य औषधियों को साथ मिला कर भी किया जाता है जैसे श्वास दमा में इफेड्रीन Ephadrine मिलाकर करते हैं। इससे इसका प्रभाव कुछ देर तक टिकाऊ रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाजार में यह अनेकों नाम से मिलती है, मगर गुण सभी के लगभग एक से होते हैं। व्यवहार करते समय एक बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि सदैव इसको रोशनी और वायु से बचा कर अन्धेरी जगह पर रखना चाहिए क्योंकि प्रकाश और वायु के सम्पर्क में आकर यह बिगड़ जाता है। दूसरी बात यह कि हमेशा लाल रङ्ग का विलियन प्रयोग करना चाहिए। अधिक समय तक रखने और प्रकाश के स्पर्श से इसका वर्ण पीले रङ्ग का हो जाता है, इसको व्यवहार नहीं करना चाहिए।

अनेकों नाम जिनसे यह मिलती है—

(१) एड्रीफाईन (२) एड्रीनैलीन (३) पेरानेफ्रीन (४) सुप्रारेनालीन (५) रेनाग्लेंडिन (६) एपीनेफ्रीन (७) वास कस्ट्रक्टीन (८) एड्रे-एफ्रेड्रीन (९) एड्रे-निलीन एफेड्रीन (१०) एड्रेनो एफेड्रीन (११) एड्रि-एफेड्रीन विद एट्रोपीन।

अन्त के चार प्रयोग विशेष रूप से श्वास कास में प्रयुक्त होते हैं। गरम देशों में विलियन कम टिकाऊ होते हैं अतः वहां के लिए एड्रिनिलिन टार्ट्रेट सोलूशन निर्मित होते हैं।

आयोडीन (Iodine)

गुण—आयोडीन का प्रयोग अग्निरोहिणी Plague, दूषित व्रण, वातश्लेष्मिक ज्वर Pheumonia, विसर्प Erysipelas, गठिया, आमवात Rheumatism, कण्ठमाला के व्रण Scrofulous Glands, उपदंश की तृतीयावस्था में कोलेजिल आयोडीन Collosal Iodine का व्यवहार होता है, (निमोनिया में कोलोसल आयोडीन का ०.४ प्रतिशत का विलियन ४-४ घण्टे पर प्रयोग होने पर दो चार बार ही में ज्वर शनैः शनैः उतर जाता है)।

मात्रा–५ सी. सी. तक प्रयोग कर देना चाहिए, अधिक प्रयोग के समय सावधानी रखनी चाहिए। आयोडीन के उपद्रव उत्पन्न हो सकते हैं।

मार्ग—बहुधा मांसान्तर्गत अथवा अधिक आवश्यकता पड़ने पर शिरागत दे सकते हैं।

विशेष–जिस विलियन का इन्जेक्शन प्रायः लगाया जाता है उसकी निर्माण विधि नीचे दे रहे हैं—

आयोडीन	२४ ग्रेन
पोटाशियम आयोडाईड	३६ ग्रेन
परिस्रुत जल	१ औंस

इस प्रकार बने विलियन की प्रत्येक सी. सी. मात्रा में आयोडीन १ ग्रेन के परिमाण में होता है।

इस विलियन का आरम्भ १ सी. सी. से उपरोक्त रोगों में करना चाहिये और क्रमशः आधा सी. सी. से १ सी. सी. प्रति बार बढ़ाते हुये सप्ताह में १ या अधिक बार (जितनी आवश्यकता रहे।) इसका प्रयोग करना चाहिये। आयोडीन का १ योग Entodon भी पहले व्यवहार होता था उसकी मात्रा आधी से १ सी. सी. तक या १ से २ सी. सी. तक है। यह अधस्त्वगीय या शिरान्तर्गत दिया जाता है।

आयोडीन के इन्जेक्शन प्रायः दाहक तथा घोर पीड़ा करने वाले होते हैं, परन्तु Collosal Iodine का व्यवहार इन उपद्रवों से रहित है, इसको ०.१, ०.२, ०.३, ०.४ तथा ०.८ प्रतिशत की शक्ति तक व्यवहार करते हैं,०.१ प्रतिशत वाले विलियन की १ सी. सी. मात्रा चर्मान्तर्गत अधस्त्वगीय दिया जासकता है, परन्तु अधिक शक्ति वाला घोल शिरागत ही देते हैं। सप्ताह में १ या दो बार।

कभी रखा हुआ विलियन व्यवहार नहीं करना चाहिये, उपरोक्त विधि से बनाकर या कोलसल के रूप में मंगाकर देना चाहिये। अन्य योगों में आईडोसोल Idosol का व्यवहार होता है।

मात्रा–१% या २%. घोल का ५–५ सी.सी. तक।

मार्ग--शिरान्तर्गत अथवा मांसान्तर्गत।

गुण--निमोनियां, इन्फ्लूएन्ज़ा, यक्ष्मा, उपदंश, आमवात, प्रतिश्याय, कास, फुफ्फुसावरणीय शोथ, कण्ठमाला, अपची, महा धमनी के रोग (Aortic diseases) और स्ट्रेप्टोकोकल (पूयोत्पादक) संक्रमण इत्यादि रोगों पर व्यवहार होता है। अन्य योगों में कोलायड आयोडीन भी विशेष है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौह IRON

परिचय—लौह को लातिनी Latin भाषा में Ferrum फेरम कहते हैं। इसी से लौह के मिलने वाले योग प्रायः इसी नाम से युक्त होते हैं।

गुण—लौह का विशेष गुण रक्तवर्धन है, जब किसी रोग के पश्चात् दुर्बलता हो जाये और शरीर में रक्त का अभाव हो ऐसे समय में लोह का मुख द्वारा या इन्जेक्शन द्वारा प्रयोग अमृत तुल्य फल देता है। प्रत्येक प्राणी के रक्त में लाल कणों के साथ साथ रंजक पदार्थ Haemogiobin की जो रक्त वर्णता है उसका कारण लौह और प्राणवायु है। लौह रक्त-वर्धक रसायनों में सर्व श्रेष्ठ माना गया है यह भी सिद्ध हो गया है कि यकृत सार Liver Ext. में प्रचुर मात्रा में लौह होता है, और उसी के कारण से वह भी रक्तवर्धक गुण युक्त होता है। इस प्रकार अनेकों वनस्पतियां ऐसी हैं जिनमें लौह की प्रचुर मात्रा उपस्थित रहती है।

लौह को अपने विशेष रासायनिक गुणों के कारण या तो अकेला ही प्रयोग करते हैं, अथवा और दो एक समान गुण युक्त द्रव्यों का सम्मिश्रण करके व्यवहार करते हैं। यह हमने पीछे के अध्यायों में स्पष्ट कर दिया है कि लौह सदेव मांसान्तर्गत ही प्रयुक्त होता है, भूलकर भी शिरा द्वारा प्रयोग नहीं करना चाहिए। अधिक चतुर और ज्ञाता चिकित्सकों को ही शिरा द्वारा किसी विशेष योग को भी, जिसको शिरा द्वारा देने का आदेश भी हो, देने से पूर्व भली भांति सोच विचार लेना चाहिए। शिरा द्वारा प्रयुक्त करने के थोड़े ही सेकण्ड बाद गला घुटने लगता, आंखें बाहर निकलने को होजाती हैं, विचित्र अनुभव के साथ कनपटियां सूजी और भरी हुई सी लगती हैं, सांस आना कठिन हो जाता है। इसी दशा में कभी-कभी रोगी मर भी जाता है, अतः बहुत सावधानी से काम लेना चाहिए।

दूसरे यह कि लौह का उपयोग द्रव्य गुण शास्त्रों में जिस प्रकार और जिस अवस्था में देना लिखा है उसी दशा में और अवस्था में देना चाहिए। लौह के अकेले योगों में कोलायड आयरन का व्यवहार होता है, इसके अतिरिक्त मिश्रित योग व्यवहार किये जाते हैं। जैसे—

आयरन कोकोडायलेट Iron cocodylate—

यह लौह और मल्ल के मिश्रण से तैयार किया जाता है जिसकी विधि इस प्रकार है:—

फैरिक क्लोराईड का तेज़ घोल	२६ बूंद
साईट्रिक एसिड	२ ग्राम
आर्सेनिक ट्रायोक्साईड	०.१३ ग्राम
अमोनिया का तनुघोल	आवश्यकतानुसार
परिस्रुत शुद्ध जल	१०० मिलि० या १५०' बूंद

इस प्रकार बने घोल में प्रत्येक १५ बूंद में १/५० ग्रेन मल्ल का योग है। मांसान्तर्गत विधि से ८ से १५ बूंद १/२ से १ सी. सी. तक व्यवहार होता है।

आयरन साईट्रेट—

यह लौह और साइट्रिक ऐसिड का योग है। इसकी मात्रा १ सी. सी. की है जिसमें लोह का परिमाण २ ग्रेन है, दूसरा योग "आयरन सायट्रेट विद स्ट्रिकनीन" का है। इसकी मात्रा १ सी. सी. की है।

गुण—यह यकृत को बल देकर नवीन रक्त का संचार करता है, किसी भी कारण से जब शरीर में रक्त की कमी हो जाती है तब इसका व्यवहार किया जाता है, चाहे कभी रक्त के अत्यन्त स्राव हो जाने से ही या मासिक धर्म के अधिक होने से हो, या किसी रोग के कारण हो यह अपना प्रभाव करता है। व्यवहार मांसपेशीगत ही होता है। अन्य योग—

(१) फेरोटोन, इसमें-आयरन केकोडाइलेट ३/४ ग्रेन, सोडियम केको डायलेट तथा स्ट्रिकनीन १.६० ग्रेन होती हैं।
(२) आयरन आर्सेनाईट
(३) आयरन आर्सेनाईट विद न्यूक्लीन
(४) Iron Arsenite with Strychnine & Nuclin

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५) आयरन साईट्रेट बिद-स्ट्रिटकनीन; आदि।

शिरा मार्ग द्वारा लौह का प्रयोग
(Intravenous Iron Therapy)

प्रायः देखा गया है कि बहुत से ऐसे रोगी जिनके शरीर में लौह की कमी है यदि उनको मुख द्वारा लौह दिया जाय तो लौह का प्रभाव या तो होता ही नहीं और अगर होता है तो बहुत विलम्ब से और बहुत थोड़ा तथा अधिक रोगी ऐसे भी देखने में आए हैं जिनको मुख द्वारा लौह देने से उनके पाचन सम्बंधी विकारों की वृद्धि हो जाती है, ऐसे रोगियों में इन्जेक्शन द्वारा लौह के योग देने की आवश्यकता पड़ जाती है।

इसी उद्देश्य से लौह को प्रायः मांसान्तर्गत प्रयोग किया गया है, मगर शिरा मार्ग द्वारा देने का भी प्रयास किया गया, उसका उल्लेख नीचे दिया जाता है।

डा० स्लेक और डा० विल्किन्सन ने अपनी एक रिपोर्ट में एक स्थिर लौह शर्करा का विलियन Iron Sucrose solu. जिसमें लौह Elemental Iron २% प्रतिशत था अपने १२० रोगियों पर प्रयोग करके देखा। उन्होंने शिरा द्वारा लौह दिया, इनमें से ६० तो ऐसे थे जिसमें लौह की अत्यधिक न्यूनता थी। इनमें केवल १० रोगी ही मुख द्वारा लौह से लाभ उठा सके, सो वह भी अधिक काल तक सेवन करने के उपरान्त।

१—उपरोक्त डाक्टर महोदयों ने प्रथम दिन २५ मिलिग्राम (१·२५ सी. सी. उपरोक्त विलियन) लौह दिया; दूसरे दिन ५० मिलिग्राम, तीसरे दिन १०० मि० ग्रा०, चौथे दिन और उसके उपरान्त २०० मिलिग्राम देते रहे। उससे अधिक देने की कदाचित ही आवश्यकता पड़ी। एक रोगी को छोड़कर शेष सभी ने लौह को बिना किसी उपद्रव के १०० मि० ग्राम प्रतिदिन बर्दाश्त कर लिया। ये इन्जेक्शन कर्पूरसंधि में Antecubital vein में दिये गए। देने की गति प्रति मिनट २ सी. सी. के हिसाब से रही। उसी शिरा को हर रोज नहीं लिया गया अतः शिराशोथ होने की सम्भावना ही नहीं रही।

उन महोदयों के लेखानुसार लौह शर्करा Iron sucrose विलियन निरापद, उपद्रव रहित तथा प्रभावकारी सिद्ध हुए हैं। प्रायः सभी रोगियों में बड़ी शीघ्रता से सभी लक्षणों का ह्रास होगया जैसे श्वासावरोध, हृत्कम्प, क्षुधानाश, बद्हज़मी, थकान तथा रक्त की न्यूनता पुनः ठीक होगई।

२· डाक्टर गोवन तथा स्काट महोदयों ने इसी प्रकार के विलियनों का प्रयोग किया। उनके रोगियों की दशा अधिक खराब थी जैसे शोथ, स्वरयंत्र में विकार तथा अत्यधिक कामला और शक्तिहीनता आदि के लक्षण उपस्थित थे।

इनके कथनानुसार इस प्रकार के विलियन रक्त नलिकाओं में दाह उत्पन्न कर देते हैं तथा यदि शीघ्र गति से इंजेक्शन लगाया जाए तो शिरासंकोच venospasm कर देते हैं। परन्तु इसके लिए इंजेक्शन बहुत धीरे-धीरे लगाना चाहिए। लगभग दस प्रतिशत रोगियों में हल्की प्रतिक्रियाएं अनुभव की गईं। जैसे कि ऐसा लगता है कि चेहरा सूज गया हो यद्यपि नाड़ी गति सामान्य रहती है, ऐसी प्रतिक्रिया कुछ सेकेण्ड रह कर मिट जाती है। १-२ इंजेक्शनों में तो ये लक्षण रहते हैं, बाद में नहीं।

सभी रोगियों में हीमोग्लोबीन की मात्रा प्रथम सप्ताह में ही ८० प्र० श० बढ़ गई दिखाई दी।

३—अगनर तथा और डाक्टरों ने भी २० ऐसे रोगियों की चिकित्सा शिरा द्वारा लौह देकर की जिनके शरीर में लौह की मात्रा कम थी। उन्होंने कसीस वत लोह का कोलायडल विलियन का इंजेक्शन लगाया। १६ रोगियों में हेमोग्लोबीन की मात्रा बड़ी शीघ्रता से बढ़ गई, ४ रोगियों में कुछ भी नहीं हुआ।

उनका यह विश्वास है कि लगभग ७० प्रतिशत से १०० प्रतिशत लोह शरीर में हेमोग्लोबीन निर्माण के काम आजाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः मुख द्वारा लोह देने की अपेक्षा लोह को शिरा मार्ग द्वारा देने से रक्तनिर्माण कर्म भी उत्तेजित हो जाता है। लेखक की धारणा है कि कोई भी मिश्रित लोह complex iron जो कि शनैः शनैः अणु परमाणु में परिवर्तित (Ionises) होता है प्रयोग किया जा सकता है।

श्री. हेम्लर महोदय एक ऐसा प्रयोग व्यवहार में लाते हैं जिसमें लोह सोडियम फेरिक डाई वार्ट्रएट Sodium ferric di (x, y-dihydroxy dimethyl) के रूप में होता है। इसकी मात्रा १२० मिलीग्राम की प्रतिदिन की है।

श्री. सिन्क्लीयर तथा ड्रपिक ने भी आशाजनक फल लौह को शिरा द्वारा प्रयोग करके प्राप्त किये हैं। उन रोगियों में जिनमें महीनों मुख द्वारा लौह देने पर भी रक्त की लालिमा में वृद्धि नहीं हुई उनमें शिरा मार्ग द्वारा दिया गया लौह आशा से अधिक प्रभावकारी हुआ।

इस प्रकार के इंजेक्शन का प्रयोग करने के लिए यदि औषधि का निर्माण करना पड़ जाय तो अत्यन्त स्वच्छता से विश्वस्त लौह के योग iron sucrose द्वारा विधिवत् उपयुक्त परिमाण में, निर्दिष्ट प्रतिशत शक्ति का विलियन निर्माण करके उसको १-२ दिन रखकर उसके रासायनिक परिवर्तन होने को न देखकर केवल जीवाणुओं की उपाधि को देखने के लिए परीक्षा कर लेनी चाहिये। तदुपरांत प्रथम मात्रा का प्रयोग अत्यन्त सावधानी और धीरे-धीरे करने का प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार मात्रा सह्य और निर्दोष होती है। जल्दबाजी में बनी औषधि और बेतरतीब बिना सोचे विचारे शिरा द्वारा प्रयोग कर देने पर बहुधा ऐसे उपद्रव होने की संभावना रहती है जिन्हें संभालना ही भारी होजाता है।

सोलुफेरिन Solu-ferin

मधुर लौह का एक योग अभी हाल ही में भारत की एक निर्माणशाला (स्टैण्डर्ड कम्पनी) ने बनाया है जिसको शिरा द्वारा उचित मात्रा में प्रयुक्त करके लोह के अभाव द्वारा होने वाली सभी दशाओं और रोगों का निवारण किया जा सकता है, लौह के जो गुण हैं, जैसे रक्त-हीनता आदि सभी दूर हो जाते हैं।

मार्ग—शिरा द्वारा प्रतिदिन या सप्ताह में दो तीन बार दें। लोह के अधिक प्रयोग से जो जो उपद्रव होते हैं, उनका प्रादुर्भाव होते ही इसे भी बन्द कर देना चाहिये।

एक्रीफ्लेविन (Acriflavin)

परिचय—पीले वर्ण की यह औषधि शुष्क रूप में आती है और इसका एक योग एक्रीफ्लेविन न्यूट्रल जो हल्दी के वर्ण का होता है, तथा साधारण एक्रीफ्लेविन कुछ लाल वर्ण की और कण रूप में होती है। इनका जल में बना हुआ विलियन ही प्रयुक्त होता है।

मात्रा—०·२५ ग्राम एक्रीफ्लेविन को ५० सी.सी. परिस्रुत जल में मिलाकर उसमें से १–५ सी. सी. की मात्रा प्रविष्ट करते हैं।

गुण—पूयमेह, सुजाक में इसका २ प्रतिशत का विलियन ५ सी. सी. की मात्रा में दूसरे या तीसरे दिन प्रविष्ट करते हैं। १०-१२ मात्राओं के प्रयोगोपरांत पूयमेह शमन होजाता है।

शरीर में कहीं भी पूय पड़ गई हो इसका प्रयोग अवश्य लाभ देता है। जीवाणु नाश करने के हेतु भी इसे प्रयोग करते हैं। इसका जीवाणु नाशक गुण चिरकाल तक बना रहता है। आमवात ज्वर, निमोनिया, हृद्रोग, चर्मरोग, विसर्प, प्रसूति ज्वर, एवं अन्य विविध रोगों से उत्पन्न संक्रमण तथा और व्याधियां Neutral acriflavine न्यूट्रलएक्रीफ्लेविन के व्यवहार से दूर हो जाती हैं।

मार्ग—शिरागत, मांसगत, कभी-कभी अधस्त्वगीय Hypodermically, परन्तु जब इसको शिरामार्ग द्वारा प्रयुक्त किया जाता है, यदि उस समय यह शिरा से बाहर लग जाय तो अत्यन्त पीड़ा होती है। यदि इसके प्रयोग काल में कामला होजाय तो प्रयोग बन्द कर देना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मे एण्ड बेकर कम्पनी ने इसके द्वारा पूयमेह को दूर करने के लिए गोनाक्रीन जो कि इयूफ्लेविन का विलयन होता है, बनाया है। इसका प्रयोग शिरा द्वारा इसके २ प्रतिशत विलियन के २ से ५ सी. सी. तक इन्जेक्शन सप्ताह में तीन बार लगाते हुए १२-१५ इन्जेक्शन लगाने चाहिये।

ऐट्रोपीन सल्फेट
(Atropine Sulphate)

परिचय—बेलाडोना नामक वनस्पति से जो धतूरे के समान ही होता है, यह बनता है और प्रयोगार्थ इसका विलियन तथा गोलियां दोनों ही मिलती हैं। अन्य औषधियों में भी मिला हुआ यह व्यवहार किया जाता है।

गुण—इसका विशेष प्रयोग हृदय को बल प्रदान करने, विशूचिका में हृदयावरोध निवारणार्थ धनुषटंकार तथा मृगी में बरम्बार उठने वाली उत्तेजना को शान्त करने के लिए इसको प्रयोग करते हैं। प्रलापावस्था, गृध्रसी, अन्य प्रकार के नाड़ीशूल में इसका प्रयोग किया जाता है।

इसका दूसरा उपयोग अफीम, मार्फीन तथा क्लोरोफार्म के विषैले प्रमाद को नष्ट करने के लिए विशेषरूप से किया जाता है। यदि दुर्बल मनुष्य को इसका व्यवहार कराना हो तो इसके साथ-साथ स्ट्रिकनीन को और मिला देना चाहिए।

मात्रा—१।२०० ग्रेन से १।१५० ग्रेन तक। १।६० ग्रेन तक भी प्रयुक्त होता है।

मार्ग—शिरागत, मांसान्तर्गत तथा अधस्त्वगीय मार्ग से इसका प्रयोग होता है, बाजार में अनेकों नाम से यह मिलता है।

१-एट्रोपीन सल्फ टेबलेट (गोलियां) जो १।२०० तथा १।१५० ग्रेन की एट्रोपीन की होती हैं।

२-एट्रोपीन सल्फ के एम्पूल इसमें १ सी.सी. में १।२०० से १।१५० ग्रेन एट्रोपीन सल्फ होता है।

३-एट्रोपीन तथा स्ट्रिकनीन—यह दो प्रकार का बना हुआ आता है।

(i) प्रति सी.सी. एट्रोपीन सल्फ १।२०० ग्रेन स्ट्रिकनीन १।१०० ग्रेन।

(ii) प्रति सी.सी. एट्रोपीन सल्फ १।१५० ग्रेन स्ट्रिकनीन १।८० ग्रेन।

४-मार्फीन तथा एट्रोपीन इसमें प्रति एम्पुल में मार्फीन की मात्रा $\frac{1}{8}$ से $\frac{1}{2}$ ग्रेन तक तथा एट्रोपीन सल्फ की मात्रा १।२०० ग्रेन से १।१०० ग्रेन तक रहती है। इसका प्रयोग प्रत्येक बार में १ सी. सी. किया जाता है।

इसके प्रयोग से नेत्र तारा प्रसारित होजाता है, मुंह शुष्क होजाता है, साथ में आमाशय, यकृत, क्लोम, दूध, आंसू, पसीना आदि सभी स्रावों में कमी आजाती है। अतः अधिक मात्रा जब देनी हो तब इन बातों को ध्यान में रखना जरूरी होजाता है।

एपोमार्फीन हाईड्रोक्लोराइड
(Apomorphine Hydrochloride)

परिचय—मार्फीन के अन्दर से यह वस्तु प्रथक की गई है और मुख व गुदा द्वारा इसका प्रयोग होता है।

मात्रा—१/२० से १/१० ग्रेन तक, यह शुष्क टिकियों की शक्ल में और तरल रूप में घुला-घुलाया भी मिलता है। इसके अतिरिक्त स्ट्रिकनीन मिश्रित भी आता है। उसकी मात्रा-

१—१ सी. सी. में एपोमार्फीन १।१० ग्रेन और स्ट्रिकनीन १।६० ग्रेन।

२—१ सी. सी. में एपोमार्फीन १।२० ग्रेन से १।१० ग्रेन और मार्फीन १।४ ग्रेन।

३ - जहां इसके द्वारा वमन कराना अभीष्ट हो वहां इसकी मात्रा १।१० से १।२० ग्रेन तक देनी चाहिये।

गुण—इसका प्रमुख गुण वमन लाने का है, अगर इसको गुदा द्वारा भी दिया जायगा तो भी यह वमन लाएगा। इसके अतिरिक्त मुख और इन्जेक्शन द्वारा तो वमन लाएगा ही। जब विषपान के अनन्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वमन कराना अभीष्ट हो तब और जब किसी भी कार्य के लिए पेट खाली करना हो तब इसका इन्जेक्शन देने के उपरान्त वमन द्वारा सभी कुछ बाहर आजाएगा; अगर कुछ अन्न की नली में फंस जाए तो भी उसे बाहर निकालने के लिए इसका प्रयोग करें, वमन के वेग के साथ वह भी बाहर निकल आएगा। इसके अतिरिक्त मदात्य एवं अनिद्रा में भी इसका प्रयोग करते हैं। नाड़ी की गति ऐसी दशा में जब मंद हो, रोगी बकवास कर रहा हो और प्रलाप Delerium हो तब इसको १।५० से १।३० ग्रेन की मात्रा में एपो-मार्फीन तथा स्ट्रिकनीन मिश्रित देना चाहिए और भी गुण इसके हैं, जैसे भय जन्य श्वासावरोध, कण्ठ शालूक, उन्माद, योषापस्मार और काली खासी में इसको व्यवहार करते हैं।

इसकी गोलियां अकेले एपो. मार्फीन की १।१० १।१५, १।२० ग्रेन तीन प्रकार की आती हैं तथा एपोमार्फीन और स्ट्रिकनीन की गोलियां उपरोक्त मात्रा में ही मिली हुई आती हैं। सदैव इसको अंधेरे में रखना चाहिये नहीं तो यह बिगड़ जाती हैं और वर्ण हरे रंग का हो जाता है।

मार्ग—अधस्त्वगीय और मांस पेशी गत।

विशेष—क्षीण रोगियों, बालक, वृद्ध एवं हृदय तथा फुफ्फुस के रोगियों पर इसका व्यवहार साव-धानी से करें और अगर करना पड़ जाए तो स्ट्रिक-नीन के बिना मिलाए प्रयोग न करें, इससे इसका अवसादक गुण नष्ट हो जाता है।

एम्नोपिन (Amnopain)

अहिफेन से यह भी बनाई गई है और बेलाडोना के समान गुण करती है।

मात्रा—१ सी. सी. में १।३ ग्रेन।

गुण—शरीर में पीड़ा और वेदना को दूर करके निद्रा लाने के लिये इसका प्रयोग होता है और क्षय जन्य कास, रक्तष्ठीवन तथा आमाशय प्रदाह, आन्त्र-पुच्छ शोथ जन्य शूल इत्यादि रोगों में पीड़ा इत्यादि को शमन करने के लिए इसका प्रयोग होता है।

मार्ग-अधस्त्वगीय।

एनाकार्डोन (Anacardone)

परिचय – ब्रुटिश फार्माकोपिया में इसको 'निके थेमाईड' कहते हैं। यह प्रयोग इस नाम से ब्रिटिश ड्रग हाऊस ने प्रेषित किया है।

मात्रा—इसकी मात्रा १ सी. सी. से १५ सी. सी. तक मांसान्तर्गत, शिरान्तर्गत तथा अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा होती हैं जो कि अवस्था, आयु और रोगी की दशा पर निर्भर करती है। जैसे साधारणतया १ सी.सी. से ४ सी. सी. तक इसको देते हैं। रोग की तीव्रता ५ से १५ सी. सी. तक, मुर्च्छा दूर करने के लिए १ से ३ सी. सी. तक, आयु के भेद से ८ वर्ष के बालक को पूरी मात्रा का आधा. ५ वर्ष के बच्चे को १।४, १ वर्ष के बालक को १।८ भाग देना चाहिये।

गुण: – इसका अधिक प्रभाव श्वास तथा हृदय संस्थान पर पड़ता है। राजयक्ष्मा में निमोनियां इन्फ्लुएञ्जा तथा मूर्च्छा में, हृदयावरोध, सन्यासावस्था Shocks इत्यादि में जब श्वास की गति बिगड़ जाती है रोगी को प्राणवायु Oxygen की जरूरत अधिक पड़ती है, तब इसको देने से प्राणवायु को अधिक गृहण करके श्वास एवं हृदय का कार्य नियमित ठीक बना रहता है। इसके अतिरिक्त विष जन्य मूर्च्छा में जब अहिफेन इत्यादि के खा लेने के बाद रोगी ठीक प्रकार से श्वास नहीं लेता तब और बिजली इत्यादि से उत्पन्न स्तब्धता में शल्यकर्मोपरान्त हृदय तथा फुफ्फुस गति ठीक रखने के लिए इसका प्रयोग होता है। यहां तक कि मधुमेह जनित सन्यास Diabetic Coma संक्रामक रोग एवं ज्वरों में Diptheria रोहिणी, मंथर तथा अन्य रोगों में श्वास की गति के स्थिर रखने के लिए इसे व्यवहार कराते हैं।

आवश्यकता पड़ने पर इसके साथ ग्लूकोज तथा नार्मल सैलाईन भी देते हैं, इससे और भी बलदायक प्रभाव हुआ है।

मार्ग—तीनों मार्गों द्वारा इसका प्रयोग होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एन्टी पाईरीन

(Antipyrin)

श्वेत वर्ण का चूर्ण रूप में होता है। एन्टी पाईरीन का अर्थ ता..रक है, यह चढ़े ज्वर को उतारता है।

मात्रा:—एक ड्राम परिस्रुत जल में ३० ग्रेन एन्टीपाईरीन विलीन करके एक स्वच्छ शीशी में रखलें। इस विलियन में से एक बार में ५-१० बूंद इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त करें।

गुण—तीव्रज्वर को अस्था: रूप से उतारने के लिए अर्थात् ३-४ घण्टे के लिए तीव्र ज्वर को भी उतार देता है। देखा गया है कि इसके इन्जेक्शन के बाद सहसा पसीना आकर शीतांग हो जाता है, ज्वर बिल्कुल नहीं रहता। इसके अतिरिक्त यह आमवात, स्नायुविक शूल, गृध्रसी, कटिशूल, स्नायु के अन्य शूल जैसे शिर:शूल जो प्रायः बहुत परेशान करता है, यह अद्वितीय रूप से अमोघौषधि है। अगर किसी अन्य कारण से भी कहीं पीड़ा है तो भी इसके प्रयोग से वह शान्त हो जाती है।

मार्ग—अधस्त्वगीय।

विशेष—हृदय के रोगी और दुर्बल बालक को यह कभी प्रयोग न करें।

एन्टीस्टीन

(ANTISTINE)

यह द्रव्य शीतपित्तघ्न श्रेणी की औषधि मानी जाती है।

गुण—शीतपित्त, औषधि या किसी विशेष प्रोटीन के सेवन के उपरान्त उत्पन्न हुई शीतपित्त की दशा जैसे श्वास कास, Hay fever, खुजली, शीतपित्त सीरम (रक्त द्रव) के प्रयोग के उपरान्त उत्पन्न चकत्ते, पामा, इत्यादि में अच्छा काम करता है।

मात्रा—२४ घण्टे में ४-५ बार तक प्रयोग किया जा सकता है, प्रत्येक बार २ सी. सी. की मात्रा में जिसमें प्रति दो सी. सी. में. १ ग्राम एन्टीस्टीन होती है।

इफेड्रीन हाईड्रोक्लोराईड—

(EPHEDRINE HYDROCHLORIDE)

आयुर्वेद में इसको सोम कल्पलता कहते हैं। इस बनस्पति का यह योग है। मुख द्वारा ¼ ग्रेन से १ ग्रेन तक इसका व्यवहार होता है। यह इन्जेक्शन द्वारा अत्यन्त शीघ्र गुणकारी होता है।

गुण—यह विशेषकर श्वास-कास में दौरा शांत करने के लिए प्रयोग किया जाता है। निरंतर प्रयोग से गाढ़े बलगम को पतला करके निकाल देता है, और थोड़ी मात्रा में प्रयोग करने पर रोग का शमन भी करने में समर्थ होता है। यह अकेला एफेड्रीन हाईड्रोक्लोर प्रति सी. सी. आध ग्रेन, और एड्रिनैलिन के साथ भी मिला हुआ प्रयुक्त होता है। एड्रिनिलिन के साथ एफेड्रीन का इन्जेक्शन श्वास के दौरे से छटपटाते रोगी को तुरन्त चमत्कार की तरह लाभ करता है। डाक्टर लोग श्वास के दौरे के समय इसको आधा सी. सी. से १ सी. सी. तक प्रयोग करते हैं।

मार्ग—मांसपेशीगत तथा अधस्त्वगीय विधि द्वारा।

विशेष—२४ घण्टे में इसकी आवश्यकता पड़ने पर दो बार या तीन बार भी। इससे अधिक नहीं प्रयोग किया जा सकता है।

इमेटीन हाईड्रोक्लोराईड—

EMETINE HYDROCHLORIDE

इपीकाक का यह सत्व रूप में निर्मित योग है। जो साधारणतया इमेटीन के ही नाम से अधिकतर प्रसिद्ध और प्रयुक्त होता है।

गुण - एमीबिक डिसेन्ट्री रक्तातिसार में जिसमें रोगी को दिन भर में १०-१२ बार आंव तथा रक्त आता है। इस प्रकार के अतिसार में मरोस या मरोड़ या तो बिलकुल ही नहीं होती, अगर होती है तो बहुत कम। रोगी धीरे-धीरे कमजोर होता चला जाता है। कभी-कभी ज्वर भी हो जाता है। परीक्षा करने पर मलमें E. Hytolitica मिलता है। इसप्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अतिसार में यह विशेष रूप से गुणकारी है। अथवा जब इस जीवाणु के कारण यकृतशोथ, यकृत विद्रधि होजाये तब यह अपना विचित्र प्रभाव दिखाता है। इन सब गुणों से युक्त होते हुए और एमीबिक प्रकार की संग्रहणी की अव्यर्थ औषधि होते हुए भी यह हृदय को कभी-कभी दुर्बल कर देता है अतः सोच विचार कर प्रयोग करना ठीक होता है।

मात्रा-इसकी टिकियां और घुला हुआ विलियन दोनों मिलते हैं। गोलियां निम्न परिमा की होती हैं। १, १।२, १/३, १/४, १/६, ग्रेन। इनको आवश्यकतानुसार परिस्रुत जल में विलीन करके प्रयोग करते हैं।

एम्पुल में—

१ सी. सी. में १ ग्रेन, १ सी. सी. में १।२ ग्रेन, १ सी.सी.में १/३ ग्रेन तथा १ सी.सी. में १/४ ग्रेन। इसकी मात्रा १ ग्रेन से अधिक नहीं होनी चाहिए, और कमजोर रोगियों को इसका प्रयोग न करें, विशेष कर उन रोगियों में तो इसे देना ठीक नहीं होता जिनको हृदय का या वृक्क का रोग हो।

उपरोक्त रोग के लिए इसका प्रयोग अत्यधिक होता है और देखा गया है कि ऐसे रोगी जिनको दीर्घ काल से किसी भी चिकित्सा से लाभ नहीं हुआ था इसके ३-४ इन्जेक्शनों से लाभ हो गया है। अधिक सेवन से बेचैनी, आलस्य, अतिसार, आंतों के मांस की गतिशून्यता Paraysis, तथा हृदय की दुर्बलता उत्पन्न हो जाती है। अतः ये लक्षण दिखाई देते ही इसका प्रयोग बंद कर देना चाहिए।

मार्ग—अधस्त्वगीय तथा मांस पेशीगत प्रयोग किया जाता है।

अपोकोडीन हाइड्रोक्लोराईड

(Apocodeine hydrochloide)

गुण—यह बलगम को पतला करके निकालने में अद्वितीय है। जब खांसी पुरानी हो जाए; बलगम न निकले और यह आशंका हो कि इसका रूप श्वास की तरह हो जायगा, फेफड़ों में बलगम भर गया हो। तब इसके प्रयोग से सारा बलगम पतला होकर खांसी के रास्ते निकल जाता है और रोगी को बहुत कुछ चैन पड़ जाता है, कभी-कभी रोग बिल्कुल ठीक हो जाता है।

मार्ग, मात्रा-इसका १ प्रतिशत का विलियन बना लेते हैं, इस विलियन में से १५ से ७५ बूंद लेकर अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा प्रयोग करते हैं।

इसको ३० बूंद की मात्रा में अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा देने पर विरेचन हो जाता है। अतः कभी-कभी कफनिस्सारक गुण प्राप्त करने की आशा से लगाए गए इन्जेक्शन विरेचक होकर हानि भी कर बैठते हैं।

एर्गटीन साईट्रेट

(Ergotin citrate)

विख्यात औषधि अर्गट का योग है। जो टिकियों के रूप में इन दो रूपों में मिलता है। टिकियां दो प्रकार की होती हैं १।१०० ग्रेन और १।२०० ग्रेन की। इसी प्रकार १ शीशी के एम्पुल में १।२०० ग्रेन अर्गट का अंश होता है।

गुण—अर्गट को जब गर्भाशय की मांस पेशियों पर अपना प्रभाव करने के लिए इन्जेक्शन द्वारा प्रयोग किया जाता है; गर्भाशय से रक्त-स्राव को उत्पन्न करता है, परन्तु शरीर के अन्य भाग से होने वाले रक्त-स्राव को बन्द करता है। साथ में पीड़ा और अवसाद यदि हो तो वह भी ठीक हो जाता है। कभी कभी कुछ स्त्रियों को मासिक स्राव की खराबी के कारण ऋतुस्राव होने में अत्यन्त पीड़ा होती है, यहां तक कि नख, नेत्र होंठ काले पड़ जाते हैं, स्राव कम और ऐसी पीड़ा से होता है कि स्त्री अचेत होजाती है। इस दशा में यह चमत्कारिक प्रभाव गर्भाशय को संकुचित कर ऋतु को साफ लाकर दिखाता है।

क्योंकि यह गर्भाशय संकोचक और जो भी गर्भाशय में हो उसे निकालने का प्रयत्न करता है। अतः जब बच्चा होने में दर हो रही हो, अपरा और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसवोपरान्त के अंश बाहर आने में विलम्ब हो तब इसके सूचीवेध से तुरन्त सब साफ हो जाता है। अतः प्रसव काल में जब तक यह निश्चय न हो जाए कि गर्भाशय का मुख खुला हुआ है इसको प्रयोग नहीं करना चाहिए। यदि मुख बन्द हो और इसका प्रयोग कर दिया जाय तो गर्भाशय मुख प्रसारित न होने के कारण बच्चे पर दबाव पड़कर उसकी मृत्यु, या गर्भाशय विदार्य अन्य भयानक उपद्रव हो सकते हैं। अतः सावधानी से प्रयोग करें।

मार्ग—मांसपेशीगत या अधस्त्वगीय।

मात्रा—१।१०० से १।२०० ग्रेन तक प्रयोग होता है।

अमीनो फाईलीन (Aminophylline)

यह कई नामों से मिलती है, यूफाइलीन, कार्डोफाईलीन, इत्यादि।

गुण—हृदय तथा रक्तनालिकाओं की शोथ युक्त विकृत दशाओं में, हृदय एवं फुफ्फुस जन्य शोथ तथा इन अंगों का शोथ, मूत्र लाने के लिए इसका प्रयोग होता है। इसके प्रयोग से मूत्र अधिक आकर शरीरस्थ शोथ निवारण होता है। श्वास एवं हृदय गति ठीक हो जाती हैं। यदि श्वास, हृत्शूल, वात श्लेष्म जन्य श्वासावरोध हो तो भी यह लाभ करता है।

मार्ग, मात्रा—२ सी. सी. जिसमें ०.४८ ग्राम औषधि होती है मांसपेशीगत, तथा १० सी. सी. जिसमें ०.२४ ग्राम औषधि होती है शिरान्तर्गत विधि से प्रयुक्त होती है। मांस द्वारा भी देते हैं।

एटोफनील (Atophanyl)

सोडियम एटोफान तथा सोडियम सेलिसिलेट के मिश्रण द्वारा बना हुआ योग है।

गुण—स्नायुविक शूल और शोथ जैसे गृध्रसी Sciatica, वातरोग Gout, कटिशूल Lumbago अन्य स्नायु शूल, शिर.शूल. गर्भाशयशोथजन्य-शूल इत्यादि में व्यवहार किया जाता है, पर कम क्योंकि इसके अधिक प्रयोग से यकृत पर कुप्रभाव पड़ता है। अतः इसके साथ खटिक द्रव Calcium या शर्करोदक Glucose मिलाकर व्यवहार करते हैं।

उपद्रव—अधिक प्रयोग होने से कामला, यकृत वृद्धि, शीत पित्त, मूत्र में एलब्यूमिन एवं पित्त भाग आने लगता है। मल मटमैली रंग का, पित्तांश रहित, आने लगता है। ज्वर, पाचन विकार भी हो जाते हैं। अतः इन उपद्रवों के होते ही ग्लूकोज देना आरम्भ कर देना चाहिये, आंतों को मेगसल्फ द्वारा साफ कर के इन्सूलीन का २० यूनिट प्रतिदिन प्रयोग करना चाहिये

मार्ग एवं मात्रा—·०५ ग्राम दवा को १० सी. सी. ग्लूकोज विलियन में घोलकर सप्ताह में दो बार तक प्रयोग करना चाहिये और पहिले थोड़ी मात्रा से आरम्भ करें। इसका इंजेक्शन अधस्त्वगीय दिया जाता है।

एण्टीमनी [सुर्मा रसांजन] Antimony

सुरमे के कई योग, कई नामों से बाजार में मिलते हैं। जैसे एण्टीमनी पोटाशियम टार्ट्रेट, एण्टीमनी सोडियम टार्ट्रेट, एन्टीमनी सल्फाईड (कोलोबेल) आदि।

गुण—कालाजार रोग की जो एक प्रकार का मलेरिया से मिलता-जुलता रोग है और मलेरिया से अधिक हठीला होता है, उसकी अमोघ और अद्वितीय दवा है। तथा श्लीपद, ओरियण्टल सोर (लाहोरी या औरंगजेबी जखम) लीशमीनियेसिस आदि रोगों पर भी उत्तम गुणकारी है।

मार्ग एवं मात्रा—०·५ से १ ग्रेन तक शिरांतर्गत मांसान्तर्गत। शिराद्वारा ही प्रायः दिया जाता है, पर शिरा द्वारा देने के लिए अधिक चतुराई और हस्त-सिद्धि की जरूरत है। क्योंकि देखा गया है कि बहुत से व्यक्तियों को यह दवा सात्म्य नहीं है, उनमें इसका इंजेक्शन लगाने के बाद निम्न लक्षण देखे गये हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मांसपेशी गत इन्जेक्शन लगाने के बाद प्रायः उस स्थान पर पीड़ा अत्यन्त होती है और वहां शोथ हो जाया करता है। अतः अन्य प्रकार के योग भी मिलते हैं जो इतनी पीड़ा आदि नहीं करते। इसके शिरागत देने पर कभी-कभी—

१—आमाशय सम्बन्धी विकार, खांसी के साथ बैचेनी; इन लक्षणों को यदि इसका इंजेक्शन खाली पेट लगाया जाय तो कम होने की सम्भावना रहती हैं, हल्लास, वमन कभी-कभी तीव्र अतिसार होजाता है।

२—विना सर्दी लगे हल्का बुखार हो जाता है, इसकी विशेष चिन्ता नहीं करनी चाहिये, जब तक कि तीव्र ज्वर न होजाए।

३—अनियमित तथा तीव्रगति से नाड़ी चलने लगती है।

४—अधिक काल तक चिकित्सा करने पर स्नायुविक उपद्रवों से शिरःशूल, अवसाद, कभी-कभी बेहोशी, मूत्र एवं मल का आना बन्द होजाना।

५—बड़े २ जोड़ों में पीड़ा विशेषकर स्कन्ध प्रदेश में दर्द का होना।

६—पिडिकाएं उत्पन्न होजाना।

७—कामला सदृश लक्षण सज्वर होजाना।

८—इसी प्रकार ६ टे या ७ वें इन्जेक्शन के उपरांत चेहरा सूज जाता है, कभी-कभी श्वासावरोध होकर सन्यासावस्था हो जाती है। शरीर पर मसूरिका जैसी पिडिकाएं निकल आती हैं।

यद्यपि ये लक्षण घातक नहीं देखे गए परन्तु फिर भी इनके होते ही या तो औषधि की मात्रा कम कर देनी या बन्द कर देनी चाहिए।

मांसपेशीगत इन्जेक्शन लगाने के लिए इसका कोलायडल रूप व्यवहार करना चाहिए। तथा मांसगत व्यवहार सप्ताह में दो बार, शिरागत दो-दो या तीन-तीन दिन के अन्तर से करना चाहिए।

उपद्रवों की शान्ति के लिये टेनिन जैसे कत्था गूलर क्वाथ, तेज चाय का प्रयोग अत्यन्त हितकर होता है। स्ट्रिकनीन का अधस्त्वगीय इन्जेक्शन उत्तेजना बनाए रखने के लिए करना चाहिये।

एसजेटस Eujetuss

परिचय—कपूर और जैतून के तैल का मिश्रण है। इसके अभाव में बहुप्रचलित केम्फर इन आयल का प्रयोग होता है।

गुण—काल की अवस्था में, निमोनियां, सर्दी, जुकाम के बिगड़ने पर शीतांगता तथा हृदय-दौर्बल्य, नाड़ी की मन्दगति होने पर विशूचिका तथा अन्य ऐसे रोगों में शरीर में उत्तेजना लाने के लिये इसका प्रयोग १ या २ सी. सी. तक होता है।

मात्रा—१ या २ रत्ती कपूर को १५ बूंद जैतून के तैल में डालकर गरम करके मिला लें और उसका प्रयोग मांसपेशीगत करें।

विशेष—अधिक तीव्रावस्था में केम्फर इन आयल का प्रयोग १-१ घंटे से कई बार तक कर सकते हैं।

ईथर (Ether)

गुण—स्थानीय संज्ञाहरण उत्पन्न करनी हो वहां इसका प्रयोग करते हैं, बंद एम्पुल में, यह बाजार में मिलता है। क्लोरोफार्म हृदय को दुर्बल करता है, और कुछ दशायें ऐसी हो जाती हैं जहां क्लोरोफार्म का प्रयोग करना या तो हानिप्रद होजाता है अथवा क्लोरोफार्म प्राप्त नहीं होता, वहां पर ईथर से काम चलाना पड़ता है। यह हृदय को बल देती है। इसके प्रयोग के उपरान्त बार-बार उठने वाली खांसी में तथा काली खांसी में ७-८ मास के बच्चे को १ सी. सी. तक दे दिया जाता है। यह मात्रा प्रति दिन या प्रति तीसरे दिन देते हैं। इसमें हानि यही है कि पीड़ा होती है और जहां बहुत इन्जेक्शन लगाया जाता है वहां पर मांस के गल जाने का भय रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१० बूंद से ४० बूंद तक, मांसगत या संज्ञाहरणार्थ चर्म के नीचे, परन्तु पहले पीड़ा बहुत होती है। स्थानीय संज्ञाहरणार्थ इसको त्वचा पर छिड़कने से भी काम चल जाता है।

इनसुलीन (Insulin)

परिचय—शरीर में क्लोम नामक ग्रन्थि के एक विशेष भाग में यह रस बनता है। जो रक्त में मिलकर यकृत को खाए हुए भोजन में से कार्बोहाईड्रेट इत्यादि से अधिक शर्करा बनाने में रोकता है। और इसके निरंतर उचित मात्रा में रक्त में मिलते रहने से शरीर में शक्ति बनी रहती है,त्वचा के नीचे वसा की तह बन कर झुरियां नहीं रहतीं, मूत्र में एक निश्चित मात्रा से अधिक चीनी नहीं आती और मधुमेह का रोग नहीं हो पाता।

गुण— इन्सुलीन मधुमेह की यद्यपि अमोघौषधि नहीं,फिर भी मधुमेही की दशा को अधिक सम्भालने में यह अवश्य ही अद्वितीय है। मधुमेह जन्य अम्लभाव,मूर्च्छा को तथा मधुमेह जन्य पिड़िकायें को यह सफलता पूर्वक दूर कर देता है। वैसे इसका चमत्कार मधुमेह जन्य मूर्च्छा में जादू की तरह होता है। इसके अतिरिक्त यह प्रलाप, सन्निपात में भी गुणकारी है।

मात्रा रोगानुसार—इन्सुलीन को मुख द्वारा प्रयोग करना व्यर्थ होता है, आमाशय के अम्ल रसों के सम्पर्क में आकर इसका गुण नष्ट हो जाता है। इसलिए इसको इन्जेक्शन द्वारा ही प्रयुक्त किया जाता है। इसके प्रयोग के उपरान्त एक दम रक्त की शर्करा निष्क्रिय सी हो जाती है, और रोगी निस्तेज, आंखों तले अंधेरी सी आना, चक्कर, बेचैनी, भ्रम तथा अत्यन्त मानसिक दुर्बलता का अनुभव करता है, ये लक्षण प्रायः आध घण्टे के उपरांत से १ घण्टे के अन्दर हो जाते हैं। इस लिए रोगी के या तो शिरामार्ग द्वारा ग्लूकोज का इन्जेक्शन लगा देना चाहिए, अथवा मुख द्वारा चीनी, या ग्लूकोज का प्रयोग कर लेना चाहिए, इससे दशा ठीक होजाती है।

मधुमेह जन्य सन्यास में ५-४० या ८० यूनिट तक इसको प्रयोग कर देते हैं, (एक सी. सी. औषधि में यूनिट की मात्रा ५-१०-२०-४०-८०-१०० इस प्रकार से अलग अलग होती है) जितनी जरूरत हो उतनी यूनिट प्रयोग कर देनी चाहिए मूर्च्छावस्था में इसके साथ ग्लूकोज को मिला लेना चाहिए अन्यथा रोगी के मर जाने का भय रहता है। या इसके प्रयोग के बाद ग्लूकोज को शिरामार्ग द्वारा प्रयोग करना चाहिए। यह भी स्मरण रखना चाहिए कि १ यूनिट इन्सुलीन २ ग्राम शर्करा का आत्मीकरण कर देती है, अतः अधिक यूनिट के प्रयोगोपरान्त रक्त की अधिकांश शर्करा जीर्ण हो जाती है, और रक्त शर्करा का अनुपात एक निश्चित मात्रा से कम होने पर ही रोगी को असाधारण उपद्रव अनुभव होने लगते हैं, इसीसे शिरा द्वारा पुनः शर्करा का अंश बढ़ाना आवश्यक हो जाता है। इसके प्रयोग से मधुमेही शस्त्र-क्रिया को आसानी से सहन कर लेते हैं, उसके लिए पहले से ही इन्सुलीन देते रहना होता है।

हमेशा इसके प्रयोग से पूर्व मूत्र शर्करा की जांच कर लेनी चाहिए। यदि ०.१६ से अधिक हो तो इन्सुलीन का प्रयोग करना चाहिए और प्रयोग करने के आध घन्टे के अन्दर-अन्दर रोगी को कुछ न कुछ ऐसा भोजन अवश्य कराना चाहिये जिसमें श्वेत सार, शर्करा की मात्रा काफी हो। इसके अतिरिक्त यदि मधुमेही भोजन के नियन्त्रण से स्वास्थ्य लाभ कर रहा हो तो उसे इन्सुलीन का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

प्रलापक सन्निपात में जब रोगी बकवास करके उठ कर भागता हो, तब ४०-८० यूनिट तक इन्सुलीन उसके शरीर में प्रवेश करके उसकी गति को देखना चाहिए, जब वह संज्ञाहीन हो जाए और सभी उत्तेजनायें शान्त होजांए उस समय तुरन्त शिरा मार्ग द्वारा ग्लूकोज देकर उसे सचेत कर देना चाहिए। रोगी बहुत कुछ शान्त उठेगा, और प्रलाप का वेग भी कम हो जायगा। फिर आवश्यकता पड़ने पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४-६ घण्टे बाद यही क्रम दुहराया जा सकता है। और लाभ उठाया जा सकता है।

विशेष—इन्सुलीन लेने वाले रोगियों को सदैव परिश्रम से बचना चाहिए, क्योंकि इन्सुलीन लेने के बाद इसके उपद्रव परिश्रम करने से बढ़ सकते हैं, और यह कि सदैव रोगी अपने पास दो चार औंस मामूली चीनी अवश्य रखे, जब भी इन्सुलीन के बुरे लक्षण अनुभव होने लगें चीनी खा लेनी चाहिए। अचेत रोगियों में शिरा द्वारा ग्लूकोज का प्रयोग करना चाहिए।

मार्ग—इसको अधस्त्वगीय मार्ग से बहुधा प्रयोग करते हैं। बहुधा जांघ के बाहरी भाग में त्वचा को चुटकी से, उठाकर उस उठी हुई त्वचा में सीधी जांघ के बराबर सुई लेजाकर इन्जेक्शन लगा देना चाहिए, वैसे मांसान्तर्गत तथा अधिक तीव्र रोग और दशा में इसको शिरामार्ग द्वारा प्रयोग करते हैं। इसकी मात्रा को एक दम ५-४०० यूनिट एक बार में न देकर कई बार में देना चाहिए। प्रातःकाल की मात्रा संध्या समय की मात्रा से दुगनी होनी चाहिए। यह आयुर्वेद की देशी दवा गुड़मार की तरह मधुमेह में मूत्र शर्करा विलीन करने के लिए सफलता पूर्वक प्रयोग की जासकती है।

इन्ट्रावल सोडिम

(Intraval Sodium)

परिचय—यह रवेदार श्वेत वर्ण का जल में घुलनशील चूर्ण होता है जो वार्बीट्रेट श्रेणी की एक औषधि का रूपान्तर है।

गुण:—शिरा मार्ग द्वारा जब किसी को बेहोश करना होता है तब इसका प्रयोग करते हैं। बड़े शल्यकर्म करने से पूर्व पूर्ण बेहोशी उत्पन्न करने के लिए इसको शिरा मार्ग द्वारा प्रयुक्त करते हैं। जब तक हृदय और मस्तिष्क दोनों की ठीक परीक्षा करनी न आती हो या परीक्षा करने के साधन न हों इसको प्रयोग नहीं करना चाहिये। क्योंकि इसके प्रयोग के १० सेकेंड के अन्दर ही रोगी बेहोश होजाता है और भली भांति उसके हृदय और मस्तिष्क को सचेत होने तक बरम्बार देखते रहना चाहिये; ज़रा सी भी मंद गति होने या अवरोध के लक्षण होने पर उत्तेजक उपायों द्वारा रोगी को सचेत करना चाहिये। कभी-कभी असावधानी से अधिक मात्रा देदेने से घातक परिणाम पैदा होगए हैं।

मात्रा एवं प्रयोग विधि:—एक ग्राम औषधि लेकर उसे १० सी. सी. परिस्रुत जल में घोलकर विलियन तैयार करते हैं। इस विलियन में से बालक को १ सी. सी. तथा युवक को २ सी. सी. को शिरा मार्ग द्वारा बहुत ही धीमी गति से चढ़ाकर बिना सुई शिरा में से निकाले उसके बेहोश होने की प्रतीक्षा करनी चाहिये। यदि औषधि का प्रभाव कम दिखाई दे तो बूंद-बूंद औषधि थोड़ी सी और चढ़ाते रहना चाहिये जब तक कि रोगी पूर्ण रूप से बेहोश न हो जाए। सुई का वहीं शिरा में अटके रहने देना चाहिये और शल्य कर्म करने से पूर्व हृदय और मस्तिष्क की परीक्षा कर लेनी चाहिये। लगभग २० मिनट के लिए तो रोगी बेहोश होही जाएगा। बीच में यदि रोगी पुनः सचेत होता दिखाई दे तो बूंद-बूंद करके कुछ मात्रा और अन्दर चढ़ा देनी चाहिये। शल्य कर्मोपरान्त सुई शिरा से बाहर निकाल रोगी के सचेत होने की प्रतीक्षा करनी चाहिये।

चेतावनी—यह एक घातक और खतरनाक औषधि है, अक्सर अधिक मात्रा प्रविष्ट हो जाने के बाद रोगी मर गए हैं। अतः बहुत सावधानी से इसका प्रयोग करना चाहिये।

यूरिया स्टैबिमीन (Urea Stabemine)

यह सुर्मे से जिसका वर्णन पीछे आया है, रासायनिक क्रियाओं द्वारा बनाया जाता है। चूंकि सुर्मा अर्थात् एन्टीमनी के प्रयोग में बड़ी-बड़ी अड़चनें थीं अतः निम्न प्रकार के योग इससे तैयार किये गए।

१—सोडियम एन्टीमनी टार्ट्रेट
२—यूरिया स्टैबीमिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३—पोटैशियम एन्टीमनी टार्ट्रेट

४—स्टैबीमीन ग्लूकोसाइड

५—स्टीबोसान या बांन हिडन

इन रोगों में यूरिया स्टैबिमीन ही अधिक प्रचलित और उपयोगी सिद्ध हुई है। डाक्टर उपेन्द्रनाथ ब्रह्मचारी जी इसके आविष्कर्ता हैं।

गुण—कालाजार की यह सर्व श्रेष्ठ और अद्वितीय औषधि है। कालाजार मलेरिया की तरह हठीला पारी से आने वाला ज्वर होता है, जिसमें प्लीहा अत्यन्त बढ़ जाती है, और पहले कठोर बाद में पिलपिली हो जाती है, शरीर पीला और निस्तेज हो जाता है। जहां रक्त परीक्षा सम्भव न हो वहां तो इसी प्रकार इसकी परीक्षा होती है, तथा यह कि कुनैन के अति प्रयोग से भी यह नहीं छूटता। ऐसी दशा में यूरिया स्टैबीमीन के शिरान्तर्गत इन्जेक्शन से वह एक दम ठीक होता चला आता है। और ८–१० इन्जेक्शन देने के उपरान्त रोग निर्मूल हो जाता है।

इसके अतिरिक्त जिन जिन रोगों का लाभ करता है जैसे श्लीपद इत्यादि उसे भी यह दूर करता है।

मात्रा—०.०१ ग्राम से ०.३ ग्राम तक, बाजार में यह बंद शीशियों में निम्न परिमाणों में मिलती है ०.०१ ग्राम, ०.०२५ ग्राम, ०.०५ ग्राम, ०.१० ग्राम, ०.२० ग्राम ०.२५ और ०.३ ग्राम।

इनमें से प्रथम तीन (०.०१, ०.२५, .०५ ग्राम) को १ सी. सी. परिस्रुत जल में, और ०.१, ०.१५ को २ सी. सी., ०.२, ०.२५ को तीन सी. सी. जल में घोल कर प्रयोग करना चाहिये। अथवा औषधि का २ प्रतिशत का विलियन बना लेना चाहिये, तथा सप्ताह में दो बार शिरा मार्ग द्वारा इन्जेक्शन लगाना चाहिए। इस प्रकार विलियन बनाकर लगाने से हानि कम होती है।

इसकी गोली को परिस्रुत जल में डालकर घुलाने के लिए उसे गरम नहीं करना चाहिए, गर्म करने से वह विषैला बन जाता है। इस हेतु पहले परिस्रुत जल को गरम करके तब गरम जल में गोली डाल कर हिलालें। शीतल होने पर ही अत्यन्त सावधानी से शिरा में इन्जेक्शन लगावें, यदि जरा सी भी दवा शिरा से बाहर निकल पड़ेगी तो महाकष्ट, प्रदाह, शोथ और जलन होने लगती है, ऐसी दशा में एण्टीफ्लेमिन जैसी वस्तु लगाकर या बोरिक से सेंकना चाहिए।

निषेध—दुर्बल, कास, अतिसार, हृदयरोग से पीड़ित, उदर एवं फुफ्फुस रोग युक्त कालाजार के रोगियों में इसके प्रयोग से कास और भी बढ़कर फुफ्फुस प्रदाह ब्रांकोनिमोनियां होकर मृत्यु की सम्भावना रहती है।

ई० सी० सी० ओ०

इसका पूरा नाम Ethy leasters of Hydno corpicacid with Comphor and creosote in Oil (इथाईल ईस्टर आफ हिडना कार्पिक एसिड विद केम्फर एण्ड क्रीओट इन आयल) है।

इसका निर्माण निम्न प्रकार से होता है—

१—इथाइल ईस्टर आफ फेटी एसिड्स आफ हिडनाकारपस आयल १ सी. सी.

२—क्रिओजोट (द्विवार परिस्रुत) १ सी. सी.

३—कपूर शुद्ध १ ग्राम

४—जैतून का तैल अत्यन्त शुद्ध २½ c. c.

मात्रा—उपरोक्त के मिश्रण को ही ई. सी. सी. ओ. कहते हैं। इसमें से प्रति सप्ताह दो बार ·०२५ सी. सी. से आरम्भ करके प्रति बार ०·२५ सी. सी. बढ़ाते हुए २ से ५ सी. सी. तक ले आते हैं या जब तक कोई ज्वर लक्षण अथवा स्थानीय लक्षण न पैदा होजाए देते रहते हैं।

मार्ग—मांसान्तर्गत विधि से देना चाहिए।

गुण—कुष्ठ रोग के लिये यह सर्वोत्तम औषधि मानी गई है, परन्तु धीरज के साथ इसे कई वर्ष तक निरन्तर प्रयोग करते रहना पड़ता है, इसके प्रयोग से कुष्ठ की गुल्झड़ गांठे नर्म होकर शोथ और सभी वाह्य शोथ विलीन हो जाती है, नवीन रोग ६ मास में ही जाता रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि यह योग तुबरक तैल (चालमोंगरा तैल) से बनता है अतः कुष्ठ में प्रयुक्त होने के लिए इसके और भी प्रकार के इन्जेक्शन आते हैं उनके भिन्न-भिन्न नाम हैं, प्रयोग प्रायः एक से ही हैं।

१-सोडियम चावलमूग्रास या सोडियम गाईनाकार्डेट। इनको २ या ३ प्रतिशत विलियन में बनाकर प्रयोग किया जाता है।

२-इथाईल चावलमूग्रेट—मांस पेशीगत १ सी. सी.

३-सोडाई हिडनोकार्पस या एलीपाल-इसका ३ प्रतिशत का विलियन मांसपेशीगत या अधस्त्वगीय देते हैं। सप्ताह में दो बार।

मात्रा—०·५ सी. सी. से बढ़ाकर ५ सी. सी. तक ले आते हैं।

४-स्नटोलेपराल, उपरोक्त का ही रूपान्तर है।

अर्गट (Ergot)

हम पीछे अर्गट का एक योग दे आये हैं, तीव्र, मध्यम लघु विषैले योग बहुत से मिलते हैं, परन्तु सदैव किसी विश्वस्त कार्यालय की ही बनी यह दवा प्रयोग करनी चाहिए। इसका प्रभाव सदैव गर्भाशय को संकोचन और जो भी गर्भाशय में हो उसे निकालने का होता है। कभी भी प्रसव पूर्व और जब तक कि गर्भाशय मुख न खुला हो इसका व्यवहार नहीं करना चाहिए। शरीर के किसी भी भाग से यदि रक्त आता हो तो भी इसका प्रयोग करके देखना चाहिये। गर्भवती को इसका सेवन निषिद्ध है।

मुख्यतया इसका व्यवहार प्रसवोपरांत होने वाले रक्तस्राव के लिए अचूक है। इसके अनेकों योग बाजार में मिलते हैं।

१-अर्गएटनीन १ सी. सी. में १।१०० ग्रेन औषधि होती है।

२-अगामिन, अर्गोमिन।

३—अर्गुटिन Ergutin।

४—अर्गोटाक्सीन।

५—डीहाईड्रो अर्गोटामिन (१ सी. सी. में १ मिलीग्राम होता है।)

६—अर्गोमेट्रीन मीलियट १ सी. सी. में ½ मिलीग्राम होता है।

मार्ग—प्रायः मांसपेशीगत, अत्यधिक आवश्यकता पड़ने पर शिरागत, कभी-कभी अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा भी देते हैं।

अर्गट की अन्य मिलने वाली भिन्न भिन्न नामों की दवाएं ये भी हैं।

१-अर्गोमेट्रीन जो कि मांसगत १।२४० ग्रेन से १।१२१ ग्रेन तक देते हैं, शिरागत १।४८० से १।२४० ग्रेन तक देते हैं। यही औषधि अर्गोनवीन, अर्गोटोसीन, अर्गोवेसीन, अर्गोस्ट्रटीन नाम से मिलती है, अर्गोमेट्रीन टार्ट्रेट नामक औषधि भी इसी का रूपान्तर है परन्तु इसका विशेष लाभ शिरःशूल (जो अर्द्धावभेद या सूर्यावर्त के रूप में होकर महाकष्ट दायक होजाता है) में होता है,इसकी मात्रा ०·२५ मिलिग्राम शिरागत होती है। मुख द्वारा भी देते हैं।

अमोनियम क्लोराईड

(Ammonium Chloride)

इसको ५-१० सी. सी. मात्रा में ५ प्रतिशत विलियन का इन्जेक्शन यदि शिरामार्ग द्वारा कामोन्माद Schizophrenics में दिया जाय तो कामोन्माद बहुत कुछ शान्त हो जाता है। साथ में अन्य अवसादक शान्तिकारक औषधियां देनी पड़ती हैं।

ओसमिक एसिड (Osmic acid)

यह ताजा घोल बना कर प्रयोग में लाया जाता है और गुणों में मार्फीन Morphine के समान ही गुणकारी होता है। ९९ भाग परिस्रुत जल में १ भाग ओसमिक एसिड मिला कर उस विलियन में से २-१० बूंद तक अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा इसे देते हैं। जहां पर मार्फीन या अहिफेन का प्रयोग करना हो वहां पर इसको व्यवहार कर सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुण--विशेषकर गृध्रसी Sciatica में तीन-चार इन्जेक्शन से रोग चला जाता है। इसी प्रकार अन्य प्रकार के शूल और अनिद्रा, स्नायुविक उत्तेजनाओं, पीड़ा को यह शान्त करता है। Goitre में भी इसका प्रयोग सुनते हैं कुछ लाभ करता है, पर यह संशयात्मक बात है।

ओवाबेन आर्नाड (Ovabain Arnad)

एक औषधि Strophanthin होती है जो हृदय के कपाट रोगों Mitral Stenosis में जब कि इनको प्रसारित होने में बाधा पड़ती है, दिया जाता है। परन्तु यह भी उस समय जबकि हृदय की प्रमुख औषधि डिजटेलिस प्रभावकारी न उतरे। यहां ओवाबीन आर्नाड को डिजटेलिस के और Strophanthin स्ट्रोफेनथीन के स्थान पर प्रयोग करते हैं। यह स्ट्रोफेनथीन के समान हृदय कपाट गत रोगों में अच्छा कार्य करके नाड़ी की गति को सम और बलिष्ठ कर देता है।

मात्रा--१ सी. सी. से २ सी. सी. तक शिरा या मांसगत देते हैं।

आयोडोफ़थलीन (Iodopthalein)

या Bromoray ब्रोमोरे

इसका दूसरा नाम Iodoray आयोडो-रे है। यह पित्ताशय का विद्युत चित्र (एक्सरे) लेने के पूर्व शरीर में शिरा द्वारा प्रयुक्त कर दिया जाता है। और इसके उपरांत चित्र में वह भाग स्पष्ट दिखाई दे जाता है। इसी अभिप्राय के लिये अन्य निर्माणशालाओं ने अपने-अपने यहां से विभिन्न प्रकार के इन्जेक्शन निकाले हैं उनके कुछ नाम निम्न हैं।

१-ओपेसीन, मात्रा-३ से ३.५ ग्राम ३०-५० सी. सी. परिस्रुत जल में घोल कर। (मे एण्ड बेकर)

२-स्टीपोलेक, (बरो वेल्कम कम्पनी का)।

३-टी. आई. पी. (बूट्स कम्पनी का) इत्यादि।

मात्रा-इसकी मात्रा प्रति पौण्ड शरीर भार पर १/३ से १/२ ग्रेन तक मुख द्वारा देना चाहिए; शिरा-द्वारा कुल ४५ ग्रेन तक दे सकते हैं।

मार्ग--मुख या शिरागत इन्जेक्शन द्वारा।

ओम्नोपान (Omnopon)

यह अहिफेन का अङ्ग है और जहां अहिफेन का प्रयोग होता है वहां इसको भी प्रयोग करते हैं। इसका पर्याय पेन्टोपान, तथा पेपावरेटम है। इसमें ४.७५ प्रतिशत से ५२.५ प्रतिशत तक मार्फीन होती है।

मार्ग एवं मात्रा-मुख द्वारा १/६ से १/३ ग्रेन, १/१२ से १/६ ग्रेन अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा प्रयुक्त होता है।

इसका इन्जेक्शन बनाने के लिए २ प्रतिशत का विलियन २ भाग जल तथा एक भाग ग्लीसरीन में बना कर प्रयुक्त कर सकते हैं।

आयोडम (Iodum)

आयोडीन, कालोडियन तथा प्रोटीन से यह औषधि निर्माण की जाती है।

गुण—इसका प्रयोग आयोडीन के स्थान पर सफलता के साथ किया जासकता है। इसके आतारक्त न्यूमोनियां, जुकाम, इन्फ्लूएञ्जा, क्षय, वातव्याधि, रक्तरोग, उपदंश, सन्निपातावस्था में यह अपनी अच्छी क्रिया करता है।

मात्रा-२ प्रतिशत विलियन का १० सी. सी. से २० सी. सी. तक शिरा मार्ग द्वारा प्रयोग होता है।

कोलक्ट्रीन (Cholectrin)

मात्रा-५ सी. सी. से १० सी. सी. तक कभी-कभी जैसी आवश्यकता हो। मुख द्वारा भी ०.५ ग्राम दिन में २-३ बार देते हैं।

गुण-यकृत के कार्य को चालू करती है। जब यकृत अपना कार्य ठीक नहीं करता, खाई हुई वसा, घी चर्बी का ठीक-ठीक आत्मीकरण नहीं होता, मलबद्धता बनी रहती है। पित्त प्रणाली की शोथ बनी रहती है और पित्ताशय शोथ के कारण पित्त चालू होकर आंतों में नहीं उतरता तब यह अपना कार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करती है। क्रोम को भी उत्तेजित करती है। इसके प्रयोग से आमाशयिक रस Hydrochloric acid का निर्माण होकर अन्न पाचन ठीक होता है।

मार्ग–शिरामार्ग Intravenously दिया जाता है।

कैम्फर (कपूर) Camphor

कपूर का प्रयोग इन्जेक्शन द्वारा प्रायः सभी चिकित्सक करते हैं। इसका विशेष गुण हृदय को बल देने का होता है। सामान्यतया हैजे में तो इसे उस समय प्रयोग करना ही पड़ता है जब शीतांग होकर हृदय को अत्यधिक गिरी दशा से उठाना अभीष्ट होता है। आवश्यकता पड़ने पर एक-एक दो दो घंटे बाद प्रयोग करते रहने से रोगी को बल मिलता चला जाता है। किसी भी रोग में जब शीतांग होकर अथवा बिना शीतांग के भी हृदय गिर रहा हो तापमान कम होगया हो तुरन्त कैम्फर का प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह कीटाणु नाशक, पीड़ा और आक्षेप को दूर करने में भी प्रसिद्ध है। जहां हृदयावरोध होने का भय हो, नाड़ी लुप्त होने को हो इसे अवश्य प्रयोग करना चाहिये। निमोनिया, मंथर, मौक्तिक ज्वर, श्वास, हिक्का, तथा अन्य फुफ्फुस सम्बंधी रोगों में यह गुणकारी है और प्रयुक्त होता रहता है।

मार्गः—त्वचान्तर्गत तथा मांस पेशीगत प्रयुक्त होता है।

मात्राः—निम्न प्रकार के विविध प्रयोगों का १ या २ सी. सी. प्रयुक्त करें।

१–एक सी. सी. जैतून के तैल में १ ग्रेन कपूर
२–एक " " ३ ग्रेन "
३–एक " " " ६ ग्रेन "

जैतून के तैल के अतिरिक्त यह ईथर में भी विघुलित हुआ आता है, जो हृदय को और भी अधिक बल देने में सहायक होता है। १ सी. सी. ईथर में १ या दो ग्रेन कपूर होता है। इसको और भी अधिक तीव्र और प्रभावशाली बनाने के लिए इसी में कस्तूरी (मुश्क) भी मिलाली जाती है इसको कैम्फर एण्ड मुस्क इन ईथर कहते हैं, इसकी भी एक या दो सी. सी. प्रयुक्त होती है।

इसके लिये विविध योग विभिन्न नामों से मिलते हैं कुछ के नाम और गुण नीचे देते हैं।

१–कार्डियाजोल Cardiazol—यह जल में घुलनशील योग है, और कपूर से अधिक प्रभावशाली है विशेष कर हृद्रोग में तो कपूर से अधिक गुणकारी है, इसको मुख द्वारा, अधस्त्वगीय फिर अन्तर्शिरीय विधि से प्रयुक्त कर सकते हैं। यह श्वास संस्थान को भी उत्तेजित करता है। हृद्रोग हृत्मांसशोथ जन्य हृदयावरोध में यह प्रसंशनीय कार्य करता है। १ सी. सी. अधस्त्वगीय विधि से।

२–कार्डाटोन Cardatone—सोडियम केम्फोसल्फेट का १० प्रतिशत जलीय घोल होता है। इसके प्रयोग से श्वास और हृद्रोग की गति को नियन्त्रण और बल प्राप्त है। गैस द्वारा मूर्च्छा आघात हृदयावरोध में प्रयुक्त होता है।

मात्राः—अधस्त्वगीय विधि से १-२ सी. सी., शिरान्तर्गत विधि से २ सी. सी., मुख द्वारा २५-१०० बूंद जल में मिलाकर।

३–कोरामीन Coramine—आजकल बहु-प्रयुक्त होता है और विशेष लाभ करता है। जल में घुलनशील है। मुख द्वारा, अधस्त्वगीय और शिरा मार्ग द्वारा प्रयुक्त होता है।

गुणः—हृदय और श्वास संस्थान को उत्तेजित करने में अद्वितीय और अचूक इसका प्रभाव इन संस्थानों को उत्तेजित करने वाले केन्द्रों को उत्तेजित करके होता है। विशेष कर हृदयावरोध तथा श्वासावरोध की उन अवस्थाओं में जादू के समान काम करता है जहां विषैली वस्तुओं या वार्बीच्यूरेट द्वारा अवरोध हो गया हो।

मात्राः—इसके २५% प्रतिशत विलियन का १५-३० बूंद तक अधस्त्वगीय मांस तथा शिरागत और मुख द्वारा भी प्रयोग होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४-Cardaphone:—यह भी कार्डिटोन की तरह कार्य करता है और लगभग वही चीज़ है।

इसे अतिरिक्त कुनैन के साथ भी कपूर मिलाकर व्यवहार किया जाता है जैसे—

५-Campho-quinine—इसमें ३ प्रतिशत कुनीन होती है यह फुफ्फुस ज्वर निमोनियां ब्रांकाइटिस, काली खांसी, इन्फ्लुएंज़ा, श्वास तथा श्वास-संस्थान के रोगों में अत्यधिक उपयोगी है।

मात्रा:—प्रति दिन १-३ सी. सी. मांसगत प्रयुक्त करना चाहिये।

कैलसिडिन (Calcidin)

खटिक (कैल्शियम) तथा आयोडीन से बनी हुई यह औषधि संक्रामक रोगों में व्यवहृत होती है। न्यूमोनिया, फुफ्फुसावरणशोथ, चर्मरोग, कास, संधिगत शोथ, शरीर में चूने की कमी और आयोडीन की कमी को पूरा करने के लिये इसका प्रयोग होता है। यह संक्रमण वाले रोगों पर अच्छा प्रभाव करता है, जबकि इनका सम्बंध फुफ्फुस से अधिक हो।

मात्रा—२ सी. सी. से ५ सी. सी. तक मांसपेशीगत।

इसके अधिक प्रयोग से कभी-कभी आयोडीन के विकार उत्पन्न होने लगते हैं, उस समय इसका प्रयोग कुछ समय के लिये बन्द कर देना चाहिए या इसका प्रयोग सर्वथा ही बन्द कर देना चाहिये।

आरथ्राइटीन (बेंगाल इम्यूनिटी)

घुलनशील केसिन को आयोडीन के साथ मिला कर यह योग तैयार किया गया है। केसिन दूध से प्राप्त होता है। इसका प्रयोग संधिगत शोथ, गठिया, आमवात, अस्थिगत शोथ, तथा सुजाक के परिणाम-स्वरूप संधिवात, आमवात, तथा जीर्ण वातज बिकार जो जोड़ों पर हो। इसके समान पाश्चात्य निर्माणशालाओं की बनी हुई आर्थीट्रीन, मे एण्ड बेकर का बना हुआ तथा यात्रेन (बेयर कम्पनी का) आता है।

मात्रा–प्रथम हलके घोल (१ प्रतिशत) से आरम्भ करके क्रमशः १.२ प्रतिशत बढ़ाते हुए ४ प्रतिशत तक आते हैं। लगाने की मात्रा १ सी. सी. रखी जाती है जो मांसपेशीगत लगाई जाती है, जब तक कि प्रतिक्रिया न उत्पन्न होजाय जैसे ज्वर आदि न होने लगें। तब रोग स्वयमेव शान्त होजाता है।

केलसीकोलिन

केल्सियम ग्लूकोनेट और कोहलीन क्लोराईड द्वारा यह औषधि निर्मित होती है, जोकि रेपटकोस कम्पनी की बनी केल्सीनाज़ के समान गुणकारी है। यह समस्त क्षय जन्य दुर्बलता और जहां चूने(केलिशयम) की कमी होती है वहां तथा बालशोष में काम देता है।

मार्ग–इसको दो-तीन दिन के उपरांत मांसगत, या शिरागत बहुत धीरे-धीरे सावधानी से देना चाहिए।

मात्रा–२ सी. सी. से ५ सी. सी. तक।

केल्शियम (चूना)

यह शरीर के प्रत्येक तन्तु में पाया जाता है और प्रत्येक दुर्बल कर देने वाली बीमारी में इसकी पूर्ति की अत्यन्त आवश्यकता रहती है। यहां तक कि आरम्भ से ही चूना शरीर को धारण किए रखने में सहायक रहता है। शरीर के वीर्य में चूने का अंश अधिक रहता है, रक्त के जमने न जमने में चूना ही जिम्मेदार होता है. क्षय, रक्तस्राव, शोष, बालकों के दांत निकलने के रोग, फक्करोग, अस्थिरोग, अनेकों आंतों के रोगों का जन्म इस चूने के अभाव से होता है। बच्चे को, गर्भिणी और दूध पिलाने वाली माताओं दांत निकलने वाले बच्चों, दूध के दांत गिर कर नए दांत जमने, युवावस्था में सहवास द्वारा वीर्यपतन में, शारीरिक परिश्रम, घात-आघात में रोग, दुःख, चिन्ता इत्यादि तथा मासिक-स्राव द्वारा, मलमूत्र, थूक पेशाब द्वारा इसकी निकासी और ह्रास होता रहता है। नित्यप्रति की इसकी आवश्यकता १ ग्राम की है, एक ग्राम नित्य शरीर में मिल जाने पर मनुष्य हर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय तरोताजा रहता है, यह चूना हमको अपने भोजन से ही प्राप्त होता है। दूध अगर सवा सेर के लगभग मिल जाया करे तो एक ग्राम चूना उसमें मिल सकता है।

कभी-कभी शरीर की दशा, चूने को आत्मीकरण करने वाले अंगों में विकार आजाने के कारण तथा विटामिन डी (जिससे चूने के आत्मीकरण को सहायता मिलती है,तथा जिसके कारण चूना शरीर में बंध जाता है) की कमी, धूप का शरीर पर न पड़ना, इन कारणों से भी चूने का अभाव शरीर में होजाता है, तब यह आवश्यक होजाता है कि चूने को मुख द्वारा न देकर शरीर में इंजेक्शन द्वारा प्रविष्ट करके उस कमी को पूरा किया जाय। अतएव वैज्ञानिकों ने असंख्य प्रकार के चूने के योग निर्माण किये, परन्तु उनमें से जो-जो विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं और नित्यप्रति व्यवहार में आते हैं नीचे दिये जाते हैं।

१-कैलेशियम ग्लूकोनेट सोलूशन
(Calcium Gluconate)

यह ५ से १० प्रतिशत तथा २० प्रतिशत तक के विलियन का प्रयोग में लाया जाता है। निर्मोनियां, फुफ्फुसावरण पाक, श्वास, नकसीर, रक्तस्राव, दाद, छाजन, गर्भावस्था, दूध पिलाने की अवस्था, दांत निकलते समय जहां तक चूने के अभाव की दशाएं हैं अधिकतर १ सी. सी. से १० सी. सी. तक या अधिक प्रयुक्त होता है।

५ प्रतिशत का ५ सी. सी. तक को स्कंध के मांस में बिना पीड़ा और सुगमता से दिया जा सकता है इससे अधिक शीघ्र और मात्रा को नितम्ब प्रदेश में मांसगत गहरा लगाना चाहिये, अथवा शिराद्वारा अत्यन्त शनैः शनैः प्रविष्ट करना चाहिये। शिराद्वारा प्रविष्ट करने पर सहसा शरीर में गर्माई और हाथ पांव में गर्माई, मुख में मिठास सा अनुभव होता है जो कुछ सेकण्ड बाद नहीं रहता। कभी भी जल्दी से शिरागत इंजेक्शन नहीं लगाना चाहिये। इंजेक्शन नित्य या दूसरे तीसरे दिन लगाए जा सकते हैं।

२-कैलिशयम क्लोराइड
(calcium chloride)

यह उपरोक्त गुणों के अतिरिक्त अत्यधिक मूत्र[ल] है, मुख द्वारा देने की अपेक्षा शिरा द्वारा ही इसका प्रयोग ५ सी. सी. जल में ०·२५ ग्राम की मात्रा [में] युवक के लिए होता है। यदि शिरा से यह बाहर निकल कर त्वचा के नीचे या मांस में रिस जाय [या] गलती से मांस या त्वचागत लगा दिया जाय [तो] वहां गलावट Necrosis और तीव्र शोथ हो जाता है। अधस्त्वगीय प्रयोग से तो त्वचा में उस स्थान पर भयंकर व्रण होजायगा।

३-कैल्शियम लेक्टेट

यह हल्का होता है, अधिक मात्रा की जरूरत पड़ती है। क्षय के रात्रि स्वेद में यह अच्छा काम करता है।

चूने के प्रयोग के साथ कभी भी कार्बोनेट, सल्फेट या स्प्रिट अमोनियां एरोमेट का प्रयोग नहीं करना चाहिए, इससे चूना अनघुला होजाता है। जब और भी अच्छा प्रभाव देखना हो तब चूने का कोलायड रूप का प्रयोग मांसपेशी द्वारा करना चाहिए। कोलायड केलिशयम को जो अनेकों नाम से बाजार [में] मिलता है प्रयोग करना अधिक गुणदायक होता है। अकेले कोलायड के बजाय इसके साथ विटामिन [डी] भी मिला हुआ मिलता है जो और भी अधिक गुणदायक होता है। जैसे केलसाई आस्टेलीन इत्यादि। इनमें से या अन्य केल्शियम के योगों का प्रयोग सफलतापूर्वक किया जा सकता है। इनको मांसगत लगाना ठीक होता है। अत्यन्त आवश्यकता पड़ने पर शिरा द्वारा भी दे सकते हैं।

इमेटीन केम्फो सल्फेट (बंगाल इम्यूनिटी)
(Ematine Camphosulphonate)

इसमें इमेटीन तथा इसका हृदय पर बुरा असर को रोकने के लिए कपूर का सल्फेट मिला दिया गया है। प्रत्येक १ सी. सी. में १ ग्रेन, प्रत्येक [१] सी. सी. में १।२ ग्रेन इमेटीन होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह भी पीछे वर्णित इमेटीन हा० की तरह गुणकारी है, परन्तु हृदय को दुर्बल नहीं करती।

मात्रा–१/२ से १ सी.सी. तक सप्ताह में २-३ बार।

मार्ग–मांसान्तर्गत या अधस्त्वगीय विधि द्वारा।

हिस्टिडीन (Histidine)

इसी के जोड़ के और योग भी बाजार में मिलते हैं, विशेष उल्लेखनीय बूट्स का हिस्टीडीन और रोची कम्पनी का लेरोस्टीडीन अधिक विख्यात हैं।

गुण––आमाशय प्रदाह, शोथ, आमाशयिक व्रण, विद्रधि, ग्रहणी, अग्न्याशयिक व्रण में ३ सप्ताह तक प्रयोग किया जाता है।

मात्रा––प्रतिदिन ५ सी. सी. की एक एम्पुल को प्रयोग कर देना चाहिये।

मार्ग––मांसान्तर्गत या अधस्त्वगीय

बी. आई. स्टिप्सिस (B. I. Stypsis)

यह वास्तव में कोटारीन हाईड्रोक्लोराईड है, जो प्रत्येक प्रकार के गर्भाशय जन्य रक्तस्राव, अतिरजः, कभी-कभी गर्भपात में अपना विशेष गुण दिखाता है।

मात्रा–१ सी. सी. में १.२ ग्रेन से १॥ ग्रेन तक आवश्यकतानुसार कई बार दिया जासकता है।

मार्ग–चर्मान्तर्गत।

केसीलोमिन (Cacylomin)

इसके मुकाबले की चीज़ साईलोट्रापिन शेरिंग कम्पनी की भी आती है। इसमें केफीन, सोडियम सेलीसीलास, साथ में हेक्सामीन और कोई शून्य कर माध्यम मिलाकर बनाया जाता है। इसका विशेष गुण यकृत में पित्ताशय शोथ, मूत्राशय प्रदाह, एवं पाक, वृक्कशोथ, आमवात, गठिया, शारीरिक पीड़ा स्नायुविक शूल इत्यादि में अच्छा कार्य करता है।

मात्रा तथा मार्ग––शिरागत ५ सी. सी. की मात्रा प्रति दूसरे दिन देते रहना चाहिये जब तक कि स्वच्छ और प्रतिक्रिया में अम्लीय रहे।

डिहाईड्रोकोलीन Dehydrocholin

यह पित्त से बनाया हुआ लवण है जो यकृत और पित्ताशय की गड़बड़ी में जैसे यकृत शोथ, पित्ताशय शोथ, रक्त में पित्त का मिल जाना, तथा यकृत और पित्ताशय की तीव्र शोथ जन्य अवस्था, तथा शोथ जन्य कामला इसी के साथ की और दवा डिकोलीन भी मिलती है।

मात्रा–५ तथा १० प्रतिशत विलियन के १० सी.सी. की मात्राएं आती हैं, तथा २०%. विलियन की ५ सी. सी. की मात्रा आती हैं, इनको अवस्था, आयु और रोग दशा के अनुसार प्रयोग करना चाहिये।

मार्गः––मांसगत तथा शिरागत जैसी आवश्यकता हो।

फेरीक्विनार्सीन (Feriquinarsin)

लौह, कुनीन तथा मल्ल के योग तथा यूरिया के संमिश्रण से यह औषधि बनाई गई है। कुनीन अपना विषमज्वर नाशक, लौह तथा मल्ल रक्तवर्धक शक्ति दायक प्रभाव करते हैं। सभी द्रव्यों का मिला हुआ प्रभाव विषमज्वर मलेरिया, जीर्ण मलेरिया जन्य रक्तहीनता पर अद्भुत प्रभाव दिखाता है। जहां नन्हा बुखार रहता हो वहां भी इसे प्रयोग करके लाभ उठाया गया है।

मात्राः––१ से २ सी. सी. तक आयु रोग और अवस्थानुसार।

मार्गः––स्कन्ध के मांस या नितम्ब के मांस में गहरा इन्जेक्शन लगाना चाहिये। इन्जेक्शन लगाते समय बहुत धीरे धीरे लगाने की ज़रूरत है। प्रति दूसरे या तीसरे दिन इन्जेक्शन लगाया जाता है। देखा गया है कि चातुर्थिक में एक या दो इन्जेक्शन काफी होते हैं, बच्चों को इसी हिसाब से कम लगाना चाहिये।

फाइब्रोलिसिस (बे० इ०) Fibrolysis–

यह थीओसीनामिन और सोडियम सेलीसिलेट का योग है जो कि व्रण के ठीक हो जाने पर बने हुए दाग़ को ढीला करने के लिए, जैसे व्रण–जनित आमाशय मुख प्रसार हेतु, मूत्रमार्ग, गुदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्ग में व्रण से बने खुरंड और दाग से संकोच दूर करने के लिए, अग्न्याशय के मुख प्रसारण हेतु तथा विविध प्रकार के आमवात, संधिशोथ में प्रयुक्त होता है।

मात्रा—१ से २ सी. सी. तक। दूसरे तीसरे दिन मांसगत या अवस्त्वगीय मार्ग द्वारा प्रयोग करना चाहिये। बच्चों को आयु के अनुसार कम दें।

प्रोकेन एड्रेनेलिन [वै. इ.]

(Procaine Adrenalin)

इसकी प्रत्येक सी. सी. में १।३ ग्रेन प्रोकेन तथा १।१२५० ग्रेन एड्रेनेलिन होता है, जिसके कारण शून्यता का समय दीर्घ हो जाता है। इसके समान गुणकारी और योग निम्न नामों से बाजार में मिलते हैं।

१—नोवोकेन सुपरारेनिन (वेयर)

२—कोकेन हाईड्रोक्लोर

३—नोवेकेन, ट्यूटोकेन, नियोकेन

४—इयूकेन, प्लेनोकेन हाईड्रोक्लोराइड।

६—स्टोवेन, ७—प्रोकेन हाईड्रोक्लोराईड।

इनमें एड्रेनेलिन या सुपरारेनिन युक्त योग छोटे मोटे आप्रेशन करने से पूर्व, दांतों को उखाड़ने या दांतों में शल्यकर्म करने से पूर्व, लवण या सौषुम्नान्तर्गत जैसे कष्ट और पीड़ाकर इन्जेकशन लगाने से पूर्व वहां इंजेक्शन लगाकर संज्ञाहरणार्थ प्रयुक्त होता है।

मार्ग मात्रा—त्वगस्तरान्तर्गत् या त्वगध क्षेपण विधि से संज्ञानाश हेतु आधी से २-३ सी. सी. तक प्रयोग करें। यह प्रो० एड्रेनिलीन के लिये तथा अकेले प्रोकेन या निओकेन सदृश योगों के लिये औषधि के ०·५ प्रतिशत से ५ प्रतिशत के विलियन को अपनी आवश्यकतानुसार पिचकारी में भर कर सुई को जैसे अन्दर प्रविष्ट करते जांय त्यों-त्यों औषधि की भी बूंद अन्दर निकालते जांय ताकि तमाम लम्बाई में औषधि फैल जाए।

कुनीन आर्सेनिक कम्पाउंड

इसमें प्रत्येक दो सी. सी. में कुनीन बाईहाईड्रोक्लोराइड ५ ग्रेन तथा सोडियम केकोडाईलेट (मल्ल योग) ३।४ ग्रेन है। इसी के प्रकार की सी. डी. सी. कम्पनी का आर्सीकिन नामक योग आता है। इसका प्रयोग मलेरिया के बाद जीर्णपन को ठीक करने के लिए होता है जहां अकेली कुनीन बेकार साबित हुई हो। एक या दो इंजेक्शन से मलेरिया जाता रहता है

मात्रा—२ सी.सी. की मात्रा आयु के अनुसार नितम्ब मांस में गहरा लगाना चाहिये और फिर आवश्यकता पड़ने पर दूसरे या तीसरे दिन चिकित्सक की अनुमति के अनुसार लगानी चाहिए।

क्वीनोसीन (Quinosine)

यह शुद्ध कुनीन का २५%. का दाहरहित पीड़ा रहित गुण वाला विलियन है जिसको दारुण निमोनिया, इन्फ्लुएञ्जा जन्य निमोनियां, कण्ठ शालूक, आक्षेपिक हृत्कम्प, प्रसवोपरान्त व्रमण आदि के लिए लाभकारी माना गया है। होमवर्ग कम्पनी ने इसके जोड़ की औषधि सालवोचिन बनाई है।

मात्रा मार्ग—२-४ सी. सी. तक मांसान्तर्गत् देना चाहिए और आवश्यकता पड़ने पर ३-४ घंटे के उपरांत पुन: दे सकते हैं। इसके साथ यदि नित्यप्रति केम्फो कुनीन का १-३ सी. सी. तक प्रयोग किया जाय तो इन्फ्लुएंजा-जन्य निमोनियां में अत्यन्त प्रभावोत्पादक होजाता है।

कोडीन फासफेस (codeine phosphes)

यह कोडीन (अहिफेनसार) और फास्फोरस का योग है। यह नशा करती है और मुख द्वारा कास, आमाशयिक पीड़ा, प्रदाह को कम करती है साथ में मधुमेह में, पेशाब में आने वाली शर्करा की मात्रा को भी कम कर देती है। यह इसका प्रमुख गुण है और इसी के लिए इसे प्रयुक्त किया भी जाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण कि यह मार्फीन की तरह इतनी तीव्र पीड़ा नाशक और निद्राकर तो है नहीं, पर कास आदि में यह लाभ अवश्य करती है। क्षय फुफ्फुस प्रदाहजन्य कास में इसे मुख द्वारा प्रयोग करते हैं। अगर ३० बूंद की मात्रा में इसका १'/. का घोल जो चाटने से कास को दूर करता है, अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा प्रयुक्त कर दिया जाय तो यह दस्त पैदा कर देगा। अतः मूत्र की शर्करा कम करने के लिए इसकी १।८ ग्रेन की टिकिया को १ सी. सी. जल में घोलकर अधस्त्वगीय विधि से प्रयुक्त करना चाहिए। यदि इसको निद्राकर मात्रा से कुछ भी अधिक मात्रा में प्रयुक्त किया जायगा तो यह मेरुदण्ड सुषुम्ना को उत्तेजित करके मांस भाग में कंपकपी सी पैदा करने लगता है।

एसीटाईल कोलीन (बी. डी. एच.)

(Acetylcholine)

यह १० प्रतिशत का एसीटाईकोलीन का विलियन है जो सफलता के साथ क्षुद्रांत्र के पक्षाघात, रक्तनलिकाओं का विकार, धमनियों का संकोच धमनियों की अन्तःकला शोथ जिसके कारण रक्त प्रवाह में बाधा पड़ती है, सूर्यावर्त, अस्थिरोग, धमनी शोथ, क्षय जन्य रात्रिस्वेद, मृगी, दृष्टिमांद्य, शाखागत ऐंठन, मलावरोध इत्यादि रोगों में व्यवहार होता है।

मात्रा—०·०१ से ०·६ ग्राम तक प्रतिदिन प्रयोग किया जाता है। इसके ½ सी.सी. के ०·०५ ग्राम के १ सी. सी. के ०·१ ग्राम के, दो सी. सी. के ०·२ ग्राम के एम्पुल आते हैं।

मार्ग–मांसपेशीगत तथा अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा व्यवहार होता है।

एनाहेमिन (Anahemin)

यह यकृत के रक्तवर्द्धक तत्वों का योग जो अन्य यकृतसारों की अपेक्षा अधिक दिनों के अन्तर से प्रयुक्त होता है और मात्रा भी अल्प होती है। इसका व्यवहार घातक रक्तहीनता, तथा अन्य प्रकार के रोग जन्य अथवा शारीरिक विकार जन्य रक्तहीनता, जहां मुखद्वारा यकृतसार लौह आदि निष्फल होजाते हैं, अपेक्षाकृत शरीर की कमजोरी, हृदयगत रोग और शरीर में निस्तेजता, चेहरा पीला और रक्त की कमी के कारण कान्तिहीन रहता है, पाचन–विकार जन्य क्षुधानाश आदि लक्षण रहते हैं, वहां इसका प्रयोग सफलता से किया जाता है। इसके साथ साथ मेरुदंड में स्थिति सुषुम्ना नाड़ी का कुछ अंशों में विनाश आरम्भ होकर सुषुम्ना से सम्बन्धित अन्य केन्द्रों के कार्य में गड़बड़ी पड़ जाती है ऐसी दशा में यह अच्छा प्रभाव दिखाता है।

मात्रा–प्रथम मांसगत दो सी. सी. का प्रयोग करना चाहिए, फिर चौदह दिनों के अन्तर से १-१ सी.सी. प्रयोग करते रहना चाहिये और प्रति १४ दिनों बाद लगाते रहना चाहिये, जब तक कि रक्त का परिमाण शरीर में पर्याप्त होजाय।

यह स्मरण रखना चाहिए कि यह यकृत का ही योग है, किसी-किसी को इससे shock तथा ऐसे लक्षण पैदा होजाते हैं जिसमें रक्तभार घट जाता है, शरीर सुस्त होकर एक प्रकार की बैचेनी सी होजाती है, जहां इन्जेक्शन लगाया गया है। वहां शोथ और ज्वरादि लक्षण हो जाते हैं। ऐसी दशा में एड्रिनैलिन का उपयोग करना चाहिए, अथवा इसको लगाने से पूर्व एक इन्जेक्शन एड्रिनैलिन का लगा देने से ये उपद्रव नहीं हो पाते। जब यह सात्म्य न पड़े तो मुख द्वारा यकृत का अन्य प्रयोग देना चाहिए।

कण्ट्रामीन (Contramine)

यह गन्धक से बनाई जाती है और व्रणमेह सुजाक तथा उसके द्वारा उत्पन्न पुराने उपद्रवों के निवारण करने में अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसके द्वारा ठीक होने वाले रोगों में संधिवात गर्भाशय मुखशोथ और पाक, सुजाक जन्य कुरहा (Gleet) मूत्रमार्ग प्रदाह, कटिशूल, आमवात, स्नायुविक शूल ये उपद्रव यदि सुजाक जन्य हों तो अति शीघ्र लाभ होता है। इसके अतिरिक्त धातुजन्य विषैला प्रभाव,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्टिमांद्य, मुखपाक आदि संक्रामक और विषप्रधान रोगों में यह व्यवहृत है। रक्तविकार में यह प्रयोग किया जाता है। यदि स्त्रियों में पूयमेह होने के उपरांत गर्भाशय सम्बन्धी कुछ विकार आगए हों तो उनके लिये भी यह अत्यन्त हितकर है।

मात्रा तथा मार्ग—सदैव मांसपेशीगत (नितम्ब प्रदेशीय) इसको ०·०२५ ग्राम तक एक या दो सी. सी. में प्रयोग करना चाहिए। कभी भी इसे शिरा मार्ग द्वारा नहीं देना चाहिए।

डेक्स्ट्रोज़ (औषध रूप)
(Dextrose)

यह और ग्लूकोज लगभग एक समान गुण वाले होते हैं। जहां पर हृदय को और शरीर को बल देना हो, पाचन विकार हो, शरीर पोषण भली प्रकार नहीं हो रहा हो, शरीर में दुर्बलता हो, रक्त में अम्लीयता होगई हो, आंत्रप्रदाह, ज्वर जन्य बैचेनी, घबराहट, श्वास आदि में तथा किसी घातक रोग में सहसा शरीर बल क्षीण होरहा हो इसका व्यवहार किया जाता है।

इसको लगभग प्रत्येक रोग में रोगी का चित्त शान्त रखने के लिए हृदय को बल देने के लिए जब रोगी को मुख द्वारा भोजन नहीं दिया जाता तब उसे शिरा या मांस या त्वचा स्तरान्तर इसका विलियन दिया जाता है। इसके प्रयोग से एक विशेष बात यह होती है कि रोगी को पेशाब साफ खुलकर आता है।

मार्ग—ग्लूकोज और डेक्ट्रोज को गुदा मार्ग, मांस मार्ग द्वारा, तथा शिरागत देना चाहिए।

मात्रा—गुदा मार्ग द्वारा १ औंस ग्लूकोज १। सेर पानी में मिलाकर वस्ति द्वारा चढ़ाया जाता है।

मांसगत-१=॥ प्रतिशत का विलियन अधिक से अधिक २० सी.सी. तक देते हैं।

शिरा द्वारा १० प्रतिशत से २५ या ५० प्रतिशत तक का विलियन १०-२०-५० सी. सी. तक दे देते हैं। यह जैसी अवस्था और आवश्यकता हो, उसी के अनुसार इसको प्रयुक्त करते हैं।

ग्लूकोज़ के साथ अन्य औषधियां मिलाकर उनका विलियन बनाया जाता है और उनको इन्जेक्शन द्वारा प्रयोग करते हैं। अथवा बहुत से सीरम केल्शियम इत्यादि द्रव्यों को भी ग्लूकोज द्रव में घोल कर देने से उनकी शक्ति बढ़ जाती है तथा रोगियों को अधिक कष्ट नहीं होता।

कैफीन सोडियम बेंज़ोएट
(Caffein SodiumBenzoate)

बराबर वजन में कैफीन और सोडियम बेंज़ोएट मिलाकर बनाया जाता है। इसमें १७%. से कम और ५०%. अधिक कैफीन नहीं होती तथा ५०%. से कम और ५३%. से अधिक बेंज़ोएट (सोडियम) नहीं होता। उसका विशेष गुण स्नायु मण्डल पर शान्तिस्थापक सा पड़ता है। वैसे हृदयोत्तेजक केन्द्रों पर शान्तिकर होता है। हृदयावरोध निमोनिया, हृदयावरण शोथ, सर्वाङ्ग शोथ, स्नायुविक पीड़ा को दूर करता है। वैसे इसकी क्रिया सोडियम सैल सिलास की तरह होती है।

मात्रा—२ से ५ ग्रेन तक १ या २ सी. सी. परिस्रुत जल में घोलकर, आवश्यकतानुसार अधस्त्वगीय, मांसान्तर्गत, शिरान्तर्गत विधि से प्रयुक्त करना चाहिये।

इसके अनेकों रूपान्तर मिलते हैं जैसे—

१—कैफीन क्लोरल—रेचक, पीड़ा निवारक, आमवात, गृध्रसी, कब्ज़ इत्यादि में अधिक लाभदायक है। ३ से ८ ग्रेन तक १-२ सी. सी. जल में घोलकर प्रयोग करें। त्वगधः विधि से।

२—कैफीन एट सोडी सेलीसीलास—शिरःशूल निवारक परन्तु अनिद्राकारक (इसमें कैफीन ५ भाग सोडा सेलीसीलास ६ भाग, जल १० भाग) होता है। २-५ ग्रेन तक त्वगधः विधि से दें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३-आईडो केफीन—पर्याय सोडियम केफीन आयोडीन, हृदय जन्य शोथ तथा फुफ्फुसावरण शोथ में मूत्रकारक है। श्वास में लाभ करता है। २-१० ग्रेन तक दें।

कोआग्यूलेन (Coagulen)

यह रक्त से बनाया जाता है, जिसमें थ्राम्बीन और थ्राम्बोसाइटीन दोनों तत्व होते हैं। इसका प्रयोग रक्त को स्रवित होने से रोकने के लिये अथवा रक्त की जमने की शक्ति बढ़ाने, रक्तस्राव रोकने के लिए चाहे वह शरीर के अभ्यान्तरिक भाग से हो रहा हो चाहे बाह्य भाग से हो, आमाशय, गर्भाशय, नकसीर बवासीर इत्यादि और शल्यकर्म से पूर्व देने पर शल्य कर्म करते समय रक्त का प्रवाह कम होता है। प्रसवोपरान्त देने से रक्त भी कम बहता है। सारांश यह कि जहां रक्त के प्रवाह को रोकना अभीष्ट हो वहां इसका प्रयोग करना चाहिये।

मात्रा—साधारणतया १ से ५ सी. सी. तक एवं विशेष आवश्यक दशा में १० सी. सी. तक प्रयुक्त किया जा सकता है।

मार्ग—अधस्त्वक, मांसगत, शिरागत तीनों विधियों से यह दी जासकती है।

कोटार्नीन हाईड्रोक्लोराईड (Cotarnine hydrochloride)

यह नार्कोटीन के क्षारोद का लवण है और Hydrastine के समान कार्य करता है। विशेष कर गर्भाशय से होने वाले रक्तस्राव को रोकता है। कभी-कभी मूत्र नालिका में सलाई प्रयोग करने के उपरान्त रक्तस्राव होने लगता है, यह उसको भी बंद करने में विशेष महत्व का है। यह गोली के रूप में आता है। रक्तस्राव आंतरज: अधिक मासिक धर्म इत्यादि में विशेष गुणप्रद है।

मात्रा—१।४ ग्रेन की एक गोली लेकर उसको १५-२० बूंद परिस्रुत जल में मिलाकर अधस्त्वगीय देने से काम होजाता है।

कार्बोकोल (Carbachol)

इसका प्रधान गुण आन्त्रशैथिल्य, शल्यकर्म के उपरांत उत्पन्न मूत्र तथा मलावरोध, आक्षेपिक हृत्कम्प, दृष्टिमांद्य, हृद्रोग जन्य हाथ पांव की शोथ, अभ्यान्तरिक तनावट का रोग, हृदय की दुर्बलता आदि रोगों में इससे लाभ होता है।

मात्रा एवं मार्ग—०.२५ मिलिग्राम प्रति सी. सी. का एक बार में प्रयोग करना चाहिए। मांस तथा त्वगध:गत। इसे शिरागत कभी नहीं देना चाहिए, नहीं तो हृदयावरोध उत्पन्न करता है।

इथेनोलामाईन ओलियेट (Ethanolamine oleate)

यह शिराओं के कहीं कहीं पर कठोर होकर फूली हुई स्थिरदशा (Varicose veins) में प्रयोग किया जाता है।

मार्ग मात्रा—शिरा जिसमें शोथ हो उसमें इसको बहुत धीरे-धीरे प्रविष्ट करते हैं और फिर उस भाग पर पट्टी बांधकर लपेट देते है। शिरा से बाहर औषधि आजाने पर बहुत पीड़ा होती है।

कोलीन हाइड्रोक्लोराइड (Choline hydrochloride)

कुछ शारीरिक अवयवों के सारों में यह तरल रूप में आता है, तथा यह कुछ वनस्पतियों जैसे Ergot में से भी लिया गया है। खरगोश, कुत्ते और बिल्ली की आंतों को धोकर भी यह प्राप्त किया गया है। इसकी उपस्थिति से आंतें ठीक कार्य करती रहती हैं।

राजयक्ष्मा में १।२ ग्रेन की मात्रा में सफलता से व्यवहार किया गया है। इसके प्रयोग से ज्वर कम हो जाता है, भूख बढ़कर शरीर भार बढ़ने लगता है। जब इसको केलिशयम के साथ प्रयुक्त किया जाता है तब और भी अधिक गुणकारी प्रभाव पैदा होजाता है। उसकी विधि है कि केलिशयम ग्लूकोनेट १० प्रतिशत और कोलीन हाईड्रोक्लोराइड ११२० ग्रेन. इनका मिश्रण केलिशनाल के नाम से विख्यात है, इसके इन्जेक्शन सप्ताह में दो बार देते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आंत्रघात में यह अच्छा कार्य करता है जब कि शल्यकर्म के उपरांत आंतों का कर्म नष्ट होगया हो, शल्यकर्म के उपरांत जो कि आंतों पर किया जाता है, आध्मान और पीड़ा को शान्त करने के लिए भी इसका प्रयोग करते हैं। इसका मांसान्तर्गत ही प्रयोग करना चाहिए।

१-एसीटाईल कोलीन का वर्णन पीछे कर आए हैं जो क्षय जन्य रात्रि स्वेद को रोकता है और सदैव मांसगत देना चाहिए।

२-सोडियम कोलेट का ०·०५ से ०·१ ग्राम तक घोल में विलियन बनाकर त्वगधः प्रयोग, धमनी अतिसंकोच्य में लाभ करता है।

कांगोरेड (Congo-Red)

यह रक्तावरोध के लिए चाहे कहीं से भी रक्तस्राव होरहा हो, प्रयोग किया जाता है और अधिक गुणदायक सिद्ध हुआ है। ५ से १० सी. सी. तक इसका ०·१ प्रतिशत का घोल प्रयुक्त होता है।

मार्ग—शिरान्तर्गत प्रयोग करें।

क्राईसलबीन (Crisalbine)

यह स्वर्ण तथा सोडियम थियोसल्फेट के [illegible] से बनाया गया है। इसका दूसरा नाम भी से रोक्राईसीन भी है। इसका प्रयोग छाती और फेफड़ों के क्षय में अत्यन्त लाभ करता है परन्तु इसको प्रयोग करने से पूर्व कुछ दशाओं का ध्यान कर लेना चाहिए। क्योंकि इसके इंजेक्शन के उपरांत कभी-कभी मूत्र में एलब्यूमिन आने लगता है, ज्वर, भार की कमी, तथा आंतों के लक्षण हो जाते हैं। यह प्रतिक्रिया तब होती है जब रोगी को ज्वर के होते हुए इन्जेक्शन लगाए जाते हैं, या जब पहली बार के इन्जेक्शन से ज्वर कम न हुआ हो और नवीन इन्जेक्शन लगाया गया हो। आरम्भिक रोगियों में इससे बहुत लाभ होता है, थूक में से जीवाणु नष्ट होजाते हैं, ज्वर कम होकर शरीर भार बढ़ जाता है। इसमें केवल मात्रा का ही नियंत्रण विशेष महत्व रखता है, अन्यथा रोग और भी उपद्रव युक्त होजाता है। इसको सदैव आरम्भिक दशाओं में ही, या जिनके फेफड़े में रोग जन्य स्थानों की हल्की छाया आती हो प्रयोग करना चाहिये।

मात्रा—मात्रा का नियन्त्रण मुख्य बात है। पहले हलकी मात्रा से आरम्भ करें, जैसे कि आरंभ में ०·०५; ०·१, ०·२, ०·३, ०·४, ०·५, ०·६५, ०·७५, और १·० ग्राम देना चाहिऐ। सदैव मांसपेशीगत सप्ताह में दो बार प्रयुक्त करें। इस प्रकार जब कुल मिलाकर ४·५ ग्राम शरीर में पहुंच जाय तब लाभ होता है। कमजोर और ज्वर युक्त रोगियों में प्रथम मात्रा जो दें वह ०·०२५ से ·०५ (२.५ से ४ ५) ग्रेन तक हो।

शिरागत देने के लिए ५ प्रतिशत और मांसगत देने के लिए ३ प्रतिशत जलीय या ५ प्रतिशत तैलीय घोल बनाना चाहिए। आलग्लास पिचकारी तथा प्लाटिनम की सुई का व्यवहार इसलिए करना चाहिए कि औषधि धातु पर भी क्रिया करती है। और इन्जेक्शन प्रातःकाल ही देना चाहिए। सदैव मूत्र की परीक्षा करें और ज्वर न होने दें।

उपरोक्त के समान अन्य योग निम्न हैं।

मायोक्राईसीन (Mayocrisin)—

इसकी प्रारम्भिक मात्रा ०·०१ ग्राम से बढ़ाते हुए ०·०५, ०·१, ०·२ ग्राम तक ८-१० इन्जेक्शनों में आजाना चाहिए।

सोलगेनाल—

क्षय में लगाते हैं। इसमें ३६·५ प्रतिशत स्वर्ण होता है।

मात्रा—०·००५ से ०·५ ग्राम तक, शिरान्तर्गत मार्ग द्वारा बहुत सावधानी से बढ़ाते हुए देनी चाहिए। इसके इन्जेक्शन सप्ताह में एक या दो बार देने चाहिए।

सोलगेनाल बी.—

यह स्वर्ण और शर्करा का योग है। इसकी मात्रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत ही सावधानी से बढ़ाई जाती है। भारतीय रोगी को निर्धारित मात्रा का १।४ मात्रा देना चाहिए। यदि इससे ज्वर आदि उपद्रव न हों तो मात्रा को बहुत सावधानी से बढ़ाना चाहिए। यदि मात्रा का बहुत सोच-विचार कर काबू में नहीं रखा जायगा तो तीव्र प्रतिक्रिया होकर रोगी की दशा बिगड़ सकती है।

मात्रा-०·००५ से ०·५ ग्राम तक अधस्त्वगीय और मांसपेशीगत दे सकते हैं।

साईक्लोनाल सोडियम (Cyclonal Sodium)

यह घुलनशील "हेक्सोबार्बिटान" का योग है। और चूर्ण रूप में आता है। प्रयोग करने के लिए इसको सदैव ताज़ा ही घोल रूप में बनाया जाता है। बनाकर रखने के बाद वह घोल फिर बेकार हो जाता है। इसका प्रयोग छोटे मोटे जल्दी होने वाले शल्यकर्म करने के लिए जब रोगी को पूर्णतया बेहोश करना हो तब शिरा द्वारा इसका विलियन प्रविष्ट करके बेहोश किया जाता है। इस प्रकार क्लोरोफार्म के द्वारा होने वाले दुष्परिणामों से रोगी को बचाया जा सकता है परन्तु इसका प्रयोग करना अधिक सिद्धहस्त और पूर्ण जानकार चिकित्सक के ही बस की बात है। क्योंकि जरा भी अधिक मात्रा में इसे प्रयोग कर देने के उपरान्त ही रोगी की दशा बिगड़ जाती है और वह मुश्किल से ही बचता है। अतः प्रथम प्रयोग विधि को समझ लेना और इसके द्वारा बेहोशी उत्पन्न करने की क्रिया देखकर अभ्यास कर लें।

इसकी साधारण विधि यह है कि एक ग्राम औषधि को १० सी. सी. परिस्नुत जल में घोलकर एक १० सी. सी. की पिचकारी में भर लेना चाहिये। रोगी को पूरी तरह से तैयार करके लिटाकर उसके शिरा द्वारा ३ सी. सी. से कम ही कम यह औषधि प्रविष्ट कर देना चाहिये। १५-१८ सेकण्ड के अन्दर रोगी पूर्ण बेहोश हो जायगा, अन्यथा बीस सेकण्ड में तो हो ही जाएगा। अभी सुई को शिरा में ही घुसी रहने दें, और पिचकारी को वैसे ही सुई से सम्बन्धित रहने दें। यदि रोगी को इतनी औषधि से इतने समय में बेहोशी न उत्पन्न हो सके तो पुनः बूंद-बूंद करके बहुत ही धीरे-धीरे और औषधि शिरा में जाने देना चाहिये। रोगी उचित मात्रा अन्दर पहुंचते ही बेहोश हो जाएगा, अब भी पिचकारी सुई में और सुई शिरा में लगी रहने दें, और शल्यकर्म आरम्भ कर दें। शिरा में औषधि प्रविष्ट करने के लिये एक अलग चिकित्सक होना चाहिये। यदि शल्यकर्म करते-करते बीच में ही रोगी को चेतना आने लगे तो और अचेत रखने के लिए उसकी शिरा द्वारा बूंद-बूंद करके और औषधि भर देनी चाहिये। वह पुनः बेहोश हो जायगा। जब शल्यकर्म समाप्त होजाय तब सुई को शिरा से बाहर निकाल लें।

मात्रा – १।२ ग्राम से १ ग्राम तक परिस्नुत जल में विलीन करके शिरा मार्ग द्वारा प्रयोग करें, गुदा द्वारा भी जल में घोलकर चढ़ा देने पर भी बेहोशी हो जाती है।

प्रयोग अभिप्राय - थोड़ा देर के लिये गहरी बेहोशी पैदा करने के लिये।

गार्डनल सोडियम (Gardenal Sodium)

मे-बेकर कम्पनी का फेनोबार्बीटोन नामक औषधि का यह योग है, और इसका प्रयोग स्नायुविक उत्तेजना को शान्त करके निद्राकर गुण के लिए, शिरःशूल, सूर्यावर्त जन्य निद्रानाश को नष्ट करने के लिये, काली खांसी, शिरोरोग तथा चर्मरोग जैसे खुजली इत्यादि में विशेष लाभ करता है। इसके अतिरिक्त मृगी, अपस्मार में उसका दौरा रोकने के लिये भी प्रयुक्त होता है।

मात्रा, मार्ग—यह गोली के रूप और विघुलित रूप दोनों प्रकार का आता है। इसको १ ग्रेन से १।। ग्रेन तक मुख द्वारा और ३ ग्रेन तक मांस-पेशी गत इञ्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

ग्लीसरोफास्फेट कम्पाउंड
(Glycerophosphate Compound)

यह फास्फोरस का योग है और अत्यधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैथुनजन्य या वीर्यस्राव जन्य दुर्बलता, अधिक परिश्रम, मानसिक शोक, भय जन्य दुर्बलता को दूर करने के लिए प्रयुक्त होती है। इसके अतिरिक्त किसी भी अज्ञात कारण से उत्पन्न स्नायुविक दुर्बलता अथवा अनिश्चित कारण जन्य दुर्बलता में यह यदि प्रयोग का जाय तो अत्यन्त हितकर और अत्यन्त गुणदायक सिद्ध होती है।

मात्रा—१ सी. सी. प्रति दूसरे दिन; तीसरे दिन मांसपेशीगत मार्ग से दें।

इसके अधिक प्रयोग से यकृत में बसामय विनाश Fatty-degeneration उत्पन्न होकर ज्वर, आमाशय विकार, उदासी, तबियत का गिर जाना, कामला इत्यादि उपद्रव हो जाते हैं, तब इसका प्रयोग बन्द करके उपद्रवों का प्रतिकार करना चाहिये।

ट्रिनट्रीन (Trintrin)

यह हृदय की पीड़ा Angina Pactoris तथा श्वासगति को ठीक करके दमे में लाभ करती है, जब शिर:शूल हो साथ में वमन का उपद्रव हो इसको प्रयोग करें परन्तु जब हृदयावपीड़न हो तब इसका प्रयोग न करें। ऐसे समय में एमाईलनाईट्रेट सुंघा दें।

मार्ग एवं मात्रा—मांस एवं अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा १/२५० से १/१०० ग्रेन तक १ सी. सी. परिस्रुत जल में।

चावल मूगरा का तैल (तुवरक तैल)

(Chaulmoogra oil)

आयुर्वेद में तुवरक (चालमूगरा) की प्रशंसा कुष्ठ निवारणार्थ अति विस्तार से की गई है। इसकी मज्जा और तैल का उपयोग मर्दन और भक्षणार्थ किया जाता है। सुलभ और सस्ती होती हुई भी यह औषधि कुष्ठ में अनुपम कार्य करती है।

प्रयोगार्थ इसके मुख्यतया दो चार भेद ही हैं वैसे पीछे ई. सी. सी. ओ. औषधि के अंतर्गत यथेष्ट लिख दिया है, वह चालमूगरा का ही योग है। यहां केवल दो ही भेद दिये जाते हैं।

(i) कोलोविएसिस चालमूगरा—चर्मरोग और प्रधानतया कुष्ठ के लिए इसका प्रयोग होता है। २ सी. सी. और ५ सी. सी. की एम्पुल आती है। जो अधस्त्वगीय विधि से प्रथम १ सी. सी. से आरम्भ करके ११ दिन के अन्तर से प्रत्येक बार आध सी. सी. बढ़ाते जाएं। बढ़ाते बढ़ते ५ सी. सी. तक ले जांय। यदि लाभ न हो तो एक मास विश्राम लेकर पुन: यही कोर्स चालू करें। यदि इसी योग का शिरा द्वारा Intrevenously प्रयोग करना चाहें तो १/४ सी. सी. से आरम्भ करें। प्रति तीसरे दिन १/५ सी. सी. बढ़ाते जांए। जब १/२ सी. सी. तक आजाए तो रुक जाएं लाभ न होने पर पुन: एक मास के उपरान्त यही कोर्स चालू करें।

(२) फारमोसल चालमूगरा—कुष्ठ और पुराने चर्म रोगों में व्यवहृत होता है। वैसे विशेष कर कुष्ठ में दिया जाता है, क्षय में भी प्रयुक्त होता है।

मात्रा—१ सी. सी. इसको अधस्त्वगीय, मांसगत तथा शिरान्तर्गत विधि से १-१ दिन के अन्तर से प्रयोग करना चाहिए।

टी. सी सी. ओ. (T. c. c. o.)

इसमें ४ औषधियों का समावेश है-तारपीन, कपूर, क्रिओजोट तथा जैतून का तैल। यह कालाजार ज्वर परीक्षण एवं चिकित्सा हेतु प्रयोग में लाई जाती है। जहां पर कालाजार के रोग की परीक्षा के सही-सही निदान जानने का उपाय नहीं होता है वहां पर इसके दो इन्जेक्शनों का प्रयोग करके देख लेना चाहिये, यदि ज्वर घटने लगे तो कालाजार समझना चाहिए। चिकित्सा-हेतु जब Antimony रसाञ्जन द्वारा चिकित्सा विशेष लाभ न करे तो बीच-बीच में टी. सी. सी. ओ. के भी इन्जेक्शन लगाते जाने से अवश्य ही लाभ होजाता है। इसके अतिरिक्त मलेरिया एवं प्लीहोदर में भी यह लाभ करता है।

इसकी मात्रा ५ बूंद से १५ बूंद तक है और यह मांसान्तर्गत नितम्ब के गहरे भाग में दिया जाता है। इसके सेवन से रक्त में श्वेतकण W. B. C. की संख्या एवं क्रिया कुशलता की वृद्धि होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ट्रीपन ब्ल्यू (Trypan blue)

इसके द्वारा मस्तिष्कगत शोथ से उत्पन्न पार्किन सोनियन रोग में अत्यन्त लाभ होता है।

मात्रा—इसका १ प्रतिशत शक्ति का विलियन प्रयोग किया जाता है। प्रथम में दो मात्रा १-१ सी. सी. की देते हैं, उसके बाद ३ या ४ मात्रायें दो दो सी. सी. की एक एक सप्ताह के अन्तर से शिरामार्ग Intravenously प्रयोग करते हैं। इस प्रकार ५-६ मात्राओं का एक कोर्स होता है। यदि एक कोर्स से लाभ न हो तो एक माह के विश्राम के बाद दूसरा कोर्स इसी प्रकार का लगाना चाहिये। प्रायः दो कोर्सों में पूरा लाभ हो जाता है। इसको कभी मांस या त्वचान्तर्गत नहीं देना चाहिए।

डियाल (Dial)

यह बार्बेट्यूरिक एसिड का रासायनिक योग है। और नींद लाने के लिये स्नायु एवं ज्ञान-तन्तुओं की उत्तेजना शान्त करने, पीड़ा दूर करने के लिए होता है। जब चित्त अधिक विभ्रान्त हो, नींद न आती हो, किसी भी कारणमस्तिष्क में थकान हो तब इसके प्रयोग से १५-४५ मिनट के अन्दर निद्रा आजाती है जो गाढ़ी और स्वप्नरहित होती है। इस कार्य के लिए तो यह अव्यर्थ समझी जाती है। इसके अतिरिक्त स्ट्रिकनीन, कोकेन और अन्य स्थानीय शून्यता उत्पन्न करने वाले द्रव्यों के उपयोग के उपरान्त जो एक प्रकार के विषैले लक्षण उत्पन्न होजाते हैं उनको शान्ति करने के लिए भी यह उत्तम मानी गई है।

मात्रा—निद्रा लाने के लिए या पीड़ा शमन करने के लिए इसे मुख द्वारा भी देते हैं, वैसे एक एम्पुल २ सी.सी. की जिसमें ०.२ ग्राम औषधि होती है निद्रा लाने, पीड़ा दूर करने के लिए पर्याप्त है। शल्यकर्म के उपरान्त निद्रा लाने, पीड़ा शमन करने के लिए १ या २ एम्पुल, अधिक आवश्यकता पड़ने पर एक साथ दो या तीन एम्पुल भी दिए जा सकते हैं। विषों की शन्ति के लिए ४ एम्पुल तक एक साथ मांसपेशी द्वारा या अधिक शीघ्रता के लिए शिरा द्वारा प्रयोग कर सकते हैं।

डाईमिडीन्स (Diamidines)

यह तीव्र प्रतिक्रिया उत्पादक औषधि है, इसके प्रयोग से कालाजार में निओस्टीबोसान से अधिक लाभ होता है। इसके कई रूप आते हैं, एम एण्ड बी. ७८२, एम एण्ड बी ७४४. एम एण्ड बी ८००। और तीनों ही कालाजार में युक्त होते हैं। इसके प्रयोग करते समय चेहरा एक दम लाल हो जाता है। वमन होकर बैचेनी घबराहट सी होने लगती है। परन्तु यह प्रतिक्रिया एड्रिनैलीन के प्रयोग से शान्त होजाती है। वैसे यह भी स्वयं विषैला प्रभाव करती है। यदि इसके सेवन परान्त स्नायुविक पीड़ा और यकृत विकार हो जाए तो इसका प्रयोग बन्द कर देना चाहिये। और स्नायुविक शूल के लिए विशेष कर बिटामिन बी. कम्प्लेक्स का प्रयोग करें।

मात्रा एवं मार्ग—.२५ से .०१ ग्राम तक अन्तःशिरीय Intravenously देना चाहिए।

डाईगोक्सीन (Digoxin)

हृद्रोगजन्य शोथ में यह अपना प्रभाव मूत्र अधिक लाकर दिखाता है। मूत्र के अधिक आने पर उधर शोथ कम हो जाता है, और इधर हृदय को भी कुछ आराम मिल जाता है। बाजार में यह गोलियों के रूप में मिलता है।

मात्रा—०.०२५ ग्राम से .०१ ग्राम तक परिस्रुत जल में बिलीन कर शिरागत देना चाहिये।

डायूरेटीन (Diuretin)

यह औषधि मूत्र अधिक लाती है, अतः जब जलोदर का शोथ कम करना हो, या वृक्क रोग के कारण शरीर में जल की मात्रा अधिक बढ़ गई हो तथा सर्वाङ्ग शोथ हो, उस समय मूत्र द्वारा यदि उस जलीयांश को निकालना अभीष्ट हो तब इसका उपयोग किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—५ या १० सी. सी. परिस्रुत जल में ८ से १० ग्रेन तक घोलकर शिरामार्ग द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये। यह औषधि अत्यन्त तेज होती है अगर जरा भी औषधि शिरा से बाहर किसी भी असावधानी के कारण निकल आये तो बहुत ही पीड़ा हो जाती है, तथा भयानक उपद्रव हो जाते हैं। शोथ और स्थानीय असह्य पीड़ा का सामना करना पड़ता है। अतः सावधानी से प्रयोग करें।

थायाकोज जन्डूस (Thaicose Zandus)

किसी कारण जब विटामिन बी. का प्रयोग निषिद्ध हो जाता है और उसी के समान औषधि का प्रयोग भी अनिवार्य होता है तब इस औषधि से काम चल जाता है। यह मंथर, निमोनियां, गर्भवती के वमन और अतिसार शल्यकर्म पूर्व और पश्चात आंत्रदोष, सल्फा श्रेणी की औषधियों का विषैला प्रभाव, एवं उसके कुप्रभाव शमनार्थ, अन्न द्वारा पाचन संस्थान का दूषित होना, अन्य औषधियों के विषैले प्रभावों को दूर करने में यह सफलतापूर्वक व्यवहृत होता है। इसके अतिरिक्त Vit. B. विटामिन बी. की कमी को भी पूरा करता है।

मार्ग तथा मात्रा—शिरान्तर्गत विधि से २५ प्रतिशत शक्ति के घोल का १० सी. सी. परिमाण तक प्रयोग किया जाता है।

थिओबिस्मोल (Thiobismol)

यह बिस्मथ और सोडियम के द्वारा निर्मित किया हुआ ऐसा योग है, जिसके प्रयोग से उपदंश जनित विष नष्ट हो जाता है। बिस्मथ के अन्य योगों की तरह यह उपदंश की प्रत्येक दशा में निःसंकोच व्यवहार किया जा सकता है। यदि इसके साथ-साथ मल्ल के योगों को भी प्रयुक्त किया जाय तो स्थाई रूप से लाभ होजाता है।

मात्रा एवं मार्ग—प्रत्येक सातवें दिन मांसगत द्वारा २ सी. सी. प्रयोग कराएं।

थिओ-हिस्टामीन (Thio-Histamine)

यह गन्धक और हिस्टामीन द्वारा बनाया गया है और उपयोग में कन्ट्रामीन के समान गुणकारी है और इसका विशेष व्यवहार मुहांसे, आमवात, व्रण, पूयमेह, गठिया, स्नायुविक शोथ, संधिशोथ, अस्थिगत प्रदाह, आमवातजन्य संधिपाक, हृदयावरोध, चर्मरोग जिनमें बालों की जड़ें पक जाती हैं Seborrhoeic Dermatitis, चर्मान्तर शोथ इत्यादि संक्रमण और पाक के रोगों में विशेष कार्य करता है।

मात्रा—०.००१ ग्राम से ०.००३ ग्राम तक १ सी. सी. में घोलकर मांसपेशीगत। तथा स्थानीय उपचारार्थ प्रलेप भी किया जाता है।

थायोराक्सीन (Thyroxine)

यह कृत्रिम रूप से बनाया हुआ लवण जिसका प्रभाव चुल्लिकाग्रन्थि और कुछ शरीरकी अन्य ग्रन्थियों पर पड़ता है। इसका उपयोग शोथ (जिसमें समस्त शरीर विशेषतः चहरे पर थलथलाता शोथ सा Myxoedema जैसा कि प्रायः चुल्लिका ग्रन्थि के निकाल डालने के बाद होजाया करता है) बौनापन Critinism और चुल्लिकाऽनुपस्थिति अथवा चुल्लिका कार्य निरोध Hypothyroidism, ऋतुनिवृत्योपरान्त Manopause की कुछ अवस्थाओं में होता है।

मात्रा तथा मार्ग—मुख द्वारा ०.२ से ०.८ मिलिग्राम तक, तथा शिरागत विधि से और अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा ०.१ से १ मिलिग्राम तक परिस्रुत जल में घोलकर व्यवहार करना चाहिये। इसके इञ्जेक्शन लगाते समय रोगी की विशेष देख-भाल करते रहना चाहिये।

थायरोक्सीन सोडियम (Thyroxin sodium)

इस प्रकार की औषधियां अत्यन्त उग्र होती हैं और शरीर पर अत्यन्त विषैला प्रभाव करती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः इनकी मात्रा भी कम रखी गई है, चुल्लिका ग्रन्थ के प्रतिनिधि का विशेष रूप से कार्य करती हैं। इसका उपयोग भी पीछे वर्णित थायरोक्सीन के समान, बौनपने, चुल्लिकाऽभावजन्य शोथ, साधारण गलगण्ड में गुणकारी है।

मात्रा मार्ग—१।६४० ग्रेन से १।६४ ग्रेन तक अत्यन्त सावधानी से शिरान्तर्गत प्रति २१ वें दिन दिया जाता है, इस बीच के काल में दूसरी मात्रा देने से उपद्रव पैदा हो जाते हैं।

चेतावनी—इन दोनों योगों तथा अन्य चुल्लिका सारों के इन्जेक्शनों के प्रयोग से वैसे साधारण मनुष्य में कोई विशेष लक्षण सामान्य मात्रा के प्रयोग से नहीं होते, परन्तु जहां मात्रा को बढ़ाया जाता है, वहां तुरन्त ही विषैले लक्षण पैदा होजाते हैं, जैसे नाड़ी का तीव्र होना, वमन, अतिसार, शरीर पोषण वृद्धि, शरीर के वजन की कमी होजाना और दुर्बलता, कृशता होजाना। एक मात्रा से तो कुछ नहीं होता, परन्तु दूसरी मात्रा से यह उपद्रव हो सकते हैं। अतः जहां Thyroxine की व्यवस्था हो वहां पर ही थारोक्सीन सोडियम का व्यवहार करना चाहिए, इसकी मात्रा का सहज निर्धारण प्रत्येक व्यक्ति में कर लें और इसके अनुसार १।३० ग्रेन प्रतिदिन ५-६ दिन में अपने लक्षण व्यक्त कर देते हैं।

चुल्लिका अभाव जन्य शोथ में १।५०—१।३० ग्रेन प्रतिदिन दिया जा सकता है।

निषेध—जहां चुल्लिकास्राव अधिक हो, जब विषैले लक्षण व्यक्त होने लगें, निद्रानाश, भ्रम, मस्तिष्कगत उत्तेजना, जब हृदय उत्तेजित और तीव्र गति से कार्य करता हो। जब शरीर भार कम होरहा हो और त्वचा का तीव्र शोथ वर्तमान हो, इसका प्रयोग भूलकर भी नहीं करना चाहिए।

इसके अन्य प्रयोग थाईरोड के नाम, थाइरोग्लोवेरियन (डिम्बग्रन्थि युक्त) आदि नामों से आते हैं।

थियोफिलीन
(Theophylline)

यह थिओब्रोमीन की तरह है और इसका उपयोग भी तभी करने की आज्ञा है जब कि वृक्क रोग न हो मूत्र का निकास ठीक होता हो और वृक्क ठीक प्रकार से स्वस्थ हों। क्योंकि यह विशेषकर वृक्क के तन्तुओं पर प्रभाव करता है। इसका प्रयोग जहां शोथ जो हृदय जन्य एवं वृक्क रोग जन्य हो, करते हैं, जहां पर वृक्कों का रोग हो प्रथम उसे सुधार लेना चाहिए। इसका प्रभाव थोड़ी देर रहता है बारम्बार प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए, अधिक काल तक प्रयोग करने से निम्न उपद्रवों की संभावना होती है।

१—आमाशय जन्य उपद्रव, वमन एवं अतिसार।
२—स्नायुविक लक्षण-शिरःशूल, सिर में चक्कर भ्रम।
३—इसको प्रति दूसरे तीसरे दिन देना चाहिये और यदि मुख द्वारा प्रयोग करना हो तो सदैव भरे पेट पर दें। उपरोक्त लक्षणों के होते ही प्रयोग बंद कर देना चाहिए।

मात्रा—मुख द्वारा १ से ३ ग्रेन तक।

मांसपेशी द्वारा ०·५ ग्राम १ सी. सी. में विलीन करके तथा शिरा द्वारा ०·२५ ग्राम १० सी.सी. जल में विलीन करके प्रयुक्त करें।

उपरोक्त रोगों के अतिरिक्त यह श्वास में काम देता है। धमन्यति संकोच Arterio-sclerosis हृदय जन्य श्वास (दमा)।

इसका पर्याय इयूफिलीन भी है और यह भी सुनते हैं कि यह Adrenalin की जगह उससे अच्छा कार्य करता है।

पेनिसिलिन (Penicillin)

संसार को जिस आविष्कार ने वर्तमान युग में अपने असंख्य गुणों के कारण चकित कर रखा है वह डाक्टर सर अलेक्जेण्डर फ्लेमिङ्ग महोदय के पेनिसिलीन नामक आविष्कार ने किया है, इसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आविष्कार उन्होंने लगभग १६२६ से ही करना आरम्भ कर दिया, और कहीं १६४६ में जाकर यह पूरबीय देशों में उपलब्ध होने लगी थी। और अब तो संसार में इसका बोलवाला है।

परिचय—विभिन्न प्रकार की पेनिसिलीन श्रेणियों द्वारा उत्पन्न कई प्रकार के अम्लीय पदार्थ Acidic Substances को पेनिसिलीन संज्ञा दी गई है। ये पदार्थ अस्थाई और सोडियम पोटाशियम तथा केलिशयम लवणों के रूप में मिलते हैं।

इसकी शक्ति को इण्टरनेशलन यूनिट्स में व्यक्त किया जाता है। जो कि एक आक्सफोर्ड यूनिट पेनिसिलीन के न० II जी वाले लवण के ०.६ माईक्रोग्राम में होता है।

पेनिसिलीन चार प्रचार के शुद्ध कणों के रूप में प्राप्त हुई है जिसको अमरीका में F. G. X. और K. जिसको बृटेन में i. ii,iii, iv, क्रमशः माना गया है। इनमें से इसके अलग-अलग गुण यद्यपि हैं, परन्तु ii (G) को ही व्यवहार में मान्यता दी जाती है, जिसमें कण रूप में सोडियम या पोटाशियम पेनिसिलीन के ७० प्रतिशित से भी अधिक अंश उपस्थित होते हैं।

रासायनिक गुण—पहिले पेनिसिलीन पीले वर्ण की आती थी जिसमें १० प्रतिशत से ४० प्रतिशत तक शुद्ध पेनिसिलीन होती थी परन्तु शुद्ध पेनिसिलीन निर्मित की जाने लगी है, और उपलब्ध होती है। यह अस्थिर Unstable अर्थात् शीघ्र गुण रहित होजाने वाली अम्लीय Acid है जो केलिशयम या सोडियम के लवण के रूप में आती है। यह जल सामान्य लवणोदक Normal Saline, तथा ५ प्रतिशित ग्लूकोज विलियन में शीघ्र घुल जाती है। इनमें सोडियम लवण विशेषकर अधिक गरमी में, अम्ल, क्षार, तथा भारी धातुओं के योग जैसे नाग, ताम्र, पारद, यशद एनीलीन, एवं हाईड्रोजन पर आक्साईड, तथा पोटाशयम परमेंगनेट के सम्पर्क में आकर नष्ट हो जाता है।

अतः पेनिसिलीन को वायु के संक्रमण, हवा की नमी से बचा कर ठण्डक में रखना चाहिए। १.० c. से नीचे ताप पर यह खराब नहीं होता। निर्माणशालाओं द्वारा बंद शीशियों में प्राप्त औषधि यदि २०° सी से १०° c. तक के ताप में रखी रहे तो दो वर्ष तक खराब नहीं होगी। यदि इसका विलियन बना लिया गया है तो उसको भी जल्दी ही प्रयोग कर लेना चाहिए। बहुत से वायु एवं जल की अशुद्धियों द्वारा भी यह बिगड़ जाता है। इसकी शक्ति भी थाईल तथा इथाईल अलकोहल तथा मेथिलेटिड स्प्रिट एवं अन्य शल्यकर्म में आने वाली स्प्रिट के स्पर्श से नष्ट हो जाती है। सदैव इसको प्रयोग करते समय जल, उबाले जल से शुद्धि इत्यादि करनी चाहिये। यह प्रोकेन हाईड्रोक्लोराईड तथा, सल्फा श्रेणी, तथा उन क्षारोदों के साथ खराब नहीं होता जिनकी प्रतिक्रियात्मक भाव Ph ६ से ७.५ के मध्य है।

अब तो पेनिसिलीन रबड़ की बन्द टोपीदार शीशियों में शुष्क रूप में, तथा मोम तैल में मिला हुआ इन्जेक्शन के लिए आता है। शुष्क औषधि को २५° सी. ताप पर या कमरे के ताप पर रखा जा सकता है जो खराब नहीं होता। यह बात जरूर है कि एक बार विलियन बना लेने के उपरान्त फिर उसको अवश्य ही ठण्डी जगह में रखना, और दो चार दिन के अन्दर-अन्दर प्रयोग कर लेना आवश्यक हो जाता है।

विधि—प्रायः क्रिस्टेलाईन पेनिसिलीन II, (जी) का ही प्रयोग होता है। पहले एक पिचकारी सूई और चिमटी को पानी में उबाल कर शुद्ध करके शीतल होने तक प्रयोग में नहीं लानी चाहिए। अब जितने सी. सी. विलियन बनाना हो, उतना परिस्रुत (पाईरोजन रहित) जल नार्मल लवणोदक या ग्लूकोज का ५ प्रतिशत घोल लेकर पेनिसिलीन के रबड़ को बींध कर उसमें डाल देना चाहिए। पेनिसिलीन घुल जायेगी।। जहां इन्जेक्शन लगाना हो उस स्थान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को भी प्रथक स्प्रिट से शुद्ध करके पुनः शुद्ध उबले जल से पूर्ण रूप से कई बार शुद्ध करके स्प्रिट का असर साफ कर देना चाहिये। जब पेनिसिलीन की रबड़ में पिचकारी की सूई प्रविष्ट करनी हो तो प्रथम रबड़ को अलकोहल के फोये से शुद्ध करके उसको शुष्क होने देना चाहिए। पूर्ण रूप से शुष्क होने पर ही सूई को अन्दर प्रविष्ट करना चाहिए।

रोग निवारक गुण—

यद्यपि पेनिसिलीन को मुख द्वारा भी प्रयुक्त करके लाभ उठाते हैं, और श्वास द्वारा भी, इसको सूंघ कर उतना ही लाभ होता है, परन्तु पाचक रसों के सम्पर्क में आकर यह नष्ट हो जाता है, उधर सब से सरल प्रयोग विधि इन्जेकशन द्वारा ही है, जो अधिकतर मांसगत, शिरागत, सौपुम्नागत फुफ्फुसावरण मध्यगत इत्यादि बिधियों द्वारा प्रयुक्त होती है। शरीर में इन्जेकशन द्वारा प्रयुक्त कर देने के कुछ ही मिनटों के बाद यह अपनी उच्च मात्रा में शरीर में रम जाती है, और फिर यह मात्रा शनैःशनैः कम होने लगती है और यदि वृक्क स्वस्थ हैं तो ३-४ घण्टे में शरीर में पेनिसिलीन थोड़ी ही मात्रा में कहीं कहीं मिलती है।

यह स्मरण रखने की बात है कि पेनिसिलीन में जीवाणु नाशक शक्ति अत्यल्प है परन्तु जीवाणु वृद्धि नाशक शक्ति अत्यन्त प्रबल है। यहां तक कि सल्फा श्रेणियों की औषधियों से एक हजार गुना अधिक शक्ति इस प्रकार की इसमें है।

मात्रा और प्रयोग—रोग एवं दशा के अनुसार इसकी मात्रा निश्चय की जाती है। आयु का विचार, रोग की प्रबलता के सामने प्रायः कम किया जाता है। प्रायः दो विधियों से यह प्रयोग होती है, बारम्बार और लगातार।

बारम्बार (Intermitantly)–बारम्बार में भी जब ३–३ घण्टे के अन्तर से या ६–६ घण्टे के अतर से या १२-१२ घण्टे या प्रति २४ घण्टे पर जब लगाया जाता है, तब ३-३ घण्टे के लिए तो साधारणतया प्रतिबार के लिए पच्चीस हजार यूनिट साधारण और पचास हजार यूनिट से १ लाख यूनिट तक तीव्र दशा में ६–६ घण्टे के लिए प्रतिबार पचास हजार साधारण और एक या दो लाख यूनिट तीव्र रोग में १२-१२ घण्टों में लगाने के लिए प्रति बार एक या डेढ़ लाख या दो लाख साधारणतया और तीव्र रोग में पांच लाख यूनिट तक लगा देते हैं।

चौबीस घण्टे पर लगाने के लिए चार लाख या पांच लाख यूनिट का एक इन्जेक्शन काफी होता है।

इन्जेकशन कंधे या चूतड़ की मांस-पेशियों में अदल बदल कर लगाते हैं ताकि एक ही स्थान पर लगाने से कष्ट न हो।

लगातार Continously—लगातार लगाने के लिए एक या डेढ़ लाख यूनिट को १०० से २५० सी. सी. नार्मल सेलाईन Normal Saline (लवणोदक) में घोल लेते हैं, और एक पिचकारी जिसमें वह भरा रहता है एक रबड़ की नलिका में मुड़ी हुई सूई लगा कर उस सूई को जांघ के मांस भाग में प्रविष्ट करके छोड़ देते हैं, पेनिसिलीन का घोल धीरे-धीरे शरीर में जज्ब होता रहता है। विलियन समाप्त होने के बाद और बिलियन डाल देते हैं। तीन दिन के बाद सूई को निकाल कर दूसरी जांघ में लगा देते हैं, ये विधियां मांस द्वारा प्रयोग करने की हैं शिरा द्वारा प्रयुक्त करने के लिए यदि बराबर लगाना पड़े तो चिकित्सा के आरम्भ में एक इन्जेकशन लगा देते हैं, परन्तु तभी जब रोग तीव्र हो।

उपरोक्त को और भी स्पष्ट करने के लिए यूं समझ लेना चाहिये कि—

बारम्बार - इंजेकशन के लिए तरल का परिमाण कम (१-३ सी. सी. तक) होना चाहिये, साधारणतया २ सी. सी. परिस्रुत जल लेकर ३-३ घण्टे पर देने के लिए ५००० , ६००० यूनिट दें. या ५००००० प्रथम लगा कर फिर २००००० प्रति ६ से १२ घण्टे पर लगाना चाहिये।

अथवा मोम Beeswax, या Arachis oil (तैल विशेष) या, इथाईल ओलियेट Ethyl oleate में

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घुली पेनिसिलीन जो १००००० यूनिट से प्रतिवार कम न हो, प्रति ८-८ घण्टे पर लगा सकते हैं।

लगातार-२५० सी. सी. तरल लेकर उसमें अभीष्ट पेनिसिलीन मिलाकर उसे ड्रिपयंत्र Drip Apparatus में रख कर उसकी सुई को Vastus Lateralis या Pectoral मांसपेशियों में लगा देते हैं, प्रवाह की गति १२० बूंद प्रति घण्टा होनी चाहिये, तब २५० सी. सी. २४ घण्टे तक चालू रहेगी।

इसमें विशेष ध्यान यह रखना होता है कि नलिका घटिया वाली या एसी न हो जो कि पैनिसिलीन के गुणों को नष्ट करदे, बल्कि बिल्कुल पूतिरहित हो। इस विधि में नितान्त पूतिकरण विधि का पालन करने की जरूरत है।

शिरा द्वारा-के लिए रोग के आरम्भ में एक निश्चित अभीष्ट मात्रा का इन्जेक्शन लगा दिया जाता है यद्यपि क्यों कि शिराओं की अभ्यान्तरिक रचना को पेनिसिलीन का गाढ़ा घोल दाह क्रिया द्वारा हानि पहुंचा सकता है अतः घोल भी हलका (५ से १० सी. सी. तक) बनाना चाहिये। इसके लिए आइसोटोनिक सेलाईन या डैक्ट्रोज प्रयोग में लाना चाहिए।

शिरा द्वारा लगातार इन्जेक्शन देने के लिये लगभग ५ लिटर २४ घण्टे में दिया जा सकता है। और इसकी विशेष देखा भाली रखी जाती है कि इस विधि से देने पर कहीं थ्रोम्बोफ्लेबाईटिस शिरावरोध न होजाए।

निम्नलिखित रोगों में यह अत्यन्त प्रभावकारी प्रमाणित हुई हैं—

स्तवक गोलाणुज संक्रमण

(staphylococcal infection)

मस्तिष्कावरणप्रदाह Meningitis, फुफ्फुसपाक मय शोथ Pneumonia empyema, हृदयावरण शोथ Endocarditis, व्रणसंक्रमण-दग्धव्रण wound infection Burns, वृक्क का दुष्टव्रण carbuncle of kindney, व्रण इत्यादि।

मालागोलाणुज संक्रमण—(Haemolytic and anaerobic) streptococcal infection—

मस्तिष्कावरण प्रदाह, प्रसूतिज्वर, प्रसवोपरांत संक्रमण, विसर्प, उदरकलाच्छद प्रदाह, कण्ठशालूक, कर्णपाक, सल्फा श्रेणी की औषधि से भी न ठीक होने वाले विसर्प इत्यादि।

गैस गेग्रीन, धनुर्वात tetanus हृदयान्तरावरण प्रदाह Endocarditis, परिफुफ्फुसीय कला प्रदाह (Pleurisy.) उदरकला प्रदाह, फुफ्फुस प्रदाह (निमोनियां)।

गोनोकोकस सुजाकजन्य संक्रमण—

सुजाक, हृदयान्तर कलाप्रदाह, मस्तिष्कावरण प्रदाह, तथा उन सुजाक के रोगों में विशेष गुणकारी है जो सल्फाश्रेणी की औषधियों से ठीक नहीं होता।

उपदंश, vincet संक्रमण—

निम्न रोगों में पेनिसिलिन उपकारक सिद्ध नहीं हुई बताते हैं—

इन्फ्लुएंजा, सौषुम्न पीत भाग प्रदाह, Encapholistis letharzia, मंथरज्वर, पेराटाईफाइड ज्वर, आमातिसार, प्लेग, हैजा, क्षय, तीव्र आमवात ज्वर (Rheumatic fever) मलेरिया (विषमज्वर) इत्यादि—

कभी-कभी इसके प्रयोग से शीतपित्त जैसी अवस्था पैदा होजाती है जिसकी चिकित्सा उसी के अनुसार करनी चाहिए। कभी-कभी मांस भाग में जहां इंजेक्शन लगाया गया है पीड़ा, शिरःशूल, विकृत मुख स्वाद आदि लक्षण होजाते हैं।

मात्रा का निर्धारण रोग की तीव्रता, रोगी की आयु इत्यादि के अनुसार नियत कर लेना चाहिये।

इसके अतिरिक्त कभी-कभी ऐसा भी देखा गया है कि पेनिसिलिन से जिन जीवाणुओं पर प्रभाव पड़ता है, कुछ काल के सेवनोपरांत उनको पेनिसिलीन सात्म्य होजाती है और रोग घटने की गति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुक जाती है। ऐसी दशा में पेनिसिलीन की मात्रा और अधिक कर देनी चाहिये, तभी लाभ हो सकता है।

स्ट्रेप्टोमाईसीन
(Streptomycin)

यह जीवाणु वृद्धि नाशक गुण सम्पन्न औषधि स्ट्रेप्टोमाईसीन ग्रीसेन्स नामक द्रव्यों से निर्मित की जाती है। इसका भी प्रयोग पेनीसिलिन की तरह विविध रोगों पर और विशेषकर क्षय पर अत्यन्त हितकर होता है। आजकल क्षय को निवारणार्थ जितना इसका प्रयोग होना है उतना अन्य किसी भी द्रव्य का नहीं होता। तपेदिक किसी भी भाग की हो इसके प्रयोग से बहुत कुछ अंशों में अथवा पूर्णतया लाभ होजाता है।

यह विशेषकर ग्राम निगेटिव या एसिड फास्ट जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न रोगों पर अच्छा कार्य करता है। इसके अतिरिक्त जो जीवाणु पेनिसिलिन से भी नष्ट नहीं होते, तथा कुछ ग्राम पाजिटिव जीवाणु पर भी इसकी विनाशकारी क्रिया अत्युत्तम होती है।

यह भी पेनिसिलिन की तरह शुष्क औषधि है और दो प्रकार की शीशियों में आती है। एक २० सी. सी. की शीशी जिसमें १ ग्राम, तथा दूसरी ४० सी. सी. की शीशी जिसमें २ ग्राम औषधि होती है।

प्रयोग विधि तथा मात्रा —

इसको पेनिसिलिन की तरह पाईरोजन रहित परिस्रुत जल में या नार्मल सामान्य लवणोदक में घोलकर प्रयोग करते हैं। इसका बना हुआ घोल १ मास तक साधारण तापमान पर या कमरे के तापमान पर खराब नहीं होता।

१ ग्राम औषधि को दो सी. सी. तक परिस्रुत जल तथा दो ग्राम औषधि को ४ से ८ सी. सी. में घोल लेना चाहिये। शुष्क स्ट्रेप्टोमाईसीन १ वर्ष तक ठण्डी जगह में रखी रहने पर भी खराब नहीं होती है।

इसको अधिकतर मांसपेशीगत दिया जाता है, परन्तु आवश्यकता पड़ने पर अधस्त्वगीय subcutaneously, स्थानीय locally, शिराद्वारा Intravenously फुफ्फुसावरण मध्य intrapleurally, उदरच्छद कलान्तर्गत Intraperitoneally तथा अन्य मार्गों द्वारा प्रयुक्त होती है।

इसको छोटे बच्चे अर्थात् शिशु के लिए १ ग्राम को ४ सी. सी. परिस्रुत जल में घोलकर प्रति ६ से १२ घण्टे के उपरान्त जैसी अवस्था हो देते रहना चाहिए। बड़ों को १ ग्राम को दो सी. सी. में घोल कर प्रति ६-१२ घण्टे पर दें, २४ घण्टों में २-४ बार से अधिक कभी भी न दें। वैसे प्रति १२ घण्टे के बाद ही दिया जाता है, परन्तु विशेषावस्था में ६-६ घण्टे के बाद भी प्रयुक्त किया जासकता है रोग कम होने पर अधिक बिलम्ब से प्रयोग कर सकते हैं। दो सी. सी. से अधिक भी प्रयोग एक वार में नहीं करना चाहिए। सूई को मांस में गहरी घोंप कर औषधि को धीरे-धीरे अन्दर प्रविष्ट करना उचित होता है। यदि रोगी को पीड़ा अधिक होने लगे तो इसके साथ थोड़ा सा प्रोकेन हाईड्रोक्लोर का १ प्रतिशत का घोल मिला लेना चाहिए।

शिरा द्वारा देने से पेशी की अपेक्षा कुछ अधिक लाभ नहीं होता, तथा यह कि जब भी शिरा द्वारा इसे प्रयोग करना हो इसका विलियन बनाकर तब उसे बूंद बूंद करके और हृदय की गति को देखते हुए इसे देना चाहिए।

अंतःकोषान्तर्गत Intrathecally देने के लिए तभी उपयुक्त होता है जब मस्तिष्क रोग में यह मांसपेशी के साथ साथ इस मार्ग द्वारा प्रविष्ट की जाये। इसके लिए इसका घोल १।४० ग्राम का ५ सी. सी. में बनाना चाहिए और २४ घण्टे में एक बार प्रयुक्त करना चाहिये।

उदरकलाच्छान्तर्गत या फुफ्फुसावरण मध्यगत देने के लिये १ ग्राम स्ट्रेप्टोमाईसीन को ५० सी. सी. नार्मल सेलाईन में घोल लेना चाहिये और इन उपरोक्त कोषों में ऐसे सूचीवेध करना चाहिए कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औषधि वहां ६-८ घण्टे तक कम से कम पड़ी रह कर अपना प्रभाव कर सके।

स्थानीय प्रयोगार्थ नार्मल सेलाईन में घोल कर, मुख द्वारा प्रयुक्त करने के लिए आमाशय या आंतों पर सीधा प्रभाव करने के लिये किसी फल के स्वरस में मिला कर या दूध में मिला कर दे सकते हैं।

टिप्पणी—त्वचान्तर्गत विधि से देने के उपरान्त स्थानीय पीड़ा अधिक होती है जोकि कुछ कालोपरांत शनैः-शनैः शान्त होजाती है। शीतपित्त Urticaria समान लक्षण रक्तचाप की न्यूनता होना, ज्वर भी कभी-कभी हो जाता है, पर बहुत कम रोगियों में। कभी-कभी मूत्र मार्ग में पीड़ा होने लगती है। अष्टम कपाल नाड़ी Cranial Nerve में विकार आकर बहरापन हो सकता है। अतः सोषुम्नान्तर्गत इसका प्रयोग हानिप्रद प्रमाणित हो सकता है। इसलिए २४ घण्टे में २० ग्राम से अधिक इसका व्यवहार नहीं करना चाहिए, और विशेषकर इस मार्ग द्वारा।

गुण—इसके गुणों की महिमा विचित्र है। क्षय तपेदिक के लिए तो वर्तमान में इसको रामबाण माना जाता है। राजयक्ष्मा की निम्न दशाओं में इसकी मात्रायें भी निम्न प्रकार से हैं।

१-फेफड़ों का तपेदिक (राजयक्ष्मा)—प्रति सेर शरीर भार पर १।४० ग्राम, प्रति ६-१२ घण्टे पर मांसपेशी द्वारा इन्जेक्शन देना चाहिए। चिकित्सा ८,१० या १२ सप्ताह तक चालू रखते हैं। यह देखा गया है कि Fibrocaseous या Fibrocebernous (फुफ्फुसीयतन्तु क्षय) में यह कुछ विशेष लाभदायक सिद्ध नहीं होता।

२-आंत्रगत राजयक्ष्मा—प्रति सेर शरीर भार पर १।४० ग्राम, ६-१२ घण्टों पर लगभग ३ माह तक देनी चाहिए मार्ग-मांसगत।

३-त्वचा या अधस्त्वक क्षय—प्रति सेर शरीर भार पर १।५० ग्राम, मांसपेशीगत ६-१२ घण्टों पर ८-१० सप्ताह तक प्रयोग करना चाहिए।

४-मस्तिष्कगत राजयक्ष्मा—प्रति सेर शरीर भार पर १।२० से १।२४ ग्राम तक मांसगत, १२-२४ घण्टों पर देना चाहिये। समय-३-६ माह तक।

५-स्वरयंत्रगत श्वास नलिकागत क्षय (राजयक्ष्मा) में-प्रति सेर शरीर भार पर १।५० ग्राम औषधि ६-१२ घण्टों पर ६ सप्ताह तक या इससे अधिक समय तक इन्जेक्शन द्वारा देनी चाहिये।

राजयक्ष्मा के अतिरिक्त निम्न रोगों पर भी यह विचित्रता से अत्युपयोगी सिद्ध हुई है।

१-पेचिश Bacillary Dysentry, १-४ ग्राम तक, प्रतिदिन ६-१२ घण्टों बाद मांसपेशी या मुख द्वारा ४-१० दिन तक दें। कुल मात्रा २० ग्राम तक दे सकते हैं।

२-मन्थर ज्वर Typhoid fever—प्रतिदिन दो ग्राम ६-१२ घण्टों बाद मांसपेशीगत दें।

३-सालमोनिला संक्रमण:-Salmonillo Infection में २ ग्राम प्रतिदिन ६-१२ घण्टे पर १ से दो सप्ताह तक दें।

४-एक्यूट ब्रूसिलासिस—४ ग्राम प्रतिदिन मांसपेशीगत, ६-१२ घण्टों पर लगभग २ से ४ सप्ताह तक प्रयोग करना चाहिये।

५--आंत्रगत जीवाणु संक्रमण, एवं जीवाणु विनाशार्थ-मुख द्वारा १२ घण्टों पर ३-४ ग्राम प्रतिदिन फलों के स्वरस के साथ दें।

इनके अतिरिक्त इसका व्यवहार सफलता के साथ इन रोगों पर किया जाता है। व्रण, जीवाणुजन्य हृदयान्तरावरण शोथ Endocarditis, यक्ष्माजन्य निमोनिया Tubercular Acute Pneumonia, Abdominal Abscess उदरगत विद्रधि, पेनिसिलिन द्वारा असफल मूत्र मार्ग रोग तथा निमोनिया या ब्रोंकाइटिस या इन्फ्लुएञ्जा, एच० इन्फ्लून्ज़ा. मस्तिष्कावरणशोथ Meningitis, निमोनिया, टुलारीमिया ग्रन्थियुक्त Glanular Tularemia इत्यादि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाई हाइड्रोस्ट्रेप्टोमाईसीन
(Di-Hydrostreptomycin)

स्ट्रेप्टो माईसीन जिसका वर्णन पीछे किया जा चुका है उसी का कुछ क्लीयांश पृथक कर के यह बनाया जाता है। यह स्ट्रेप्टोमाईसीन की अपेक्षा कम स्नायुविक-विकार करने वाली है, तथा अन्य बातों में उसी प्रकार गुणवान और गुणयुक्त है। यह उन रोगियों को भी बर्दाश्त होजाता है जिनको कि स्ट्रेप्टो माईसीन कभी-कभी सात्म्य नहीं आता।

मात्रा–विधि—इसका व्यवहार सदैव मांसान्तर्गत विधि से होता है, कभी भी शिरा द्वारा प्रयोग नहीं करना चाहिए। केवल क्षय जन्य मस्तिष्कावरण शोथ में इन्ट्राथीकेली प्रयोग करने की आज्ञा है। यह सामान्य लवणोदक Isotonic Saline या पाईरोजनरहित परिस्रुत जल में अति शीघ्र घुल जाती है। इसका घोल २५० से ५०० मिलिग्राम (चौथाई से आधा ग्राम) प्रति सी. सी. होना चाहिए। तथा १ बार में अधिक से अधिक २ सी. सी. घोल प्रविष्ट करना चाहिए।

इसके तीन प्रकार के पैकिंग आते हैं। २० सी. सी. शीशी में १ ग्राम; २० सी. सी. शीशी में दो ग्राम तथा, ५० सी. सी. शीशी में ५ ग्राम स्ट्रेप्टो-माईसीन समान औषधि।

अतः प्रति सी. सी. निर्धारित मात्रा का घोल बनाने के लिए उपयुक्त परिमाण में तरल मिलाने की तालिका हम नीचे दे रहे हैं जो कि रिकन कम्पनी के निर्देशानुसार है।

मिली ग्राम प्रति सी. सी. के लिए	साधारणतया तरल (पाईरोजनरहित जल या लवणोदक) मिलाने के लिए यदि वह शीशी		
	१ ड्राम वाली है	२ ड्राम वाली है	५ ड्राम वाली है
५० मिलिग्राम प्रति सी. सी	१९· सी. सी.	—	—
६० मिलि० ,, ,,	१५·७ ,,	—	—
१०० मिलि० ,, ,,	९·१ ,,	१८·२ सी. सी.	४५·८ सी. सी.
१२५ ,, ,, ,,	७·२ ,,	१४·२ ,,	३५·८ ,,
१५० ,, ,, ,,	५·८ ,,	११·६ ,,	२९·० ,,
१७५ ,, ,, ,,	४·९ ,,	९·७ ,,	२४.३ ,,
२०० ,, ,, ,,	४·२ ,,	८·३ ,,	२०·८ ,,
२५० ,, ,, ,,	३·२ ,,	६·४ ,,	१५·७ ,,
५०० ,, ,, ,,	१·२ ,,	२·३ ,,	५·७ ,,

इसका मांसान्तर्गत सूचीवेध कभी-कभी कष्टदायक होजाता है अतः उसके लिए निम्न बातों का ध्यान रखने से ये असुविधा दूर हो जाती है (१) नितम्ब के गहरे मांस भाग में इन्जेक्शन लगाओ, (२) प्रतिबार इन्जेक्शन का स्थान बदलते रहो, (३) अधस्त्वगीय औषधि प्रक्षेपित न होने पाए अतः गहरा इन्जेक्शन लगाओ तथा धीरे-धीरे लगाओ, (४) परिस्रुत जल में १ प्रतिशत प्रोकेनहाईड्रोक्लोराइड मिलाकर तब उससे विलियन बनाओ।

इसका शुष्क रूप में बन्द चूर्ण कमरे के तापमान पर दो वर्ष तक खराब नहीं होता, और बना हुआ विलियन बिना अपनी शक्ति खोए हुए ७ दिन तक ठीक रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषैले लक्षणों की आशंकाएं--

अत्यधिक मात्रा में यह भी विषैले लक्षण पैदा कर सकती है जिनमें मुख्यतया कर्ण सम्बंधी लक्षण हैं। जब वृक्क कार्य बिगड़ा हुआ हो तब चूंकि शरीर से, औषधि का निकास नियमित न होने से अधिक संचित हो जाने से (शरीर में) यह कटिशूल, झनझनाहट, इत्यादि होते हैं। कर्ण सम्बन्धी विकार स्थाई भी हो जाते हैं। वृक्क रोगों में रक्तमूत्र Hematuria, पिष्टिमेह Proteinuria हो सकते हैं। त्वचा सम्बन्धी शीतपित्त जैसे उपद्रव भी हो सकते हैं, तब या तो उनकी शीतपित्त शामक Antihistaminic चिकित्सा करनी चाहिए, अथवा इसके बजाए स्टेप्टोमाईसीन का प्रयोग करने लग जाना चाहिए। शिरःशूल चेहरे मुख का शून्य होने के लक्षण, पाचन सम्बन्धी विकार यदि होने लगें तो तुरन्त औषधि प्रयोग बन्द कर देना चाहिए।

गुण-क्षय (राजयक्ष्मा) में जब अवस्था प्रारम्भिक हो और साधारण चिकित्सा से लाभ होता हो इसका प्रयोग वर्जित है। वैसे क्षय, क्षय जन्य मस्तिष्कावरण शोथ, कण्ठ, श्वास-नलिका, अन्न प्रणाली की, त्वचा-लसीका, अस्थि, उदरकलाच्छद फुफ्फुसगत, जो सामान्य एवं निमोनिया युक्त, वृक्कगत, जिसमें वृक्क मूत्र नलिका Ureter, मूत्राशय भी ग्रसित हों, ऐसी राजयक्ष्मा में इसका प्रयोग अति लाभप्रद है। इसके अतिरिक्त वक्ष के शल्यकर्म Thoracic Surgery तथा जीवाणुजन्य (क्रिमिज हृदयान्तरावरणशोथ; या पेनीसिलीन द्वारा ठीक न हो सकने वाले प्रकार का हृदयान्तरकलाप्रदाह, ब्रूसिलोसिस उदरच्छद-कलाप्रदाह, बद, मूत्र संस्थान का संक्रमण Urinary infection, तीव्र सुजाक, आमाशय एवं आंत्र पर शल्य कर्म—पूर्व उपचार हेतु, इसका प्रयोग किया जाता है। इसके लिए स्पष्ट मात्रा, प्रयोग सावधानी की तालिका हम नीचे दे रहे हैं।

डाईहाईड्रोस्ट्रेप्टोमाईसीन प्रयोग विधि निर्देशक तालिका

क्षय का प्रकार	मात्रा, प्रति १२ घंटों पर मांसगत	चिकित्सा का साधारण समय	विशेष उल्लेख
१–क्षय जन्य मस्तिष्कावरण प्रदाह प्रति २४ घण्टों पर, २० मिलिग्राम, या प्रति ४८ घंटों पर ५० मिलीग्राम जोकि प्रति मिलि० शरीर भार पर १ मिली० से अधिक न हो।	१·१५ ग्राम, बच्चों में प्रति पौंड शरीर भार पर १० मि०ग्रा	४ मास तक	अन्य संक्रमण की देखा भाली करते रहें। रक्त, सौषुम्नीय तरल तथा कण्ठ की परीक्षा कभी-कभी करते रहना चाहिए।
२–मिलियरी क्षय टी. बी.	,,	४ मास	
३–स्वरयंत्र कंठ की श्वासनलिकाओं का क्षय।	०·५ ग्राम	४२ दिन	इस औषधि से अत्यधिक लाभ होता है।
४–त्वचा पर नाड़ी व्रण, भगन्दर क्षय जन्य	०·५ ग्राम	४२ दिन	शल्य कर्म भी करना चाहिऐ, अस्थिगत नाड़ी व्रण अत्यधिक शीघ्रता से ठीक होते हैं।
५–त्वचा, अधस्त्वीय तन्तुओं का क्षय,	०·५ ग्राम	४२ दिन	
६–अन्न प्रणाली का क्षय।	०·५ ग्राम	४२ दिन	विशेष लाभ होने की संभावना होती है।
७–लसीकागत क्षय	०·५ ग्राम	४२ दिन	शीघ्र लाभ होता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८-अस्थि एवं संधिगत क्षय	०·५ ग्राम	४२ दिन	उपकारी सिद्ध होता है
६-उदर कलाच्छगत राजयक्ष्मा	०·५ ग्राम	४२ दिन	लाभ होते देखा गया है
१०-फेफड़ों का राजयक्ष्मा, बलगम, रक्तपित, निमोनियां युक्त, पूर्व एवं पश्चात शल्य कर्म में जब संकोचन कर्म Collapse therapy की जाती हैं।	०·५ ग्राम	४२ दिन	फुफ्फुस में क्षतयुक्त राजयक्ष्मा में थड़ा लाभ होता है। प्रारम्भिक तथा हल्की प्रकार की राजयक्ष्मा में इसका प्रयोग वर्जित है।
११-वृक्कगत (जिसमें वृक्क, मूत्र नलिकाएं तथा मूत्राशय ग्रसित हों) राजयक्ष्मा।	०·५ ग्राम	४२ दिन	शल्यकर्म की भी आवश्यकता पड़ सकती है।
१२-वृक्कगत शल्यकर्म पूर्व व पश्चात	०·५ ग्राम	शल्य कर्म	होने से ७ दिन पूर्व तथा-
राजयक्ष्मा रहित दशायें		शल्य कर्म	होने के ७ दिन पश्चात तक प्रयुक्त करना चाहिए
१-हृदयान्तरकल प्रदाह जो पेनिसिलिन से भी ठीक न होती हो	२ ग्राम ३-६ घंटे के अंतर से	३-४ सप्ताह तक या अधिक काल के लिए	साथ में अन्य चिकित्सा का भी सहारा लिया जाना चाहिए जैसे पेनिसिलीन जो स्ट्रेप्टो तथा स्टेफीलोकोकस संक्रमण में प्रयुक्त की जाती है।
२-उदरच्छदकला प्रदाह जो ग्राम निगेटिव जोवाणु द्वारा हो	१·५ से ३ ग्राम तक	१४ दिन	पेनिसिलीन या सल्फाईज़ीन प्रयोग भी चालू रखा जा सकता है।
३-यक्ष्म	३ ग्राम	७-१४ दिन	
४-मूत्र संस्थान का संक्रमण जो स्ट्रेप्टोमाईसीन से प्रभावित होते हैं होने वाले जीवाणुओं द्वारा हो	१ से २·५ ग्राम	५-७ दिन	जीवाणु जन्य विष या मूत्र निकाल देना चाहिये, तीव्र संक्रमण में अधिक मात्रा की १४ दिन तक जरूरत पड़ सकती है।
५-तीव्र सुजाक	१ ग्राम की १ मात्रा		पेनिसिलीन इसके लिए विशेषकर उपयुक्त है। परन्तु स्ट्रेप्टोमाईसीन उन्हीं दशाओं में प्रयुक्त करना चाहिये जहां पेनिसिलीन से लाभ न होसके।
६-अन्न प्रणाली Gastro intestinal tract के शल्यकर्म में सावधानी रखने के लिए	१ से १·५ ग्राम	शल्य कर्म से १ दिन पूर्व तथा शल्य कर्म के ७ दिन पश्चात् तक	साथ में पेनिसिलीन ६०००००, से १२००००० यूनिट नित्य प्रति या सल्फा श्रेणी की औषधियों का भी प्रयोग लाभदायक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निओ-गाईनर्जिन (Neo-Gynergen)

परिचय—यह अर्गट का उत्कृष्ट योग है जो बहुविधि स्त्रियों के रोगों में प्रयुक्त होता और अर्गोमेट्रीन टार्ट्रेट का यह योग है। इसका प्रभाव गर्भाशय पर स्थाई रूप से और अत्यन्त शीघ्र पड़ता है।

मार्ग मात्रा—वैसे मांसान्तर्गत ही देते हैं, पर तीनों मार्गों द्वारा प्रविष्ट की जासकती है, इसकी दो मात्राएं हैं—एक हीन बल, एक उग्रबल। हीन बल वाले योग का उपयोग केवल रोगी की सहन शक्ति की परीक्षा करने के लिए होता है। गर्भवती स्त्री को कभी भूल कर भी इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

गुण—यह प्रसवोपरान्त रक्तस्राव को रोकने के लिए (Post partum Haemorrhage) अव्यर्थ है। इसके अतिरिक्त प्रसवोपरान्त गर्भाशय सकुचित होकर अपनी साधारण दशा पर न आने पर (Post partum Atony) आंशिक अपूर्ण गर्भस्राव, या पात Partial abortion, शल्यकर्म के अनन्तर अपूर्ण गर्भाशय संकोच, सशूल ऋतुस्राव, कष्टार्तव, अत्यार्तव, Menorrhagia, Metrorrhagia रोगों में इसका प्रभाव हितकर होता है। ऋतु निवृतोपरांत Menopause के बाद जब रक्तस्राव बिना किसी विशेष कारण (जैसे केन्सर या अर्बुद इत्यादि के) हो तब भी यह रक्तस्राव को रोकने के लिए अत्यन्त हितकर प्रभाव करती है। अतः जब प्रसवोपरान्त अपरा एवं नाल निकल चुकें तब, इसके प्रयोग से गर्भाशय को संकुचित होने में अत्यन्त सहारा मिल जाता है। इसका प्रयोग मांसगत करके फिर मुख द्वारा एक सप्ताह तक इसका प्रयोग (Erbolin) इत्यादि के रूप में करते रहना चाहिये। गर्भवती को प्रयोग करने से गर्भाशय मांसपेशी संकोच से गर्भस्थ भ्रूण की भी मृत्यु हो सकती है, अतः प्रयोग वर्जित है।

अर्गट के विविध योग

१-अर्गोमेट्रीन मेलियेट, मांसपेशीगत ०.२५ से ०.५० मिग्रिाम।

२-अर्गोमेट्रीन (B. D. H.) मांस द्वारा ०.२५ से ०.५० मिलिग्राम तक। शिरा द्वारा ०.१२५ से ०.२५ मिलिग्राम तक।

३-अर्गोटाक्सीन इथेनी सल्फेट-(मुख द्वारा) अधस्त्वगीय एवं शिरांतर्गत विधि से भी ०.५ से १ मिलिग्राम तक।

इनका प्रयोग जहां अर्गट का प्रयोग प्रसवोपरांत होने वाले रक्तस्राव के लिए होता है तथा गर्भाशय संकोच हीन शक्ति का होना Uterine Inertia, इत्यादि दशाओं तथा उपरोक्त वर्णित लक्षणों को निवारण करने के लिए होता है।

निओहेमोप्लास्टीन

(Neo-Hemoplastin)

यह पार्केडेविस कम्पनी का योग है जो रक्त रस Serum के साथ viper-venom सर्पविष तथा विटामिन सी युक्त है। और दो सी. सी. की रबड़ बन्द शीशी में प्राप्त होता है। एक बार में एक से दो सी. सी. प्रयुक्त होता है। तीव्र रक्तस्रावों में चौबीस घण्टे में कई बार जब तक लाभ न हो प्रयोग करते रहना चाहिए। साधारण रक्तस्राव में तो एक ही बार दो सी. सी. का इन्जेक्शन पूर्ण लाभ कर देता है।

मार्ग—मांसपेशी द्वारा साधारण अवस्था में प्रयुक्त करते हैं, परन्तु अत्यन्त आवश्यक दशा में जहां शीघ्र फल की इच्छा हो इसको नार्मल सेलाईन में मिला कर शिरा द्वारा प्रयुक्त करते हैं।

गुण—शरीर के अभ्यान्तरिक भागों में से जैसे मन्थर में, आंतों से टांसिल के आप्रेशन के बाद गले से रक्तस्राव होने, दांत निकालने के बाद न रुकने वाला रक्तस्राव, अर्श का रक्तस्राव तथा ऐसे ही अन्य फुफ्फुसोंसे होने वाला रक्तस्राव रोकने के लिए यह बेजोड़ है। जहां बाह्य साधनों से रक्तस्राव रोकना असम्भव होता है वहां इसकी एक या दो मात्रा अभीष्ट गुण दिखा देती हैं। जहां अन्य रक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोधक औषधियां निष्फल हो जाती हैं वहां यह अपना गुण शीघ्र दिखा देता है। इसके अलावा धातु सेवन से उत्पन्न रक्तस्राव को भी इसका प्रयोग लाभकारी सिद्ध हुआ है।

निओस्टीबोसान या वानहीडेन

(Ngostibosan, Von Heyden 693 B.)

उपरोक्त दोनों एक दूसरे के पर्याय हैं। तथा सुर्मे का अम्लयोग है। इसको मांसगत दिया जा सकता है। इसके लिए ०.३ ग्राम को इतने जल में घोलना चाहिए कि २५ प्रतिशत का घोल बन जाए। प्रतिदिन इन्जेक्शन लगाते हुए आठ दिनों तक इन्जेक्शन लगाना चाहिए। प्रथम मात्रा ०.२ ग्राम की होनी चाहिए, इस प्रकार सब मिलाकर २.५ ग्राम दवा प्रविष्ट कर देनी चाहिये। मात्रा .०२ से ०.३ ग्राम तक प्रति बार देनी चाहिए।

गुण—कालाजार के लिए डा० नेपीयर साहब ने यह प्रमाणित कर दिया है कि इससे ६० प्रतिशत कालाजार के रोगियों को लाभ पहुंचता है। जहां-जहां एण्टीमनी (सुर्मा) व्यवहार होता है, वहां इसका प्रयोग करना चाहिए।

निओवेरीकेन (Neo-varicane)

यह Monoethanolamine Oleate Solution है। जो मे बेकर कम्पनी द्वारा बनाई जाती है।

गुण—शिरा की स्थाई उन्नत्तावस्था Voricose Veins के लिए तथा इसी प्रकार शिरोन्नतदशा से उत्पन्न व्रण एवं (छाजन) तथा शिरो काठिन्य ग्रंथि तथा अण्डकोष वृद्धि जहां जलीयांश के कारण वृद्धि हो और गुदा के अर्शांकुर के लिये यह प्रसंशनीय कार्य करता है। जहां सोडियम मोर्हियेट का प्रयोग अभ्यान्तर शोथ नाश के लिए किया जाता है वहां करना चाहिए। परन्तु इसका व्यवहार शिरास्तम्भ Thrombosis तथा गहरी शिराओं के जीर्ण शोथ के Phlebitis की दशा में नहीं करना चाहिए।

विधि एवं मात्रा—प्रत्येक रोगी की रोग दशा के अनुसार इसकी मात्रा और विलियन की मात्रा निर्धारित की जाती है। जैसे ५ प्रतिशत का घोल प्रयुक्त होता है। साधारणतया सामान्य रोगी के लिए १-२ सी. सी. एक बार में प्रयुक्त करना चाहिए। एक दिन में या एक बैठक में इन्जेक्शन नहीं लगना चाहिए। और ये इन्जेक्शन पांच से सात दिन के अन्तर से देना चाहिये, जब तक कि इच्छित लाभ न हो जाए।

नोवालजिन (Novalgin)

यह एक अत्युत्तम पीड़ानाशक तथा विशेषकर पित्ताश्मरी, पित्ताशयोद्भव शूल में लाभ करती है। इसको मांस द्वारा देना चाहिए। यह अनुमान है कि इस रोग में वह ६० प्रतिशत से ऊपर रोगियों को लाभ पहुंचाती है।

मात्रा—इसके ५० प्रतिशत की शक्ति के घोल की ४ सी.सी. या ५ सी.सी. के मात्रा में प्रयोग करें।

न्यूक्लीन (Nuclien)

खमीर से बनाई गई यह औषधि पार्केडेविस कम्पनी द्वारा प्रेषित है। इसी के अन्य योग भी बनाये गए हैं, जैसे—

(१) लौह तथा न्यूक्लीन का मिश्रण Iron-Arsenic with Nuclein-१ सी. सी. में १ ग्रेन।

(२) लौह, मल्ल, स्ट्रीक्नीन और न्यूक्लीन का Iron Arsenic & Strychnine with Nuclein इसका प्रयोग मांसान्तर्गत और अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा होता है।

गुण—इसका प्रभाव आंतों पर अधिक होता है, और आंत्रिक ज्वर में आंतों के विविध कीटाणुओं को मारती है, आंतों की क्रिया नियमित करके रक्त स्थित श्वेत एवं रक्त कणों को अधिक उत्पन्न करके अन्य संक्रमणों से शरीर की रक्षा, रोग क्षमता उत्पन्न करके करती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके प्रयोग से, मन्थर ज्वर, राजयक्ष्मा, कण्ठ-माला, प्रसूतज्वर अन्य संक्रामक ज्वरों में विशेष लाभ होता है। जीर्ण ज्वरों में जहां शरीर में रक्त-हीनता आगई हो वहां लौह युक्त इसका योग प्रयुक्त करना चाहिए।

नाईट्रोग्लीसरीन (Nitro-glycerine)

इसे तैल रूप में प्रस्तुत किया गया है और इसका केवल यही गुण है कि बहुत सी अदृष्य एवं असात्म्य औषधियों के सेवनोपरान्त जब रोगी अचेत और बेहोश सा हो जाता है और उसका शरीर अकड़ सा जाता है, तब इसके प्रयोग से वह अवस्था दूर हो जाती है।

मात्रा विधि--आध बूंद से २ बूंद तक केवल त्वचांतर्गत Subcutaneously देना चाहिए।

पिलोकार्पीन नाइट्रेट
(Pilocarpine Nitrate)

यह पिलोकार्पस जातियों की बनस्पति के पत्तों से प्राप्त किया हुआ योग है। इसकी मात्रा १।२० से १।५ ग्रेन है वैसे इसको १।१० से आधा ग्रेन तक की मात्रा में भी प्रयुक्त करते हैं।

गुण--विशेष गुण इसका स्वेदन लाने का है, जो इतना आता है कि रोगी भी तंग आजाता है। इसके प्रयोग के ६-१० मिनट के अन्दर-अन्दर चेहरा त्वचा, गर्दन, कान, लाल हो जाते हैं और पसीना छूट निकलता है, जो इतना आता है कि लगभग एक गैलन तक स्वेद आ सकता है। अतः इसका प्रयोग वृक्क शोथ Nephritis में जब कि मूत्र का आना बंद हो जाता है और शोथ होकर रक्त भार निरंतर बढ़ता जाता है तब करते हैं। तब स्वेद द्वारा अनावश्यक जल और मूत्र के अन्य द्रव्य निकल जाने से वृक्क को कुछ काल के लिए विश्राम मिल जाता है, इस प्रकार वृक्क को भी लाभ मिलता है। जब निमोनियां, फुफ्फुसावरण शोथ Pleurisy में तथा मृगी, कास और हृदय-दौर्बल्य में इसका प्रयोग कभी भी नहीं करना चाहिए। अन्यथा अत्यधिक स्वेद आकर रोगी की मृत्यु तक होने की सम्भावना हो जाती है।

जब चिन्ताजनक लक्षण जैसे हृदयावसाद Collapse के लक्षण और दिल डूबने सा लगे तब तुरन्त एट्रोपीन के सूचीवेध से ये उपद्रव शान्त हो जाते हैं। अतः हृत्कपाट के रोगों, तथा वृक्क की उन शोथ-युक्त अवस्थाओं में जहां फुफ्फुस भी ग्रस्त हो, कास हो, वहां इसका प्रयोग वर्जित है।

पोटेशियम एन्टीमनी टार्ट्रेट
(Potassium Antimony Tartrate)

यह सुर्मे और पोटाशियम के योग से निर्मित की गई है। अन्य सुर्मे Antimony के योगों की तरह यह भी कालाजार रोग में व्यवहृत की जाती है। तथा बड़ों की अपेक्षा यह बालकों को अधिक सह्य है।

गुण—कालाजार, स्थानीय व्रण Local Sore और Yaws इत्यादि में यह प्रयुक्त होती है। जब यह निश्चय हो जाए कि रोगी को वास्तव में कालाजार ही है तभी इसका प्रयोग आरम्भ करना चाहिए, और २०-२५ इन्जेक्शन लगा देने से रोग निर्मूल हो जाता है। लगभग ३ मास तक इसकी चिकित्सा चलती है।

मात्रा-विधि—मांसान्तर्गत विधि द्वारा सप्ताह में दो बार इसका प्रयोग करना चाहिए। प्रयुक्त करने के लिए १।२५ ग्रेन से १।८ ग्रेन तक १ या २ सी. सी. परिस्रुत जल में मिलाकर देना चाहिए।

पोटाशियम क्लोराईड
(Potassium Chloride)

शरीर में लवण की भी उपस्थिति रक्त में है। यह आक्सीजन उत्पादन करता है और रक्त के लाल कणों को देता है। शरीर में इसकी कमी के कारण स्नायुविक दौर्बल्य हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—५० सी. सी. की मात्रा में, इसका २ प्रतिशत की शक्ति का घोल प्रयुक्त होता है।

गुण—पक्षाघात, लकवा फालिज के रोगों में कभी-कभी इसके शिरान्तर्गत विधि से देने पर लाभ होते देखा गया है।

Papaverine Hydro-Chloride

पीछे वर्णित Omnopon, या Pantopon का दूसरा रूप है, अर्थात् अहिफेन से बनाया जाता है, इसी के समान यूपेवेरिन भी है जो पेपेवेरीन से कम विषैली होती है।

गुण—समस्त प्रकार के धमन्यावरोध Arterial Embolism में ऐसे रोगी जिस पर शल्यकर्म करना ठीक नहीं होता वहां इसका प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार पेपेवेरीन सल्फ भी प्रयुक्त होती है जब उदर-शूल, पित्ताशयज शूल, वृक्क शूल का वेग हो, दमा (फुफ्फुसगत Bronchial) हो तब यह नलिकाओं का प्रसार उत्पन्न करके दशा को शमन करती है। संज्ञाहीन करने के उपरान्त जब वमन होती है उसे और गर्भिणी की वमन को रोकने के लिए भी प्रयुक्त होती है, हृत्शूल में Angina Pectoris में भी प्रयुक्त होती है। परन्तु हृदय पर वैसे कोई भी प्रभाव नहीं करती।

मात्रा—३० से ६० मिलिग्राम तक २ सी. सी. नार्मल सेलाईन में घोल कर शिरा या अधस्त्वगीय विधि से देते हैं।

डिलौडाईड
(Dilaudide)

यह भी मार्फीन का ही योग है जो Hydrochloride of dihydromorphine है। यह मार्फीन की तरह शान्ति-स्थापक, पीड़ा नाशक है। और मार्फीन की तरह फुफ्फुस तन्तुओं पर प्रभाव करता है। मार्फीन के स्थान पर व्यवहार किया जाता है, परन्तु उसकी तरह घोर विबंध पैदा नहीं करता, और साथ में इसकी आदत भी नहीं पड़ती।

मात्रा-मार्ग—अधस्त्वगीय मार्ग द्वारा १।३२ ग्रेन तक परिस्रुत जल में मिलाकर दें।

पेराल्डीहाईड
(Paraldehyde)

इसका प्रयोग संज्ञानष्ट Anesthesia करने के लिए शिरा द्वारा प्रविष्ट करके किया जाता है। इसके लिए शिरा द्वारा १½ से ४ ड्राम तक पेराल्डीहाईड, इतनी ही ईथर और ५ औंस नार्मल सेलाईन मिलाकर देते हैं। इससे थोड़ी देर के लिए संज्ञा नष्ट होजाती है।

वैसे इसका प्रयोग हृद्रोगजन्य निद्रानाश, श्वासप्रणाली के रोग, उन्माद, हिस्टेरिया जन्य प्रलाप और उत्तेजनाओं में उत्तेजना शान्त करके नींद लाने के लिए इसे व्यवहार करते हैं, इसके अतिरिक्त प्रलापात्मक सान्निपात Delirium Tremens में भी इसको सफलता के साथ उत्तेजना शान्त करने के लिए देते हैं।

इसकी अधिक मात्रा मारक Fatal सिद्ध हो जाती है, दो औंस गुदा द्वारा देने से ही मृत्यु हो जाती है। अतः मात्रा न्यूनतम ही रखना चाहिए।

धनुषटंकार, धनुर्वात की ऐंठन को दूर करने के लिए ५ सी. सी. की मात्रा को दिन में दो बार देना चाहिए। इसके साथ सेलाईन का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। शिरा द्वारा देने पर रोगी एक मिनट में सो जाता है।

पिक्रोटाक्सिन
(Picrotoxin)

जब निद्राकारक और संज्ञाहारक औषधियों के सेवन के उपरांत विविध प्रकार के दुष्परिणाम होजाते हैं और रोगी की दशा चिन्ताजनक होजाती है तब प्रयोग के लिए और दशा को काबू में लाने के लिए इसका प्रयोग होता है, क्योंकि यह शीघ्र ही मूत्र के साथ शरीर से बाहर निकल जाती है अतः आध-आध घण्टे पर इसको देते रहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—मांसगत तथा शिरागत विधियों से १/१०० से १/२५ ग्रेन तक देते हैं। मुख द्वारा भी दशा ठीक होजाने पर १ मिलिग्राम से १० मिलिग्राम तक देते हैं। उन्माद पागलपन के लिए भी इसे ४ सी. सी. की मात्रा में ०.१ प्रतिशत की शक्ति का घोल शिरा द्वारा दिया जाता है।

इसको प्रयोग करने वाले को अपने पास इसके द्वारा उत्पन्न विषैले लक्षणों को रोकने के लिए बार्बी च्युरेट्स को सदैव रखना चाहिये।

पेप्टोन (Peptone)

एलब्यूमिन जैसे द्रव्यों को पच्यमानावस्था में लाकर इसका निर्माण होता है। मुख द्वारा प्रतिदिन दो बार भोजन से १-१ घण्टे पूर्व प्रायः देते हैं।

प्रयोग—इसका प्रयोग शीत पित्तात्मक दशाओं Allergic conditions में रोगी को विविध प्रकार की प्रोटीनों (प्रत्योजों) के विपरीत क्षमता उत्पन्न करने के हेतु प्रथम तो मुख द्वारा केपसूल में ०.५ ग्राम की मात्रा में भोजन से पूर्व शीतपित्त, आमाशयजन्य भयंकर शिरःशूल में प्रयुक्त किया जाता है। इसके इन्जेक्शनों को शिरान्तर्गत तथा मांसांतर्गत विधियों से प्रयुक्त करते हैं। इन्जेक्शन से पुफ्फुसजन्य श्वास में आशातीत लाभ होता है। जब कि रोगी को प्रोटीनों के प्रभाव से मुक्त कर दिया जाता है।

मार्ग मात्रा—शिरा द्वारा प्रयुक्त करने के लिए इसका ५ प्रतिशत का विलियन प्रयुक्त होता है। जिसकी मात्रा प्रथम ५ बूंद से आरम्भ करके प्रतिवार २॥ बूंद बढ़ाना चाहिए जब तक कि प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया न प्रतीत होने लगे।

मांसगत देने के लिए इसका ७.५ प्रतिशत का विलियन प्रयुक्त होता है। जोकि ०.३ सी. सी. से आरम्भ करके प्रति बार ०.२ सी. सी. बढ़ाते हुए हद से हद १.५ सी. सी. तक सातवीं मात्रा में लाना चाहिए। इन इन्जेक्शनों (शिरा या मांसगत) को सप्ताह में एक या दो बार देना चाहिए।

वैसे इसका व्यवहार प्रोटीनों के कुप्रभाव जन्य एवं विविध प्रकार के संक्रमण युक्त रोगों में भी किया जाता है। जैसे हे-फीवर (श्वास युक्त ज्वर) श्वास, हृदयविकारजन्य शोथ, शीतपित्त, वमन, शिरःशूल इत्यादि में यह प्रयुक्त की जाती है, प्रारम्भिक मात्रा अत्यल्प होनी चाहिए।

इसी अभिप्राय के लिए विट्स पेप्टोन विट्स स्पेशल ३० का व्यवहार भी होता है, जो १ प्रतिशत शक्ति विलियन की आती है और प्रारम्भिक मात्रा ०.२ सी. सी. है। मांस द्वारा सप्ताह में १ बार देने के लिए निम्न तालिका के अनुसार इसे प्रयुक्त करना चाहिए।

पहली	मात्रा	५ बूंद	(०.३ सी. सी.)
दूसरी	,,	८ बूंद	(०.५ ,,)
तीसरी	,,	११ बूंद	(०.७ ,,)
चौथी	,,	१३॥ बूंद	(०.९ ,, ,,)
पांचवी	,,	१७॥ बूंद	(१.१ ,, ,,)
छटी	,,	२० बूंद	(१.३ ,, ,,)
सातवीं	,,	२५ बूंद	(१.५ ,, ,,)
आठवीं	,,	२५ बूंद	(१.५ ,, ,,)

जिस रोगी को रक्ताल्पता के कारण नीलिमा रोग cyanosis अथवा यह दशा हृदय रोग जन्य हो उस दशा में इसका प्रयोग वर्जित है।

पारसेटिक (Parsetic)

यह पार्के डेविस कम्पनी की बनाया हुआ स्थानीय शून्यता उत्पन्न करने के लिए एक ऐसा विलियन है जिसमें २.२५ प्रतिशत इथोकेन या प्रोकेन नामक द्रव्य है एवं १:३०००० शक्ति में एड्रिनेलिन क्लोराईड होता है।

गुण—कोकेन रहित यह विलियन अतिशून्यता उत्पादक गुण युक्त है। दांतों के कामों में इसका प्रयोग न तो शोथ उत्पन्न करता है और न ही वहां मांसक्षय। दांतों के काम में ८-१७ बूंद तक दांत के दोनों ओर के मसूड़ों में प्रविष्ट कर देना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य प्रकार की शून्यता के लिए इसको नार्मल सेलाईन से हल्का करके जहां पर शून्यता उत्पन्न करनी हो वहां की त्वचा में प्रविष्ट करना चाहिए। छोटे मोटे शल्यकर्म में ८-१७ बूंद तक प्रयोग करें।

पेरिस्टालटीन (Peristaltine)

यह वेस्रासेग्रेडा का जल में घुलनशील योग है।

गुण-पुराने कब्ज में इसको देते हैं जब कि आंत्र-क्रियाशक्ति tone नष्ट होकर मल निस्सारण गुण नष्ट होगया हो। रेचक न होकर यह मृदुरेचक है। जो कुछ आंतों में होता है वह आंतों में शक्ति आजाने पर निकलना आरम्भ होजाता है। रोगी को इसकी आदत भी नहीं पड़ती।

मात्रा व मा° —

०.१५ ग्रेन से ०.३ ग्रेन तक प्रति सी. सी. के विलियन की मात्रा त्वचा, मांस या शिरान्तर्गत विधि से दी जा सकती है। एक बार प्रयोग करके अगले दिन औषधि के गुण व्यक्त होने की प्रतीक्षा करनी चाहिए। यदि मल न आये तो तीसरे दिन फिर प्रयोग करना चाहिए।

प्रोस्टिगमिन रॉचि (Prostigmin Roche)

अमरीका की रॉचि कम्पनी ने यह दवा बनाई है। जो आंत्रावरोध, घोर मलावरोध और मूत्रावरोध Retention of urine में अति गुणकारी प्रमाणित हुई है।

मात्रा विधि—त्वचान्तर्गत तथा मांसान्तर्गत विधि से इसको प्रयोग करना चाहिए। एक बार में १ सी.सी. तक प्रयोग करें।

प्रेगमोलीन (मे एण्ड बेकर) (Pragmoline)

यह मे एण्ड बेकर कम्पनी की तैयार की हुई है और एसीटाईल कोलीन का दूसरा रूप है। जिसमें यह औषधि १२.५ प्रतिशत के विलियन या प्रत्येक सी.सी. में ०.१२५ ग्राम एसी. को. ब्रोमाईड होती है।

गुण—इसका उपयोग शल्य कर्मोपरान्त होजाने वाला आंत्रघात Paralytic ileus, मूत्रावरोध, तम्बाकू से उत्पन्न नेत्ररोग, कुछ धमनी गत व्याधियां जैसे रक्तचाप इत्यादि में प्रयुक्त होता है।

मात्रा-विधि—शल्यकर्मोपरांत का आंत्रघात तथा मूत्रावरोध में १ सी.सी. की मात्रा प्रति १३ घण्टे पर देते रहना चाहिये। अन्य दशाओं में १ सी.सी. दिन में तीन बार दे सकते हैं।

इसका व्यवहार त्वचांतर्गत या मांसपेशीगत विधि से करना चाहिये।

प्रिस्कॉल (Priscol)

बेन्जाईल इमिडे जोलीन हाईड्रोक्लोराईड नामक द्रव्य का यह योग है जो टिकियां (खाने के लिए) मरहम (व्रणों पर लगाने के लिए) तथा नेत्र में डालने के लिए ५ से १० प्रतिशत के विलियन के रूप में आता है। मरहम को दुष्ट व्रणों पर २४ घण्टों में केवल एक बार लगाना चाहिये। इन्जेक्शन के साथ-साथ मुख द्वारा भी इसका प्रयोग किया जासकता है।

मात्रा, विधि-५-१० मिलिग्राम तक इसकी साधारण मात्रा है, परन्तु आवश्यकता पड़ने पर इस मात्रा को बढ़ाया भी आसकता है। जो कि चार-चार छः छः घण्टे पर दिया जा सकता है। परन्तु पहले इसकी थोड़ी मात्रा का प्रयोग करना चाहिये और फिर उसे बढ़ाना चाहिये। इसको त्वचांतर्गत विधि से २४ घण्टों में १ से ४ बार तक प्रयोग कर सकते हैं।

गुण—यह रक्त-नलिकाओं को प्रसारित कर देता है, साथ में अन्य स्रोतों को भी प्रसारित कर देता है। जुकाम Chilblains, तुषार, हिम जन्य शीत प्रतिश्याय, रेनाड्स नामक रोग गेंग्रीन (दुष्ट व्रण (रक्त चाप, नेत्र रोग, संधिगत आमवात, शिरोरोग, भ्रम, नासास्राव, इत्यादि रोगों में यह प्रभावकारी सिद्ध हुई है।

पेन्टामिडीन इसोथिओनेट

(Pentamidine Isothionate)

इसको एम. बी. ८०० भी कहते हैं। इसका चूर्ण रूप आता है जिसको शुद्ध परिस्रुत जल में घोल कर मांसपेशी द्वारा प्रयुक्त किया जाता है।

मात्रा विधि-प्रतिदिन दस दिन तक या इससे भी अधिक काल तक ४-५ मिलिग्राम तक प्रति किलोग्राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर भार के अनुसार, ३ सी.सी. परिस्रुत जल में घोल कर मांस द्वारा प्रविष्ट करना चाहिये।

गुण—कालाजार Trypanosomiasis निद्रा रोग, तथा सौषुम्न मृदुता Myelomatosis, रीढ़ के रोग, स्नायुविक रोगों में उत्तम कार्य करता है। सावधानी से प्रयोग करें।

प्लेनोकेन (Planocaine)

यह प्रोकेन हाईड्रोक्लोराइड है। जो स्थानीय, क्षेत्रीय Regionall तथा शल्यकर्म में सौषुम्नीयविधि से शून्यता इत्यादि उत्पन्न करने, दंत चिकित्सा (शल्य) में शून्यता पैदा करने के लिए व्यवहृत है।

विधि मात्रा प्रयोग-इसके तीन प्रकार के विलियन बनाए जाते हैं। साधारणतय जो जन्तीय घोल बनता है और छोटे-मोटे आप्रेशन से पूर्व प्रयुक्त होता है वह ०.५ से एक प्रतिशत का विलियन होता है तथा-

(१) टी (T) नामक विलियन विधि-

प्रोकेन हाइड्रोक्लोर (प्लेनोकेन)	०.०२ ग्राम
एड्रेनिलिन	०.०००० २ ग्राम

इस प्रकार से बनी, इसकी एक गोली १ सी.सी. में घोलने पर दो प्रतिशत का घोल बनाती है।

(२) ईई (EE) विधि 'EE' Formulae

प्रोकेन हाई० (प्लेनोकेन)	०.०२ ग्राम
एड्रीनिलिन	०.००००२ ग्राम
सोडियम क्लोराईड	०.००२ ,,
पोटाशयम सल्फेट	०.००३ ,,

इस प्रकार बनी एक गोली १ सी. सी. में घोलने पर २ प्रतिशत का विलियन बनाएगी।

(३) के विधि 'K' Formulae

प्रोकेन हाई० (प्लेनोकेन)	०.०२ ग्राम
एड्रिनिलीन	०.००००२ ,,
सोडियम क्लोराईड	०.००२ ,,
पोटाशियम सल्फेट	०.००३ ,,
फीनाईल मर्क्यूरिक नाइट्रेट	०.००००२ ,,

इस प्रकार की एक टिकिया १ सी. सी. में घोलने पर २ प्रतिशत का विलियन बनाएगी।

उपयोग क्षेत्रीय शून्यता उत्पन्न करने के लिए २ से २० सी. सी. तक २ प्रतिशत 'के' प्रकार का विलियन प्रयुक्त करना चाहिए।

दंतशल्य चिकित्सा में १ से २ सी. सी. तक ई. ई. और के. प्रकार का विलियन का प्रयोग करें।

सौषुम्नीय संज्ञाहरण (spinal analgesia) में ५०-२०० मिलीग्राम तक प्लेनोकेन का विशुद्ध sterile चूर्ण सौषुम्नीयतरल cerebrospinal Fluid में समय और स्थान के अनुसार घोलकर बिल्कुल ठीक परिमाण में औषधि प्रयुक्त करनी चाहिये।

हाईड्रोप्रोटीन
(Hydro-Protein)

इसका योग नार्मल सेलाईन में इस प्रकार बनाया जाता है कि इसमें ५ प्रतिशत ग्लूकोज घोल है, ·८ प्रतिशत प्रोटीन (अमीनो ऐसिड) ·६ प्रतिशत साधारण लवण, ·८ प्रतिशत नाईट्रोजन टोटल है। स्वाद में तिक्त-कटु और गंध में मांस के समान होता है।

एक विशेष यंत्र (जिसे हेयज पेटर्न ट्रान्सफ्यूजन सेट कहते हैं) द्वारा शिरा में बूंद-बूंद, ड्रिप मेथड द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। इसकी प्रवाह गति घण्टे में २०० सी. सी. से अधिक भले ही हो जाय, कमी से न हो। क्योंकि जल्दी और शीघ्रगामी गति से शिरा में प्रविष्ट करने के फलस्वरूप प्रतिक्रिया रूप से तीव्र ज्वर, मतली, वमन, भयंकर शिरःशूल, भ्रम, चित्त विभ्रम बेचैनी आदि ऐसे उपद्रव हैं जो उत्पन्न हो जाते हैं।

इसके प्रयोग से पहिले मूत्र में एलब्यूमिन की परीक्षा कर लेनी चाहिए। यदि अलब्यूमिन हो तो पहले ग्लूकोज सेलाईन को देकर तब इसे दे सकते हैं। मूत्र क्षय होने पर भी इसे दे सकते हैं, पर उपयोग विचार अवश्य कर लेना चाहिये।

गुण—अत्यन्त अतिसार होने, अनशन करने के उपरांत, किसी विकार जन्य पोषण की कमी, आंतों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खराबी के कारण, अतिसार के कारण जब रक्ततरल शरीर से बाहर निकलता रहता है और उसकी पूर्ति नहीं होती तब, तथा यकृत रोगों के कारण एवं अन्य संक्रमण युक्त औपसर्गिक रोग जन्य विकार से मांस-क्षय होने लगता है। आघात, हृदय रोग, जलोदर रक्तस्राव, या गुर्दे (वृक्क) रोगों के कारण शरीरस्थ प्रोटीन का निरन्तर नाश होता रहता है तब उस दशा में शरीर को पुनः दुर्बलता से स्वस्थ दशा में लाने के लिए प्रायः इसका व्यवहार कर उस क्षति की पूर्ति कर दी जाती है। इसके अतिरिक्त तीव्रज्वर, गर्भिणी की दशा, दूध पिलाने के युग में या अधिक शारीरिक परिश्रम या अन्य किसी भी हेतु से जब शारीरिक ह्रास की पूर्ति नहीं होती है,जैसे थकान,दुर्बलता,कृशता आदि ह तब यह उत्तम कार्य करता है।

लंघन या अनशन करने वालों को जब सहसा भोजन देने पर दुष्परिणाम हो सकते हों तब प्रोटीन हाईड्रोलीसेट दिया जाता है और तुरन्त प्रत्यक्षफल बल इत्यादि के रूप में दिखाई दे जाता है। अकाल पीड़ा, भूख से मरने वालों के लिए यह अमृत तुल्य है।

मात्रा मार्ग –मुख द्वारा ७ से १५ औंस तक दिया जा सकता है। पर शिरान्तर्गत विधि से २००-३०० ४०० सी. सी. तक आवश्यकतानुसार दिया जा सकता है।

हिपारिन

(Heparin B.D.H.)

यह विचार है कि हिपारिन यकृत में म्यूकाटिन पाली सलफ्यूरिक एस्टर के रूप में, रक्त को न जमने देने वाला पदार्थ है। बृटिश ड्रग हाऊस ने इसको बनाया है।

गुण–रक्त के आदान-प्रदान Transfusion में दाता के रक्त को न जमने वाली शक्ति से सम्पन्न करने तथा साईट्रेट के स्थान पर इसे प्रयोग करने (रक्त प्रदान समय) के लिये तथा रक्त प्रदान समय में रक्तस्तम्भन Thrombosis न होने देने के लिए इसका प्रयोग होता है।

प्रयोग मात्रा विधि—रक्त के नमूने इकत्रित करने के लिए १०० इण्टरनेशनल यूनिट (i. u) के १० सी.सी. के एम्पूल का व्यवहार होता है।

रसायनशाला के लिए १००० i.u. की ५ सी. सी. की ट्यूब प्रयोग के लिए आती है।

मात्रा-रक्त प्रदान के समय दाता (doner) को प्रति किलोग्राम शरीर भार पर १००० i. u. का प्रयोग करें, रक्त स्तम्भ Thrombosis की दशा में ७५०० से १५००० i. u. दिन में चार या पांच बार करना चाहिए। इससे रक्त जमता नहीं और जमा हुआ रक्त तरल होने की शक्ति युक्त होजाता है।

विधि-सदैव शिरामार्ग द्वारा देना चाहिए।

हेक्सो बार्बीटोन साल्यूबिल

यह घुलनशील द्रव्य है जो निन्द्रानाश की चिकित्सा के लिए प्रयुक्त होता है। अथवा थोड़ी देर के लिए जब रोगी को बेहोश करना हो तब प्रयुक्त करते हैं।

मात्रा-मार्ग––इसको शिरा मार्ग द्वारा १० प्रतिशत की शक्ति वाले विलियन के रूप में ७-१० सी. सी. तक प्रयोग किया जाता है।

हिस्टामिन

(Histamine)

यह अम्लीय योग है जो कि मुख द्वारा देने पर पाचक रसों द्वारा नष्ट हो जाता है अतः इन्जेक्शन द्वारा ही प्रयुक्त किया जाता है।

गुण– कठिन तन्तुशोथ Fibrositis, स्नायुविक प्रदाह Neuritis, अस्थिगत संधि प्रदाह, वातरक्त Gout, आमवात, आमवातजन्य संधि शोथ, सूर्यावर्त, कण्डु, एकज़ीमा Eczema, कर्णनाद Tinnitus, फोड़े, शिरोभ्रम Vertigo तथा आमाशय में पाचकाम्ल के अभाव Achlor–Hydria की परीक्षा करने के लिए ताकि प्रारम्भिक एवं अन्य प्रकार के रक्तहीनता में भेद ज्ञान होसके, इनका प्रयोग प्रायः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्वचान्तर्गत Subcutaneously ०.३ से १·० मिलिग्राम तक किया जाता है। तथा विद्युत विधि Iontophoresis द्वारा १:५००० की शक्ति में प्रयोग होता है [इस विधि में इसके विलियन में मोटी गद्दी भिगोकर पीड़ा के स्थान पर रखकर उसमें विद्युत की निगेटिव या पाजिटिव धारा छोड़ते है, जैसी भी आवश्यकता होती है, और विपरीत धारा को दूसरी ओर लगा देते हैं।] इसकी मालिश भी होती है।

मात्रा–इसे आवश्यकतानुसार [०·३ से १·० मिलिग्राम तक] आधा से १ सी. सी. परिस्रुत जल में घोलकर (इसकी टिकियां ०·५–१ मिलीग्राम तक की आती है) प्रयोग करते हैं। तथा घुलीघुलाई भी यह आधा और १ सी. सी. की एम्पुल में सील बन्द आती है।

आईडाटोल
(Iodatol)

यह केवल तैल में मिली हुई ४० प्रतिशत शक्ति में आयोडीन है। इसका व्यवहार एक्सरे का फोटू लेने के लिए ५ सी.सी. की मात्रा में अभीष्ट स्थान में इन्जेक्शन लगाकर किया जाता है।

उपरोक्त की तरह आयोडाक्सील Iodoxyl का भी प्रयोग एक्सरे के लिए शिरा द्वारा २० सी. सी. तक किया जाता है।

मार्सेलाईल
(Mersalyl)

यह पारद का एक ऐसा योग है जो टिकिया (मुख द्वारा के लिए), तरल (इन्जेक्शन के लिए) एवं गुदा द्वारा देने के लिए वर्ति के रूप में आता है। इसमें ३८·५ से ४०·५ प्रतिशत तक पारद का संयोग होता है।

विधि-मात्रा––इसका प्रयोग शिरा द्वारा, मासान्तर्गत, तथा फुप्फुसावरणीय कलान्तर्गत होता है। मात्रा प्रायः १ सी. सी. से २ सी. सी. तक रखी गई है। यदि साथ में विटामिन सी का ५०-१०० मिलीग्राम तक प्रतिदिन प्रयोग हो तो यह योग और भी अधिक प्रभावशाली होजाता है।

गुण––शोथ Oedema, विशेषकर हृदय की कमजोरी या कम कार्य करने के परिणाम स्वरूप जब हो और वृक्क के कम काम करने की दशाओं में, जीर्ण वृक्क शोथ, एवं तज्जन्य विकार, सभी प्रकार के शोथ तथा जलोदर में इसका विशेष लाभ होता है। जहां पर डिजिटेलिस जैसी औषधि निष्फल और वर्जित होती है वहां इसके प्रयोग से लाभ उठाया जा सकता है। अन्य पारद के मूत्रल प्रयोगों की तरह इसके प्रयोग के उपरान्त नौशादर का प्रयोग करना चाहिए जिससे मूत्र अधिक होने लगे। जहां हृदयावरोध की दशा वृक्क जनित शोथ के कारण होने के फलस्वरूप हो वहां इसका प्रयोग अवश्य ही करना चाहिए; यकृत जन्य जलोदर में भी प्रयुक्त होता है।

विशेष विधि––साधारण मात्रा १ सी. सी. की है, जो २ सी. सी. तक बढ़ाना चाहिए, तथा ३ से ५ दिन के अन्तर से पुनः देना चाहिए। प्रायः मासांतर्गत ही देने की विधि है, पर यदि जल्दी प्रभाव देखना हो तो प्रारम्भिक इन्जेक्शन शिरामार्ग द्वारा देना चाहिए। परन्तु इसके उपरान्त मांसगत ही इन्जेक्शन लगाए जाने चाहिए। इसके प्रभाव को तीव्र करने के लिए शुद्ध नरसार (नौसादर) का प्रयोग भी करना चाहिये।

मनगेनीज ब्यूटिरेट
(Manganese Butyrate)

यह इसका १ प्रतिशत घोल होता है जो मांसगत प्रति तीसरे या चौथे दिन लगाया जाता है। और प्रायः इसके तीन इन्जेक्शन लगाये जाते हैं। इसकी मात्रा १·५ सी. सी. प्रति बार की है।

गुण––इसके प्रयोग से पूयोत्पादक शोथोत्पादक स्टेफिलो, स्ट्रेप्टोकोकस संक्रमण तथा सुजाक का संक्रमण नष्ट होजाता है। मुहांसे, फुन्सी, फोड़े तथा कार्बन्किल और फुंसियों में अधिकतर प्रयुक्त होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्बाफेन (Merbaphen)

पारद के इस योग का दूसरा नाम नोवासुरोल भी है। इसमें ३९.९ प्रतिशत पारद होता है।

गुण—इसका उपयोग महाशिरा (यकृत जन्य) वृद्धि, जलोदर तथा विविध प्रकार के शोथों पर अत्यधिक सफलता से होता है। यह डिजिटेलिस या अन्य प्यूरिन श्रेणी की मूत्रल औषधियों की अपेक्षा अधिक प्रभावकारी है। जलोदर में इसके साथ-साथ नौसादर भी देते हैं। नौसादर को प्रतिदिन ५-६ ग्राम देते हैं। इससे शरीरस्थ क्षार का अभाव होकर अम्लता बढ़ जाती है और मूत्र अधिक आने की सम्भावना रहती है। मर्बाफेन उस समय और भी अधिक क्रियाशील हो जाता है जब कि पहिले ही से रोगी पर्याप्त मात्रा में नौशादर का प्रयोग करले। यह एक तीव्र मूत्रल Diuretic औषधि है।

मात्रा विधि—मूत्र लाने के लिए या उपदंश विकार शमन हेतु ०.५ से २ सी.सी. तक इसका १० प्रतिशत विलियन प्रयुक्त होता है। सप्ताह में एक या दो बार मांसान्तर्गत या शिरान्तर्गत देना चाहिये।

मूग्रोल (Moogrol)

देखें E. C. C. O. का विवरण, उसी के अनुसार कार्य करता है। कष्ट इत्यादि में प्रयुक्त होता है।

मुथानोल (Muthanol)

यह बिस्मथ हाईड्राक्साइड Bismuth Hydroxide का तैल में घुला हुआ रूप होता है और उपदंश की दशाओं में प्रयुक्त होता है। इसके प्रति दो सी.सी. के एम्पुल में ०.१५ ग्राम विस्मथ आक्साईड Bismuth Oxide होता है।

प्रयोग विधि मात्रा—पहले १० इन्जेक्शन मांसान्तर्गत लगाने चाहिये, फिर १० दिन का विश्राम लेकर पुनः इन्जेक्शन लगावें, जब तक वासर्मन परीक्षा निगेटिव न हो जाए।

यद्यपि हमने बिस्मथ के प्रकरण में बीसियों योगो के नाम दिये हैं पर उनका प्रयोग नहीं दिया, वैसे सभी लगभग एक से ही प्रयुक्त होते हैं। फिर भी हम कुछ योगों का विवरण नीचे देते हैं।

ट्रेपॉल (Trepol)

यह भी विस्मथ का प्रयोग है जो तैल में बनाया गया है। इसमें ६४ प्रतिशत क्रियाशील विस्मथ होता है। चिरस्थाई और प्रयोगोपरांत कुछ भी विषैले लक्षण पैदा नहीं करता।

गुण-प्रारम्भिक और द्वितीयावस्था में जब उपदंश हो तब इसे प्रयोग करते हैं।

मात्रा, मार्ग-मांसान्तर्गत २ सी. सी. (=०.२ ग्राम औषधि जो तैल में घुली हुई है) प्रति तीसरे या चौथे दिन देनी चाहिये जब तक कि कुल मिलाकर २.८ या ३ ग्राम औषधि शरीर में न पहुंच जाय।

निओट्रेपाल
(Neo-trepol)

इसमें ६० प्रतिशत विस्मथ होता है और अति सूक्ष्म चूर्ण रूप में यह आईसोटानिक सीरम मिला रहता है। ट्रेपाल से शीघ्र और अधिक गुणकारी है।

मार्ग मात्रा—मांसगत इसका प्रयोग पीड़ा रहित है, तृतीय उपदंश अवस्था में प्रयोग होता है, तथा उन रोगियों में जिनमें प्रत्यक्ष में कोई भी उपदंशजन्य उपद्रव या चिह्न नहीं होते परन्तु वैसे रक्त की वासर्मन प्रतिक्रिया पाजिटिव होती है। इसकी १.५ से २ सी. सी. तक की मात्रा प्रति ३-४ दिन पर प्रयोग करनी चाहिये।

विस्मोजिनोल
(Bismogenole)

यह भी विस्मथ का योग है जो तैल के आधार पर बना होता है, प्रति सी.सी. में ०.०५ से ०.०६ ग्राम बिस्मथ होता है। इसका पूरा कोर्स १५-२० इन्जेक्शन (मांसान्तर्गत) प्रति तीसरे दिन १ सी. सी. देकर पूरा किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिस्मथ आर्सफेनामीन सल्फोनेट

(Bismuth Arsphenamine sulphonate)

इसका दूसरा नाम बिस्मार्सेन भी है। पीले रंग का घुलनशील योग है। जिसमें मल्ल की मात्रा १३ प्रतिशत और बिस्मथ २४ प्रतिशत होती है। प्रारम्भिक उपदंश में ०.१ से ०.२ ग्राम तक लाभदायक है।

विधि-मांसगत इसका प्रयोग होता है।

मात्रा-०.२ ग्राम को १ सी. सी. में घोलकर उसमें ०.२ प्रतिशत के बुटान का घोल २ बूंद मिला लिया जाता है। प्रति सप्ताह दो इन्जेक्शन लगाने चाहिये।

क्वीनीन बिस्मथ आयोडाईड

इसका दूसरा नाम quinby है, इसमें २० प्रतिशत विभिन्न प्रकार का बिस्मथ होता है। इसके तैल द्वारा बने घोल को ३ सी. सी. की मात्रा मांसान्तर्गत प्रति तीसरे चौथे दिन लगानी चाहिये।

फेराई आर्सेनास

(Ferri Arsenas)

लौह और संखिया से बनी हुई यह दवा है। दोनों औषधियां रक्तवर्धक मानी जाती हैं। इसको और भी क्रिया- शील करने के लिए कभी कभी इसमें स्ट्रिकनीन का भी मिश्रण कर दिया जाता है। इसका प्रयोग रक्तहीनता Anemia, श्वेताणु वृद्धि Leukemia अजीर्ण दुर्बलता तथा अतिसार जो पुराना पड़ गया हो, शाथ इत्यादि में इसका विलक्षण कार्य होता है।

इसको और भी नामों से प्रस्तुत किया जाता है, जैसे-आयरन आर्सेनेट विद न्यूक्लीन इत्यादि ऐसे योग जिनमें उपरोक्त के अतिरिक्त फास्फेट इत्यादि का मिश्रण होता है। इनके विषय में पीछे लौह के प्रकरण में काफी लिखा जा चुका है।

फाईसोस्टिग्मीन

(Physostigmine)

इसका प्रयोग यदि बिलियन बनाकर नेत्र में डाल कर किया जाय तो यह नेत्र तारे को अत्यन्त संकुचित कर देता है। वैसे इन्जेक्शन विधि से प्रयुक्त करने पर भी इस प्रकार का प्रभाव देखा जाता है; इसके अतिरिक्त यह वमन, अतिसार द्वारा उदर को खाली करके आध्मान विबन्ध को नष्ट करती है। इसके प्रयोग से विविध प्रकार के स्रावों की वृद्धि हो जाती है जैसे लालास्राव, स्वेद, आंसू इत्यादि पर मूत्र, पाचक पित्त और दूध के स्राव पर इसका कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता।

स्नायु-मण्डल को यह अवसादित (Depress) करता है, अतः स्नायुविक उत्तेजना को कम करने के लिए इसका प्रयोग करते हैं।

माग मात्रा—अवस्त्वगीय (Subcutaneously) इसको १।६० ग्रेन तक देते हैं, मांसगत भी देने का कहीं-कहीं विधान मिलता है। सप्ताह में दो बार इसकी मात्रा १।१०० ग्रेन से १।६० ग्रेन तक होनी चाहिए। अधिक मात्रा के प्रयोग से अन्य उपद्रव पैदा हो जाते हैं। उनको दूर करने के लिए सदैव एट्रोपीन १।३० ग्रेन अवस्त्वगीय या स्ट्रिकनीन का प्रयोग करना चाहिये। कृत्रिम श्वास भी दिलाते रहने से और अधिक आरोग्य होने की सम्भावना रहती है।

फाईब्रोलाईसीन

(Fibrolysin Merk)

गुण—श्वेत वर्ण की दानेदार कण रूप में यह औषधि होती है और एम्पुल में घुली हुई भी २ तथा ५ शीशी में आती है। इसका व्यवहार उस दशा में अत्यधिक गुण करता है जब रक्त में श्वेत कणों का ह्रास होकर शरीर की श्लैष्मिक कलायें खराब होने लगती हैं जैसे सुजाक के संक्रमण में मूत्र-नलिका की श्लैष्मिक कला विकृत हो जाती है। इस दशा में यह काम करती है।

मात्रा विधि—इसे मांसगत तथा त्वचान्तर्गत २ शीशी से ४ शीशी तक प्रयोग करें। ५ शीशी तक भी देते हैं। एक एक दिन पर १-१ इन्जेक्शन चार दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देकर रूक जांय, फिर कुछ दिन ठहर कर पुनः इसी प्रकार चालू करें।

इसका उपयोग वहां भी किया जाता है जहां व्रण होने के बाद चिह्न (Scar) निशान बनकर वह स्थान सुकड़ जाता है, उसको ढीला करने के लिए, और अन्न प्रणाली, मूत्र नलिका, गुदा के व्रणों के ठीक होने के बाद वहां के संकोच को दूर करने के लिए। ग्रहणीद्वार (Pylorus) के अवरोध और आमवात जन्य संधि प्रदाह (Rheumatoid Arthritis) में यह प्रयुक्त होती है।

फाईब्रोलाइसिस

(Fibrolysis B. I.)

यह भी उपरोक्त चीज है जो कि सोडियम सेलिसिलेट और थियोसिनामिन का योग है, और उपरोक्त गुणों के लिए उपरोक्त विधि के अनुसार प्रयुक्त होती है।

फ्रेसीस फेरूगिनस

(Fraisse's ferrugenous)

यह आयरन आर्सेनेट, या फेराई आर्सेनेट का ही रूप है, पीछे इसका वर्णन देखें।

फेरोमेनगनोज

(Ferromanganese)

यह लौह और मेनगनीज के योग से बनाया जाता है।

गुण—मालाणु (Staphylococcal) संक्रमण जन्य रोगों पर इसका प्रभाव अत्युत्तम पड़ता है। और अधिकतर जहां रक्त सम्बन्धी विकार होते हैं, वहां इसका प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त लौह के सम्मिश्रण से उसका रक्तवर्धक प्रभाव भी विशेष कर होता है। जब इसमें मल्ल का भी मिश्रण कर दिया जाता है तब उसे फेरोमेनगनोज आर्सेनिकम कहते हैं। दोनों के गुण भी समान हो से हैं।

मात्रा, मार्ग— मांसान्तर्गत विधि से आधी शीशी से डेढ़ शीशी तक। कुछ चिकित्सकों का मत है कि इन्जेक्शन की पिचकारी को एक सूई से भरना चाहिए तथा इन्जेक्शन लगाने के लिए दूसरी सूई को पिचकारी में फिट करके तब इन्जेक्शन लगाना चाहिए। इन्जेक्शन सदैव चूतड़ के गहरे मांस में लगाना चाहिए। मात्रा को निम्न प्रकार से लगाते रहना चाहिए।

प्रथम दिन	०·५ सी. सी.
पांचवें दिन	०·७५ सी. सी.
नवमें दिन	१ सी. सी.
तेरहवें दिन	१ सी. सी.
सत्रहवें दिन	१·५ सी. सी.
इक्कीसवें दिन	२ सी. सी.

एम्पुल टूटने के बाद तुरन्त उसका प्रयोग कर लेना चाहिये, शेष बची औषधि को फेंक देना ही ठीक होता है।

बेन्जेड्रीन सल्फेट

(Benzadrine Sulphate)

गुण—यह तब प्रयोग की जाती है जब बेहोश करने, शून्यता संज्ञाहरण औषधियों के बुरे उपद्रव पैदा होजाते हैं, उन उपद्रवों की शान्ति इससे हो जाती है। यह उन औषधियों का प्रतिविष Antidote का काम करती है।

मात्रा मार्ग—अधस्त्वगीय विधि से ५ मिलिग्राम से १० मिलिग्राम तक।

ब्रलियन्ट ग्रीन

(Brilliant Green)

यह सल्फेट या यशद के लवण के रूप में कोलतार का १ रङ्गीन योग होता है प्रायः सल्फेट ही सुनहरी पीले वर्ण का होता है और प्रयोग किया जाता है। इसके घुलने से हरा विलियन बनता है। इसका प्रयोग बाह्य उपचार में १:१००० की शक्ति में व्रणों को शोधन, धोने इत्यादि के काम में आता है। यह अत्यधिक जीवाणुनाशक होता है।

इसी के साथ क्रिस्टल वायलेट या जेनशियन वायलेट मिलाकर भी प्रयुक्त किया जाता है, प्रथम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम इस वायलेट की चर्चा करके फिर दोनों के मिश्रण का वर्णन करेंगे।

जेनशियन या क्रिस्टल वायलेट

यह भी कोलतार के रङ्ग हैं, और ग्राम पाजिटिव Gram Positive जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए बहु-विधि प्रयुक्त होता है। इसका घोल जल में बन जाता है, परन्तु नार्मल सेलाईन (लवणोदक) में नहीं बनाया जा सकता क्योंकि यह लवण के योग मे बहनशील हो जाता है। बाह्य प्रयोगार्थ यह खाज, दाद, छाजन, फुंसियों में प्रयुक्त किया जाता है। इसकी विधि साधारणतया वाह्य प्रयोग के लिये विलियन बनाने की यह है (जेनशियन वायलेट २२ ग्रेन, स्प्रिट रेक्टीफाइड २ ड्राम, जल एक औंस)।

इसका प्रयोग शिरान्तर्गत विधि से विषाक्तावस्था Septicaemia, हृदयान्तरकला प्रदाह Eudocaditis, अन्तर्कपालकला प्रदाह Eucephalitis, इत्यादि में इसका प्रयोग करते हैं, परन्तु आशातीत लाभ प्राय: नहीं होता और कालान्तर में दुष्परिणाम भी होजाते हैं।

मात्रा—शिरान्तर्गत विधि से ०·००३ से ०·००७ ग्राम प्रति किलोग्राम शरीर भार के लिए अर्थात् २ से ७ ग्रेन तक प्रति १० स्टोन के भार पर जो कि १.४ प्रतिशत से १ प्रतिशत की शक्ति में प्रयुक्त किया जाना चाहिये।

अब उपरोक्त दोनों का मिला हुआ योग भी ३ सी. सी. से १०-११ सी. सी. तक त्वचान्तर्गत विधि से कुष्ठ तथा कुष्ठ जन्य व्रणों के प्रक्षालन के अतिरिक्त वैसे अभ्यान्तरिक प्रयोग द्वारा भी प्रयुक्त होता है। कुष्ठ की उन्नत ग्रंथियों में विशेष लाभ होता है। इसका योग इस प्रकार है—

त्रिलियन्ट ग्रीन ०·५ ग्राम, क्रिस्टलवायलेट ०·५ ग्राम, अबसोल्यूट अलकोहल २५ सी. सी., परिस्रुत जल २५०० सी. सी.।

ब्रांकोसाल (Bronchosol)

पीछे वर्णित कर्पूर के प्रकरण में Campho-Quinine का यह दूसरा नाम है, और यह उसी प्रकार मांसगत विधि से प्रयुक्त होती है। भूलकर भी इसे शिरा द्वारा प्रयोग नहीं करना चाहिए। इसका व्यवहार तीव्र कास, जीर्ण कास, श्वास, दमा, ब्रांको-निमोनिया, ज्वर, प्रतिश्याय, इनल्फुएंजा इत्यादि एसी ही व्याधियों पर इसका प्रयोग करना चाहिए।

विसाक्सौल (B. D. H.)

(Bisoxyl)

यह औषधि विस्मथ का शुद्ध रूप है जिसमें प्रति सी. सी. में लगभग ०·१ ग्राम विस्मथ होता है।

गुण—इसका प्रयोग उपदंश और याज, उपदंश जन्य विविध उपद्रवों में जहां पारद और मल्ल का प्रयोग वर्जित है वहां होता है।

मार्ग मात्रा—प्रति सप्ताह इसका प्रयोग मांसगत, विशेषकर नितम्ब के गहरे मांस में इसको प्राय: १ सी. सी. से आरम्भ करके १ सी. सी. तक देना चाहिये।

बेलाफोलीन

(Bellafoline)

यह बेलाडोना नामक औषधि का सार है, और जहां एट्रोपीन का प्रयोग करना हो वहां इसका प्रयोग करना चाहिए। स्नायुविक मण्डल पर इसका प्रभाव उत्तेजक और शामक दोनों प्रकार से पड़ता है। कुछ स्राव जैसे स्वेद, श्लेष्मा, आमाशय इत्यादि के पाचक रस, स्वेद इत्यादि का निकलना कम हो जाता है। इसके प्रयोग से हृदय साधारणतया उत्तेजित हो जाता है इसका विशेष प्रभाव पिंगल नाड़ी मण्डल पर पड़ता है।

गुण—स्रावों जैसे थूक इत्यादि के अधिक आने को रोकती है, विबंध, ग्रहणीगत व्रण या पित्ताशयज शूल, आमाशय का निम्न द्वार बंद हो जाना, मूत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं जनन मार्ग संकोच्य में, इस संकोच्य अवस्था को प्रसारित करने के हेतु इसका व्यवहार होता है। स्त्रियों के कष्टार्तव, मूत्राघात, मूत्र-कृच्छ, वृक्क एवं उदरशूल इसी प्रकार के विविध शूलों में उसका उपयोग होता है।

श्वास सम्बन्धी विकारों में जहां बलगम अधिक निकलता हो, श्वास, दमा इत्यादि में इसका प्रयोग ११२ सी. सी. का अकेले। इसके साथ कैल्शियम ग्लूकोनेट मिलाकर प्रयुक्त करने से आशातीत लाभ होता है। स्नायुविक विकार, हृदयाव पीड़न संकोचाधिक्य, रात्रिस्वेदन विष के उपद्रव शमनार्थ, अहिफेन विष निवारणार्थ, और किसी भी कारण से होने वाली वमन में इसका प्रयोग किया जा सकता है।

मात्रा—१।२ सी. सी. से १ सी. सी. तक तीनों प्रकार अर्थात् अधस्त्वगीय, मांसान्तर्गत, और शिरा मार्ग द्वारा भी प्रयुक्त किया जा सकता है। कष्टार्तव में १ सी. सी. का प्रयोग सचमुच पीड़ा का अनुभव नहीं होने देता और रजोनिवृति सहज पूर्वक हो जाती है।

बोरोकेन

Borocaine (B. D. H.)

विषैले उपद्रवों से रहित स्थानीय शून्यता उत्पादक औषधि है, जिसका व्यवहार छोटे मोटे शल्यकर्मों में और विशेष कर दांत की चिकित्सा (दांत उखाड़ने, मसूढ़ों को छीलने काटने इत्यादि कर्मों) में प्रयोग होता है। इसका प्रयोग स्थानीय शून्यता उत्पादन करने के ही लिए होता है।

मात्रा विधि—अधस्त्वगीय, अथवा दंत मांसगत १ सी. सी. या अधिक। इसके २ प्रतिशत से ५ प्रतिशत विलियन का प्रयोग करना चाहिए

इसके साथ कभी-कभी एड्रेनिलिन की मिली हुई टिकियां आती हैं, वैसे बिना एड्रेनिलिन की एक ०·०५ ग्राम की टिकिया को १ सी. सी. में घोलने पर ५ प्रतिशत तथा २½ सी. सी. में घोलने पर २ प्रतिशत का घोल बन जाता है।

इसी प्रकार बोरोकेन ०.०३ ग्राम, एड्रेनिलिन बोरेट ०.००००२५ ग्राम की एक टिकिया १ सी.सी. जल में मिलाने पर ३ प्रतिशत का घोल बना देगी जिसमें १:४०००० शक्ति में एड्रिनिलीन बोरेट होगी।

पहले वाली (बिना एड्रिनेलीन के) २ गोली और दूसरी प्रकार की १ गोली लेकर यदि ६ सी. सी. जल में घोली जावे तो इसका २ प्रतिशत से कुछ ऊंचा शक्ति का घोल बनेगा जिसमें एड्रिनेलीन बोरेट १ में २४०००० शक्ति में होगी।

वलेरियन

(Valerian)

यह १० ग्रेन से ३० ग्रेन तक आधा से १ सी.सी. द्रव में घुली हुई है। जितनी औषधि की आवश्यकता हो उतनी प्रयोग करनी चाहिए।

गुण- इसका प्रयोग स्नायुविक रोगों जैसे योषापस्मार, मस्तिष्क शूल, तथा अन्य स्नायुविक शूलों में होता है। मृगी, कास, हिक्का, बच्चों में क्रिमियों के कारण होने वाले दौरे जो आक्षेप के रूप में होते हैं इसका प्रयोग किया जाता है। इसके प्रयोग के लिए उपयुक्त अवस्था तभी समझी जाती है जब किसी भी रोग में खिंचावट, तनावट और कम्प जैसे लक्षण पैदा हो जाएं। यह उन सभी लक्षणों को दूर करता है।

मात्रा, विधि—त्वचा के नीचे Hypodermically इसको आधा से १ सी. सी. तक प्रयोग करें।

मेगनेशियम सल्फेट

(Magnesium Sulphate)

यह खिलाये जाने वाला साल्ट है जिससे प्रायः विरेचन हो जाते हैं। परन्तु इन्जेक्शन द्वारा प्रयोग करने पर प्रायः विरेचक गुण नहीं होते।

गुण—इसको धनुर्वात Tetanus में जब आक्षेप होते हों, रोगी अचेत हो जाता हो तब यह अपना विचित्र गुण व्यक्त करता है। यदि रोग आरम्भ होते ही चिकित्सा चालू करदी जावे तो रोग जन्य आक्षेप आगे बढ़ने नहीं पाता। इसके अतिरिक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्भ विषमयता में भी यह अपना अति विचित्र कार्य करता है। इसको ऐसी अवस्थाओं में अवश्य देना चाहिए गर्भ-विषमयता में जब रुग्णा अचेत हो जाय तब बार २ इसका प्रयोग करने से सभी लक्षण दूर हो कर प्रसूता को लाभ पहुंचता है।

मात्रा-इसको २० प्रतिशत से ५० प्रतिशत की शक्ति तक २ से ४ सी. सी. तक देते हैं।

विधि—धनुर्वात तथा सौपुम्नीय शून्यता उत्पन्न करने के लिए इसका २५ प्रतिशत शक्ति का विलियन २-४ सी. सी. तक सौम्पुनगत विधि से देना ठीक होता है। धनुर्वात में यह आक्षेप ऐंठन को ही दूर कर देता है, यह उस रोग का इलाज नहीं है। इसी प्रकार गर्भ-विषमयता में इसके १० प्रतिशत के घोल को १५०-३७५ बूंद (मिनिम) की मात्रा में शिरांतर्गत देने से इसके आक्षेप भी दूर हो जाते हैं। मृगी इत्यादि में इसका ७.३ प्रतिशत का घोल ४५ मिनिम की मात्रा में प्रयुक्त करने से भी लाभ होते देखा गया है। लक्षण प्रायः शान्त होजाते हैं। पर यह इन रोगों की औषधि न होकर लक्षणों को मिटाने के लिये अन्यर्थ है। अतः अन्य रोगनिवारक उपाय भी करने चाहिये।

एम. बी. ६९३
(M. &. B. 693)

छेसौ तिरानवे के नाम से जो गोलियां मशहूर हो चुकी हैं, उसी का यह घुलनशील लवण है, यह सल्फा श्रेणी की औषधि सल्फापाईरीडीन सोडियम है और प्रति एम्पुल में १ ग्राम सल्फापाईरीडीन होती है।

गुण-इसका व्यवहार वहां किया जाता है जहां मुख द्वारा इसे देना असम्भव हो या जब कि प्रारम्भिक मात्रा को शीघ्र शरीर में पर्याप्त मात्रा में ला देना अभीष्ट हो। तीव्र रोगों की दशा में इसकी यही विधि होती है कि प्रारम्भिक मात्रा अधिक देकर फिर अन्य मात्रायें या तो मुख द्वारा दी जाने लगती हैं अथवा विलम्ब से ही इन्जेक्शन लगाते रहते हैं। सल्फा श्रेणी की अन्य औषधियों की तरह यह विशेषकर निमोनियां उत्पादक जीवाणुओं, मस्तिष्कावरण प्रदाह, सूजाक, व्रणमेहोत्पादक जीवाणु, रक्तस्थिति मालाणुजन्य संक्रमणों को दूर करने के लिए यह विलक्षण वस्तु है। इसके अतिरिक्त मूत्रमार्ग संक्रमण, दुष्ट व्रणों, नेत्राभिष्यन्द, विविध प्रकार के संक्रमणों में इसका प्रयोग होता है। जहां जहां एम. बी. ६९३ का व्यवहार तथा अन्य विविध सल्फाश्रेणियों का प्रयोग अधिकतर होता है वहां इसे व्यवहार किया जाता है

विधि—यों तो शिरान्तरगंत Intravenously अथवा निरन्तर शिरान्तर्गत प्रवाह जो कि इसे लवणोदक में घोल कर देते हैं दिया जाता है। इसके अतिरिक्त यह गहरे मांस पेशियों में बड़ी सावधानी से लगाया जाता है। अन्य विधि अपनानी ठीक नहीं है क्योंकि जरासी असावधानी से नाड़ियों की रचना इत्यादि को हानि पहुंच सकती है। अतः औषधि के साथ जो व्यवहार विधि आती है उसी के अनुसार प्रयोग करना चाहिऐ।

मात्रा-तीव्र रोग दशा में प्रथम २-३ ग्राम देकर फिर प्रति ६-८ घंटों पर दो दो ग्राम देना चाहिए। या १-१ ग्राम हर चौथे घण्टे पर दें। ज्यों ही दशा सुधर जाय मुख द्वारा प्रयोग चालू कर देना चाहिए। प्रारम्भिक मात्रा शिरान्तर्गत ही देनी चाहिये। या कुछ शिरा द्वारा और कुछ मांसान्तर्गत दे देनी चाहिए और मांस द्वारा कभी भी १ ग्राम से अधिक एक बार में न दें और जहां तक सम्भव हो मांसगत इंजेकशन बहुत ही कम दिए जांय निरन्तर शिरागत प्रवाह विधि उत्तम विधि है, इस विधि से १५-२[illegible] ग्राम तक २४ घंटे में दी जा सकती है। जिसको [illegible] २-३ लिटर सामान्य लवणोदक में घोल लेना चाहिए। शिरा मार्ग देने के लिए १ ग्राम औषधि को दस-बीस सी. सी. परिस्रुत जल में मिलाकर हल्का कर लेना चाहिए और तब देना चाहिए, इस प्रकार को अनिष्ट होने की सम्भावना नहीं रहती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मस्क (मुस्क) (Musk)

मुश्क या कस्तूरी का ईथर में विघुलित रूप है। मुश्क के योगों द्वारा मूल्यवान औषधियां निर्मित होती हैं।

वातज विकार शमनार्थ तथा जीवनशक्ति को पुनः स्थापित करने के लिए इसका प्रयोग होता है। इसके प्रयोग से शरीर में कामवृद्धि होती है तथा आत्तेर की निवृति होकर दशा सुधर जाती है। जब किसी भी रोग में रोगी मरणासन्न होता है, शरीर शीतल होकर जीवन शक्ति समाप्त होकर नाड़ी लुप्त हो हृदय गति बन्द होने को होती है उस समय सारी आशा इसके प्रयोग पर लगी रहती है और देखा भी गया है कि ऐसी दशा में कस्तूरी के योगों द्वारा प्राणों की रक्षा अनिवार्य हाजाता है इसका प्रयोग प्रायः निम्न अवस्थाओं में किया जाता है।

(१) जब नाड़ी की गति क्षीण होती जारही हो दबाने पर नाड़ी अनुभव न हो, Arterial Tension न रहे।

(२) रोगी की जीवन शक्ति बिल्कुल लुप्त होने को हो, और निराशा से वह इधर-उधर हाथ पांव फेंकता हो।

(३) सन्निपातज रोगों में जब प्रलाप का वेग आरम्भ हो और रोगी अस्फुट शब्दों में कुछ कहता हो।

(४) समीपस्थ वस्तुओं को नोचने-फाड़ने का प्रयत्न करता हो।

(५) शरीर शीतल होकर शीतांगावस्था हो, स्वेद भी ठण्डा हो।

ऐसी अवस्था में कस्तूरी का 'मस्क इन ईथर' या मस्क और कर्पूर मिलित योगों का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। साथ में तैल में कर्पूर 'केम्फर इन आयल' का भी देते रहना चाहिए।

यह अन्य रोग जन्य मूर्च्छा हिक्का इत्यादि में भी गुणकारी सिद्ध हुआ है।

मात्रा—१ सी. सी. ईथर में १/४ से १/२ ग्रेन तक कस्तूरी घुली हुई प्रयोग की जाती है।

मार्ग—त्वगान्तर्विधि से Subcutaneously।

मार्फ़िया (Morphia)

यह अहिफेन का क्रियाशील सार है। और अहिफेन की तरह इसका प्रभाव होता है। यह घुली हुई और टिकियों के रूप में भी आती है

गुण—जब किसी भी कारण से नींद न आती हो, पीड़ा हो रही हो, वमन इत्यादि का उपद्रव हो, जब शरीर के अभ्यान्तरिक अङ्गों में शूल हो जैसे यकृत के पित्ताशयजशूल, वृक्क शूल 'दर्द गुर्दा', आमाशयज, आंत्रज शूल हो तब इसका एक इन्जेक्शन पीड़ा से मुक्त कर रोगी को सुला देता है। इनके अतिरिक्त शल्यक्रिया जन्य, प्रसवोपरांत पीड़ाओं को भी विशेष लाभ होता है।

इसके अतिरिक्त आंत्रज रक्तस्राव जो अतिसार इत्यादि में होता है बन्द होजाता है। धनुर्वात तथा गर्भविषमयता Eclampsia में इससे विशेष लाभ मिल जाता है। रोगी की असह्य वेदनाएं पीड़ाएं जिनके कारण वह बेताब हो, शान्त होजाती हैं। जब प्रसव के समय गर्भाशय मुख काठिन्य से प्रसव में विलम्ब और पीड़ा हो तब इन्जेक्शन द्वारा उसे भी लाभ देता है।

क्योंकि अकेला मार्फिया, अहिफेन की तरह हृदय और श्वास संस्थान को अवसादित करके मन्द कर देता है, भ्रम, शिरोभ्रम होने की आशंका रहती है अतः इसका प्रयोग जब भी किया जाए तभी इसको अकेला व्यवहार न करके साथ में एट्रोपीन का भी प्रयोग करना चाहिये, दोनों के मिले हुये योग प्रायः मिलते हैं।

दूसरी बात यह कि मार्फीन का प्रयोग दुबल, बालक तथा वृद्ध को नहीं करना चाहिये, यदि आवश्यकता ही हो तो अत्यल्प मात्रा में देना चाहिये नहीं तो रोगी की मृत्यु होजाएगी। जब रोगी के नेत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाल हों और वह प्रलाप कर रहा हो तब भी इसका प्रयोग भूल कर भी नहीं करना चाहिये।

इसके निम्न विशेष योग शुष्क तथा तरल रूप में मिलते हैं

शुष्क टिकियों के रूप में मिलने वाले योग—

(१) मार्फीन सल्फेट की गोलियां—जो १।२, १।३, १।४, १।६, १।८, १।१० ग्रेन तक की आती हैं।

(२) मार्फीन विद एट्रोपीन की गोलियां, ये भी उपरोक्त शक्तियों में आती हैं।

(३) मार्फीन सल्फ विद एर्गटन साईट्रेट-ये गर्भाशय की पीड़ा जो प्रसव या बिना प्रसव के होती है, दूर करती हैं।

(४) हायोसीन मार्फीन को की गोलियां-इसमें—

हायोसीन हाईड्रोब्रोमाईड	१।१२० ग्रेन
मार्फीन हाइड्रोक्लोर	१।४ ग्रेन
एट्रोपीन सल्फ	१।१६० ग्रेन

ये १-१ सी. सी. में होती हैं।

(५) मार्फीन हाईड्रोक्लोर की टिकियां—

तरल रूप में भी इन्हीं का योग इतने ही परिमाण में प्रति सी. सी. द्रव में घुला हुआ मिलता है जैसे माफीन सल्फ, मार्फीन हाडोक्लोराइड, मार्फीन हाईपोफास्फाईट, मार्फीन तथा एट्रोपीन।

प्रयोग-यह अधस्त्वगीय मार्ग Hypodermically दी जाती है।

विशेष--जब रोगी को मार्फीन देना हो तो प्रथम यह जान लेना चाहिए कि रोगी अहिफेन का तो आदी नहीं है, और यह कि इसके लगा देने के बाद कमरे में सभी उत्तेजक वार्तालाप बन्द करदी जाएँ किसी प्रकार का भी विघ्न उसकी निन्द्रा में न पड़े इसका ध्यान रखना चाहिए। बच्चों को जो दूध पीते हैं इसका प्रयोग कभी भी नहीं करना चाहिए।

मर्करी सल्फाईड
(Mercury Sulphide)

पारद और गन्धक का योग है। इसका गुण ठीक आयुर्वेदोक्त कज्जलि के समान होता है।

गुण—उपदंश विकारों में तथा रक्तदोष, चर्मरोग एवं कुष्ठ की उन व्याधियों में जिनकी उत्पत्ति उपदंश से होता है।

मार्ग एवं मात्रा—मांसान्तर्गत इसे सप्ताह में दो बार १ शीशी से ५ शीशी तक देते हैं।

पारद के अन्य योग सफलता पूर्वक व्यवहृत होते हैं, अतः उनका प्रयोग जब फलप्रद न हो तब इसे दें।

मेपाक्रीन (Mepacrine)

पर्याय कीनाक्रीन तथा एटाब्रीन म्यूसोनेट वैसे यह मुख द्वारा व्यवहृत होती है, पर जब मुख द्वारा दी गई मात्रा लाभ न करे तब इन्जेक्शन से ही विशेष लाभ होता है।

गुण—मलेरिया की यह उत्कृष्ट औषधि है। इसको मुख द्वारा देने की जब व्यवस्था न हो सके तब इसे परिस्रुत जल में जिसे पहले गर्म कर लिया जाए और फिर उसमें १ टिकिया घोलकर २४ घण्टे में दो या तीन बार इन्जेक्शन द्वारा दिया जा सकता है। एक बार में इसकी मात्रा ०.१० ग्राम होती है। यह स्मरण रहे कि मुख द्वारा दी जाने वाली वस्तु मेपाक्रीन हाईड्रोक्लोराइड है और इन्जेक्शन द्वारा दी जाने वाली वस्तु मेपाक्रीन मिथेनी सल्फेट है।

इसका प्रयोग इन्जेक्शन द्वारा बहुधा उस समय विशेष रूप से होता है जब रोगी की दशा चिन्ताजनक होगई हो, वमन हो रही हो तथा मलेरिया का प्रभाव मस्तिष्कगत हो गया हो।

विधि—मात्रा का निर्देश तो ऊपर हो गया है, इसको मांस-पेशीगत देना चाहिए।

कीनाक्रीन साल्यूवल
(Quinacrine Soluble)

यह ऊपर वर्णित मेपाक्रीन मियनी सल्फेट ही है, और मे बेकर कम्पनी का बनाया हुआ है।

मात्रा—०.१ ग्राम से ०.३ ग्राम तक मांस पेशीगत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्क्यूरोक्रोम

(Mercurochrome)

इसमें २३ से २४ प्रतिशत पारद होता है इसका ०.४%. से ०.५%. के घोल में प्रतिकिलोग्राम शरीर भार पर ०.००३ ग्राम से ०.००५ ग्राम प्रयुक्त करना चाहिए।

गुण—अभ्यान्तरिक विषमयता Internal (Antiseptic) Septicaemia जैसे प्रसवोपरान्त होने वाली विषमयता, मस्तिष्कावरण प्रदाह जन्य विषमयता, निमोनिया, सूजाक, मूत्रसंस्थान का संक्रमण पूयमयता Pyaemia, विसर्प, इत्यादि में इसका प्रयोग किया जाता है। परन्तु फल विशेष आशा जनक नहीं रहे।

मार्ग—शिरान्तर्गत इसको उपरोक्त वर्णित मात्रा में प्रयुक्त करना चाहिये।

मर्क्यूरिक डाययूरेटिक

(Mercuric Diuretic)

(पारद के मूत्रल योग)

कहीं-कहीं पर पारद के मूत्रल योग आये हैं, उनके प्रयोग में विशेष सावधानी बरतनी चाहिए, अतः उपरोक्त नाम से कोई दवा नहीं मिलती, केवल यहां पारद के मूत्रल योगों की प्रयोग विधियों का ही उल्लेख करेंगे।

पारद के मूत्रल योग अत्यन्त तीक्ष्ण प्रभावशाली होते हैं। अतः प्रयोग पूर्व अल्प मात्रा रोगी को इन्जेक्शन लगाकर उसकी पारद के लिए सह्यासह्यता देख लेनी चाहिए फिर जब देख लें कि रोगी उसे सहन कर लेता है तब अधिक मात्रा प्रयुक्त कर सकते हैं। रोगी को इन्जेक्शन लगाने से कम से कम १२-२४ घंटे पूर्व नौशादर का मुख द्वारा प्रयोग करना चाहिए, अगर नौशादर देने का अवसर नहीं मिलता तो इन्जेक्शन लगाने के बाद भी तुरन्त दे देना चाहिए। इसका प्रयोग जब भी करें तो निम्न बातों, रोगों तथा दशाओं का ध्यान अवश्य रखें क्योंकि इन रोगों में इसका प्रयोग वर्जनीय है।

(१) जब ज्वर हो।

(२) कामला, पाण्डु (Jaundice) रोग हों।

(३) जब मूत्र कम उतरता है या बनता ही न हो (Suppression of urine) या मूत्र में रक्त आता हो।

(४) अतिसार का भयङ्कर वेग हो।

(५) रोगी अति दुर्बल एवं क्षीण हो, कमजोरी अत्यधिक हो गई हो।

(६) रोगी के वृक्कों में तीव्र शोथ हो, वृक्क प्रक्षित हों।

(७) मूत्र की अपेक्षाकृत घनत्व १'१५ से अधिक हो।

(८) शरीर से रक्तस्राव हो रहा हो।

(९) जब हृदय मांसगत विकार (Myocardial disease) हो।

तात्पर्य यह है शरीर से जब किसी भी मार्ग द्वारा तरल का निकास हो रहा हो तब मूत्रल प्रभाव के लिए पारदीय मूत्रलों का प्रयोग कभी भूल कर भी नहीं करना चाहिये, उसका फल यही होगा कि या तो वे रोग और अधिक बढ़ जायंगे, अथवा पारद का निकास ही न हो सकेगा, और अभीष्ट लाभ होने की आशा जाती रहेगी।

मेथिलीन ब्ल्यू (Methylene blue)

यह एक गहरे नीले रंग की दवा है जो मुख द्वारा प्रयुक्त होती है परन्तु इन्जेक्शन द्वारा भी इसे दिया जाता है।

मात्रा—इसका १० प्रतिशत शक्ति का घोल मांस तथा शिरा द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। एक बार में ५ बूंद से १०० सी. सी. तक प्रयुक्त की जाती है।

गुण—इसका गुण वैसे तो जीवाणु नाशक है, परन्तु यह अनेकों विषों का भी प्रतिविष है। विशेष करके पोटाशियम साईनाईड जैसे भयंकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उग्र बिष तथा सल्फा श्रेणी की औषधियों के विषों को दूर करने के लिये अत्युत्तम कार्य करता है। जब जहरीली गैस के प्रभाव से रोगी आक्रान्त हो गया हो तब इसको ग्लूकोज के साथ मिला कर उसके शरीर में प्रविष्ट करके प्राण बचाये जा सकते हैं, कुष्ठ रोग में इसका १ प्रतिशित शक्ति का १०·२० सी.सी. की मात्रा में प्रयोग करने से कुछ दिनों में लाभ दिखाई देने लगता है। चातुर्थिक विषम ज्वर में खाने मात्र से ही रोग ठीक हो जाता है।

इन सब रोगों के अतिरिक्त इसका व्यवहार वृक्क की कार्य क्षमता परखने के लिए इसको नितम्ब के मांस भाग में प्रविष्ट कर दिया जाता है और इस हेतु १० प्रतिशत का ५ बूंद नितम्ब मांसगत प्रविष्ट करके देखते हैं। १०-१५ मिनट के बाद मूत्र में इसका वर्ण आने लगता है। परन्तु अब इसका प्रयोग इस प्रकार की जांच के लिए बंद कर दिया गया है और इण्डिगो कार्मीन से काम लेने लगे हैं।

इसका विलियन बनाकर आटोक्लेव में रख कर गर्म करके पूतिकृत कर लेना चाहिये। और तब प्रयोग करना चाहिए। इसके निरंतर प्रयोग से कभी-कभी मूत्राशय या आंतों में जलन होने का उपद्रव तो हो सकता है और कोई उपद्रव नहीं होता।

विधि—इसे शिरागत या मांसान्तर्गत दिया जा सकता है।

मोरनाईल (Moranyl)

यह वेयर कम्पनी की २०५ नम्बर की दवा है जो कि श्वेतवर्ण के चूर्ण रूप में जल में घुलनशील होती है।

गुण—सौषुम्नागत ऐसे जीवाणुओं के विकार में जिनमें अधिक नींद आती रहती है यह प्रयुक्त होती है। परन्तु अधिक मूल्यवान है तथा विषैले लक्षण जो वृक्क सम्बन्धी होते हैं पैदा कर सकती है।

मात्रा—इसका ०.६ से १ ग्राम तक १० प्रतिशत की शक्ति के विलियन के रूप में व्यवहार होता है। और शिरान्तर्गत या मांसगत प्रति २·६ दिन के अन्तर से पांच इन्जेक्शन लगाये जाते हैं। इसको जर्मेनिन भी कहते हैं।

मेथिड्रीन (Methedrine)

बरोज़ वेलकम कम्पनी की बनी यह औषधि है और अपना प्रभाव कभी-कभी बहुत चमत्कारिक दिखाती है।

गुण इसका मुख्य कार्य उत्तेजना लाने का है। जब शल्य कर्म करते समय नाड़ी लुप्त होने को होती है। तब उसे पुनः गतिवान करने के लिए इसका प्रयोग करते हैं। अथवा जब सौषुम्न-मार्गीय संज्ञाहीनता उत्पन्न करते समय जड़ता स्तब्धता उत्पन्न हो जाती है तब इसको नार्मल सेलाईन में मिलाकर या रक्त द्रव में घुला कर देने से अमृत तुल्य लाभ होता है। इसी प्रकार यह विषैले गैस अथवा अन्य विषों जो नार्कोटिक श्रेणी के होते हैं, इनके कुप्रभाव को रोकने के लिए भी उत्तम है।

प्रयोग मात्रा—२ मिलीग्राम से ४ मिलीग्राम तक तीनों विधियों अधस्त्वगीय, मांसान्तर्गत या शिरान्तर्गत दिया जाता है।

मेलकोस (Dmelcos)

गुण—यह उपदंश एवं फिरंग के व्रणों को तथा उनके अन्य उपद्रवों को शान्त करती है। इसके प्रयोग के बाद कम्पन होकर ज्वर सा हो जाता है, जो १६-२४ घण्टे बाद उतर जाता है। उपदंश जैसे रोग के नाशार्थ इसके केवल ३-४ इन्जेक्शन पर्याप्त होते हैं। परन्तु बाद में पारद का या सल्फा श्रेणी की औषधि का सेवन कुछ दिन अवश्य करना चाहिए।

मात्रा विधि—०.५ सी. सी. से ३ सी. सी. तक शिरागत विधि से देना चाहिए।

लर्टिगन (Lertigen)

गुण—पार्के डेविस कम्पनी द्वारा बनाया हुआ है यह योग शीत पित्त Allergy रोगों (ये रोग बहुधा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चर्म रोग, श्वास कास, रक्तस्राव इत्यादि लक्षण युक्त होते हैं, शरीर पर चकते पड़ जाते हैं) अत: ऐसे रोगों में जो अकारण ही उपरोक्त लक्षण युक्त हों इसका व्यवहार होता है। इनमें जहां पर रोगी अधिक सर्दी गर्मी को सहन न कर सके, छाजन Eczema, श्वास Asthma, शीत पित्त Urticaria रक्त रस रोग Serum Sickness असात्म्य औषधियों के प्रयोगोपरांत उत्पन्न दुष्परिणाम, और असह्यता को निवारण करने के लिए इसका प्रयोग होता है।

मात्रा—इसका एक विशेष माप से प्रारम्भ करते हैं। जैसे १।१०० सी.सी. अर्थात् १ सी.सी. के सौवें भाग से आरम्भ करके १।१० सी.सी. तक प्रयोग करना चाहिये। प्रत्येक बार १।१०' सी.सी. बढ़ाते जाना चाहिये। जब १।१० होजाए तब प्रतिवार १।१० सी.सी. बढ़ाते हुए १ या २ सी.सी. तक बढ़ा लाना चाहिये। इसका प्रयोग सप्ताह में दो बार करना चाहिये

प्रयोग विधि—इसे प्रयोग करने के लिए ट्यूबरकुलीन सिरिंज जिसमें १।१०० तक के निशान होते हैं व्यवहार करनी चाहिये। पहले पिचकारीमें १-१० सी.सी. औषधि लेकर उसमें परिस्रुत जल मिलाकर १ सी.सी. मात्रा बना लेना चाहिये। अब इस बनी औषधि में से १।१० सी.सी. (जो कि १।१०० मात्रा होगा) अधस्त्वगीय देदेनी चाहिये। शेष औषधि फेंक देनी चाहिये। इस प्रकार प्रतिवार १।१०० सी. सी. बढ़ाते हुए १।१० सी.सी. तक आजावें। यहां तक तो ट्यूबरकुलीन की १ सी.सी. वाली पिचकारी काम देती है। जब १।१० १ या २ सी.सी. तक मात्रा में प्रयुक्त होती है तब ट्यूबरकुलीन की दो सी.सी. वाली पिचकारी बरतनी चाहिये। ज्यों-ज्यों औषधि की मात्रा बढ़ने लगे त्यों-त्यों औषधि में परिस्रुत जल की भी मात्रा कम होती आनी चाहिये। १।१० से आगे अत्यन्त कम जल मिलाना चाहिये और फिर तो १-२ सी.सी. औषधि को बिना पानी मिलाए ही लगा देना चाहिए। सदैव रोगी की दशा में होने वाले परिवर्तनों पर ध्यान रखना चाहिये।

रिसिल (Resyl)

गुण-ग्वायाकोल (Guaicol) नामक द्रव्य का योग है जो कि कास श्वास में अधिकतर व्यवहार किया जाता है। इसी अभिप्राय: के लिए श्वास-नलिकाओं के रोगों में जैसे कास, ब्राँकाइटस फुफ्फुसीय निमोनियां Broncho-Pneumonia, श्वास नलिका शोथ Tracheitis स्वरयंत्रशोथ Pharyngitis,Laryngitis काली खांसी, क्षय जन्य कास, इन्फ्लूएन्ज़ा, सर्दी-जुकाम, यहां तक कि किसी भी रोग के कारण यदि खांसी हो तो इसके व्यवहार से वह अवश्य दूर होती है और नहीं तो न्यून अवश्य हो जाती है। इसका व्यवहार श्वास नलिका के उपद्रवों में सफलता के साथ किया जा सकता है।

मात्रा—२-३ सी.सी. का एक एम्पुल या तो प्रति दिन या सप्ताह में दो तीन, चार बार मांसपेशी द्वारा प्रयोग करना चाहिये।

लेप्टाजॉल Leptazol (B. D. H.)

गुण—इसका प्रयोग हृदयावरोध, निमोनियां, मंथर ज्वर, संक्रामक रोग तथा शरीर में जब विषैला अंश इकत्रित हो गया हो, इसका विशेष प्रयोग तो हृदय और श्वास के अवरुद्ध होने की दशा में होता है। जब रोगी मूर्छित हो किसी विषैली गैस के प्रभाव से बेहोश हो जाए और तब श्वास अवरोध हो, अथवा प्रसव सम्बन्धी शल्यकर्म करते समय जब रुग्णा विषमयता से भी पीड़ित हो तब इसका प्रयोग करना चाहिये।

मात्रा—इसके १०% शक्ति के घोल का १ सी. सी. से ५ सी.सी. तक शिरान्तर्गत या अधस्त्वगीय प्रयोग करना चाहिये।

विशेष सावधानी—जिन व्यक्तियों को पहले से ही हृद्रोग हो या वृक्क रोग Nephritis हो अथवा जब स्त्री को मासिक धर्म हो रहा हो ऐसी दशाओं में इसे कदापि नहीं देना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोबेलीन हाईड्रोक्लोराईड
(Lobeline Hydrochloride)

गुण—श्वासावरोध, दमा में तो यह उत्तम कार्य करता ही है, इसके अतिरिक्त अहिफेन, मार्फीन, विषैली गैसों द्वारा बेहोशी में भी विचित्र लाभ करता है। बार बार उठने वाली कास काली खांसी में इसके प्रयोग से अवरोध और तनावट दूर होकर अति लाभ होता है। यह श्वास-संस्थान को उत्तेजित करता है अतः यह निमोनियां, कार्बन मोनो-आक्साईड विष तथा नवजात के श्वासावरोध को दूर कर देता है। इसके अतिरिक्त सहसा श्वास बंद हो जाने की दशा में भी इसे अन्य हृदयोत्तेजक द्रव्यों के साथ मिलाकर सफलता पूर्वक व्यवहार कर सकते हैं।

मात्रा—इसको १/२० ग्रेन (३ मिलीग्राम) की मात्रा में अधस्त्वगीय प्रयोग करना चाहिए। वैसे शिरान्तर्गत भी प्रयोग कर सकते हैं परन्तु तभी, जब अत्यन्त आवश्यकता हो रही हो। क्योंकि यह अन्य प्रकार के उपद्रव भी पैदा कर सकता है, इससे अत्यन्त सावधानी के साथ और विशेषकर हृन्मांस रोग वालों में तो बहुत देख-भाल कर बरतना चाहिए। नवजात शिशु के श्वासावरोध की दशा में इसको उसकी नाभि शिरा में इंजेक्शन देना चाहिये।

लोबेलीन सेण्डोज
(Lobeline sandoz)

उपरोक्त वर्णित औषधि का यह रूपान्तर मात्र है, परन्तु विशेषता यह है कि इसके अधिक मात्रा में भी प्रयुक्त होजाने पर कोई आक्षेप या दौरे के रूप का उपद्रव नहीं होता है।

गुण—श्वास (दमा) फुफ्फुस-दौर्बल्य, संक्रमण जनित रोगों द्वारा आक्रान्त श्वास संस्थान, क्लोरोफार्म या अन्य संज्ञाहारक और बेहोश करने वाली औषधि के कुप्रभाव को या उसके प्रभाव से उत्पन्न श्वासावरोध को दूर करने, बिजली को छूजाने (विद्युता-घात) पर उत्पन्न श्वासावरोध में यह विशेषकर फलप्रद है। इसके अतिरिक्त शीतपित्त urticaria तथा Allegic conditions जन्य रोग एवं त्वचा संबन्धी उपद्रवों को शीघ्र दूर करता है। इसको प्रयोग करके रक्तपरिभ्रमण की भी परीक्षा की जा सकती है।

मात्रा—दो मात्राओं (हीन ३ मिलीग्राम, उत्तम १० मिलीग्राम) में इसका प्रयोग आवश्यकतानुसार और रोगी की सहनशक्ति के अनुसार होता है।

विधि—तीनों मार्गों द्वारा, पर साधारणतया त्वचान्तर्गत और मांसगत ही प्रयुक्त होता है विशेष परिस्थिति और शोचनीय दशा में शिरामार्ग को अपनाना चाहिये।

लेसीथीन
(Lecithin)

गुण-यह माना गया है कि मस्तिष्क का एक भाग लेसीथीन नामक पदार्थ भी है, यह प्रयुक्त करने के लिए अण्डे के पीत भाग से, अथवा फास्फोरस और नाईट्रोजन के सम्मिश्रण से भी बनाया जाता है। अतः इसका प्रयोग मस्तिष्कगत दुर्बलता, स्नायुविक दुर्बलता, रक्त हीनता में लाल रक्त-कणों की मात्रा बढ़ाने के हेतु, वीर्योत्पादन में कमी, भूख की कमी, शरीर के अपेक्षाकृत कम भार तथा सामान्य दुर्बलता में सफलता से व्यवहृत होता है।

मात्रा—पूतिकृत जैतून के २ सी. सी. से ५ सी. सी. तैल में इसको ३/४ ग्रेन से १ ग्रेन तक अधस्त्वगीय दिया जाता है।

विशेष—शरीर में फास्फोरस के अभाव में जब दुर्बलता निरन्तर बढ़ती ही जाती है तब इसका प्रयोग सफलता से किया जाता है। उसके लक्षण इस प्रकार लिखे मिलते हैं कि शरीर अति मैथुन के कारण कृश, निर्बल, क्षीणकाय, अस्वस्थ, स्मरणशक्ति ह्रास, शिरोभ्रम, पाचन विकार, यहां तक कि लघु आहार भी नहीं पचता, तिमिर, वीर्य क्षय, कामेच्छा नष्ट हो जाती है, चेहरा निस्तेज होजाता है। उपरोक्त दशाओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में शरीर को एक बार पुन: उठाने के लिए लिसीथिन का प्रयोग करना चाहिए।

वैसे इसकी बनी बनाई २ सी.सी. और ५ सी.सी. की एम्पुल्स भी आती है, जिनमें यह १० प्रतिशत की मात्रा में घुला होता है। जिसको प्रति दूसरे तीसरे दिन अधस्त्वगीय देना चाहिए।

अमीनो एक्रीडीन
(Aminoacridine)

गुण- यह एक्रीफ्लेविन का एक योग है और जीवाणुज संक्रमण जो प्राय: व्रणों में तथा उसके समीपस्थ भाग में होजाता है, की रोक-थाम के लिए प्रयुक्त होता है, इसके अतिरिक्त कंठगत, अन्तर्कर्णगत संक्रमण में भी विशेष लाभप्रद है।

मात्रा मार्ग–मांसपेशीगत इसका १००० में १ शक्ति का विलियन आवश्यकतानुसार प्रविष्ट करते हैं।

इयूफ्लेविन
(Euflavine)

यह भी एक्रीफ्लेविन का योग है और निष्क्रिय प्रतिक्रिया वाला होता है। इसका उपयोग पीछे वर्णित एक्रीफ्लेविन के ही समान होता है, परन्तु विशेष सुविधा और उपयोग इसका इसी में है कि इसे स्थानीय प्रयोग, मुख द्वारा प्रयोग के अतिरिक्त शिरान्तर्गत विधि से भी प्रयुक्त कर सकते हैं।

मात्रा विधि—शिरांतर्गत इसके १००० में १ (१:१०००) की शक्ति वाले विलियन का ५० से १०० सी. सी. तक प्रयोग किया जाता है

वेराट्रोन (Veratrone)

गुण-निमोनिया की प्रथमावस्था में यह अपना कार्य करता है,तथा गर्भिणी विषमयता एवं प्रसवोपरांत होने वाली विषमयता, रक्त ज्वर, उन्माद, मदात्य, मूर्च्छा इत्यादि में लाभ करता है।

मात्रा--१ सी.सी. से २ सी.सी. तक अधस्त्वगीय विधि से देना चाहिए। इसके प्रयोग से कोई भी पश्चात प्रतिक्रिया नहीं होती। इसका प्रभाव मुख्यतया रक्त वाहिनियों तथा सौषुम्न प्रदेश पर अवसादक पड़ता है।

तैल में प्रसारित एड्रिनेलिन
(Adrenaline in Oil)

यह एड्रीनेलीन का तैल के १०० भाग में १ भाग का योग होता है जिसमें एस्कार्बिक एसिड (विटामिन सी.) का मिश्रण कर दिया जाता है, जिसके कारण एड्रीनेलिन का शीघ्र बिगड़ना रुक जाता है। और रक्त में शीघ्र नहीं मिल जाती, अत: इसका प्रभाव भी दीर्घकालीन रहता है। यह विशेषकर श्वासरोग में प्रयुक्त होता है।

मात्रा--०·१ से ०·६ सी. सी. तक।

विधि--अधस्त्वगीय और मांसान्तर्गत विधि से रोग और रोगी की दशा के अनुसार दें।

उपरोक्त के अतिरिक्त इसका घोल साधारण जल या लवणोदक में भी आता है जो १:१०० की शक्ति का होता है इसका प्रयोग स्थानीय नाक में छिड़ककर किया जाता है, वह भी श्वास रोग में प्रयोग होता है।

ग्लोबिन इन्सुलिन
(Globin Insulin)

इन्सुलीन के विलियन में ग्लोबिन तथा यशद का मिश्रण, इससे इसका प्रभाव शुद्ध इन्सुलीन तथा प्रोटामिन जिंक इन्सुलीन ए० बी० की तरह न होकर दोनों के बीच वाला सा प्रभाव होता है, जो कि समय, प्रभाव तथा काल Onset Time, intensity, & duration) में मध्यम ही होता है।

गुण-मधुमेह, एवं पीछे वर्णित इन्सुलिन के समान गुण।

मात्रा-अधस्त्वगीय विधि से १० से ४० यूनिट या अधिक प्रतिदिन।

प्रोटामिन जिंक इन्सुलिन
(Protamine Zinc Insulin)

यह प्रोटामीन इन्सुलिन है जिसमें अल्प मात्रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ही यशद (जिंक) का मिश्रण होता है। इससे इन्सुलीन की मधु निवारक क्रिया Hypoglycaemic Action लम्बी हो हो जाती है और इसका प्रयोग भी थोड़ा करने से काम चल जाता है। कम संख्या में इन्जेक्शन लगाने पड़ते हैं।

गुण—मधुमेह, एवं पीछे वर्णित इन्सुलीन के गुण।

मात्रा—१० से ६० यूनिट या अधिक भी प्रतिदिन, अधस्त्वगीय विधि से।

वेरिटाल (Veritol)

गुण-यह फोलेड्रीन का पर्याय है और घुलित तथा टिकियों के रूप में आता है। गोलियां ¼ या ½ गोली तक परिस्रुत जल में घोल कर तथा घुली दवा को १।२ या १।४ भाग अथवा १ एम्पुल को ही लगा देते हैं इसका प्रभाव एड्रीनेलीन की तरह होता है, अधिक दिनों तक टिकाऊ नहीं रहता।

विविध रोगों में जब नाड़ी लुप्त होने को होती है, अवसाद Collapse हो जाय, रक्तचाप कम हो गया हो, या बेहोश करने वाली औषधियों के विषैले प्रभाव से जब उपरोक्त लक्षण होगए हों, निमोनिया, रोहिणी Diphtheria स्तब्धत Shock में यह विलक्षण कार्य करता है, यदि इसे दुर्बल रोगी को शल्यकर्म के पश्चात् इन्जेक्शन लगा दिया जाए तो उसको शक्तिहीनता का विशेष अनुभव नहीं होता।

इसका शिरागत दिया हुआ इन्जेक्शन स्थाई प्रभाव युक्त नहीं होता। मांसगत या अधस्त्वगीय देने से प्रभाव काफी देर तक बना रहता है।

विधि—शिरागत, मांसगत और अधस्त्वगीय विधि से देना चाहिए।

सिलारिन (Scillaren)

गुण-यह डिजिटेलिस के समान कार्य करती है, अतः इससे वृक्क एवं हृदय को अत्यधिक सहायता मिलती है। वृक्क द्वारा जब जलोदर जो यकृत जन्य हो, का पानी निकालना अभीष्ट हो, या जब मूत्रावरोध जन्य मूत्र-विषमयता हो तब इसे देकर सभी तरल को शरीर से निकाल कर शोथ हल्का किया जा सकता है। इसी प्रकार हृदय की कमजोरी में जब हृत्तल Ventricles पूर्णतया संकोचन नहीं करते और वृक्क का कार्य भी ढीला हो तब इनमें शक्ति आकर दोनों कार्य सुगमता से होने लगते हैं।

मात्रा मार्ग--प्रथम इसको आधा देकर रोगी की सहन शक्ति की परीक्षा कर लेते हैं, फिर जब देखते हैं कि रोगी ने उस मात्रा को सह लिया तब १ सी.सी. की पूर्ण मात्रा देते हैं। इसके देने से औषधि संचित होने पर विषैले अथवा अन्य दुष्परिणाम नहीं होते। इसी से इसे नित्य देते रहते हैं। मूत्र निरन्तर आता रहे इस हेतु कई सप्ताह तक इसका प्रयोग करते रहना पड़ता है और डिजिटेलिस को देने पर उपद्रव होने लगें या औषधि सात्म्य न हो तो इसका प्रयोग चालू करके अभीष्ट लाभ उठाया जा सकता है। वृक्क रोगों में केवल १ सप्ताह इसको देकर फलाफल निर्धारित करके तब आगे चिकित्सा चालू रखनी चाहिए।

इसका प्रयोग शिरान्तर्गत विधि से किया जाता है।

सल्फोडीन (Sulfodine)

गुण—यह शरीर में जब दर्द होते हैं जैसे रीढ़, कमर, शिर, अस्थियों के संधियों में जब पीड़ा हो अथवा मांसपेशियों के एंठन और अकड़ाहट, स्नायु-शोथ, कर्ण इत्यादि सभी प्रकार की पीड़ा शान्त करने के लिये यह व्यवहृत होता है।

मात्रा—१ सी. सी. तक दिन में एक या दो बार आवश्यकता पड़ने पर सप्ताह में तीन चार बार मांसपेशियों द्वारा दिया जाता है।

सल्फा श्रेणी की औषधियां

(Sulpha-Group)

वर्तमान युग में जितना प्रचार और प्रधानता सल्फा श्रेणी में आ जाने वाली औषधियों को मिली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, उतनी अन्य किसी भी प्रकार की औषधियों को नहीं मिली। इसके कई कारण हैं, एक तो इनके रोग निर्देश, अर्थात जिन जिन रोगों पर इनको बरता जाता है, वे असंख्य हैं, दूसरे इनका व्यवहार मुख द्वारा सुगमता से हो जाता है। जब मुख द्वारा देने की स्थिति और अवस्था न हो, तब इसका सूचीवेध (इन्जेक्शन) विधि से प्रयोग किया जाता है। प्रयोग करने और अभीष्ट लाभ की प्राप्ति के लिये यह परमावश्यक है कि रक्त में इसकी मात्रा निरंतर कुछ काल तक पर्याप्त बनी रहे। इसकी रक्त में मात्रा जितनी उचित होनी चाहिये यदि बनी रहेगी तो जीवाणुओं की वृद्धि रुक जाएगी और जो भी जीवाणु रक्त में होंगे उनका नाश हो जायेगा। हमने एम. बी. ६९३ के वर्णन के समय जिन-जिन सावधानियों का वर्णन किया है, उन्हीं-उन्हीं का ध्यान प्रायः रखना पड़ता है। इस श्रेणी में आजाने वाली औषधियां प्रायः निम्न हैं, यद्यपि इनको विविध निर्माणशालाओं में अपने-अपने प्रथक नामों से प्रस्तुत किया है, परन्तु उनका गठन और निर्माण प्रायः समान ही होता है।

सेल्फामेजाथीन
(Sulphamezathine)

गुण--निमोनिया, विद्रधि, दुष्ट व्रण, फुंसी, फोड़े, सौ[illegible] ज्वर तथा मूत्रसंस्थान के रोगों में इसका व्यवहार होता है, सुजाक, मूत्रमार्ग में व्रण इत्यादि होने पर यह अपना विलक्षण कार्य करता है। इसका व्यवहार मालाणुज एवं गोलाणुज संक्रमण में अधिकतर होता है।

प्रयोग मार्ग मात्रा—१ ग्राम का ३ सी. सी. बिलियन प्रायः व्यवहार होता है। इसके अतिरिक्त १ सी. सी. में ३ ग्राम घुला हुआ आता है जिसे प्रायः आरम्भ में १ ३ ग्राम तक देकर फिर प्रति ६-६ या ८-८ घण्टे पर १-१ ग्राम मांसान्तर्गत देना चाहिये, जब रोग घटने लगे तब इसको न देकर मुख द्वारा अन्य सल्फा औषधि का व्यवहार होना चाहिए।

सल्फानिलामाईड
(Sulphanilamide)

यह भी उपरोक्त रोगों में उपरोक्त प्रकार से व्यवहृत होती है, नाजुक मिजाज वालों को यह नहीं देनी चाहिए।

सल्फाथियाजोल या सोलूथियाजोल
(Sulphathiazole or Soluthiazole)

गुण—यह उपरोक्त का एक संस्कारित और ऐसा योग है जिसको नाजुक आदमियों को भी दिया जा सकता है, उपरोक्त की तरह उग्र नहीं है, और इसका घोल बनाने के लिए इसका सोडियम नमक बनाया जाता है। यह नमक बना बनाया और घुला-घुलाया आता है, जल में यह पूर्णतया घुल जाता है।

इसका व्यवहार निमोनिया की प्रत्येक दशा पर चाहे वह लोबर हो चाहे ब्रांको, और संक्रामक तीव्र सौषुम्नाज्वर, अन्तःकर्णपाक, व्रणमेह (सुजाक) एवं सुजाक के उपद्रव रूप से बढ़े हुए शोथ, नेत्राभिष्यन्द संधिशोथ, इत्यादि, अस्थिशोथ, विसर्प, छोटी-छोटी पिड़िकायें, रक्तातिसार, आमातिसार, मूत्र-संस्थान विशेषकर मूत्र मार्ग के संक्रमण, वस्ति शोथ, कंठशालूक, संक्रमण युक्त ज्वर, कंठ प्रदाह, इत्यादि रोगों में इसका व्यवहार होता है। सारांश यह कि जहां शरीर में मालाणुज एवं गोलाणुज संक्रमण जनित रोगों का आक्रमण होगा, या व्रणमेह संक्रमण, मस्तिष्कावरण प्रदाह के जीवाणुज संक्रमण होगा वहां यह औषधि उस संक्रमण को नष्ट करके तथा उसके द्वारा उत्पन्न विषमयता को दूर कर देती है। रोग में इसका प्रयोग सफलता से होता है। इसके सेवन से गिल्टी की शोथ, ज्वर, घबराहट, व्यथा-शूल अल्पकाल में शान्त हो जाते हैं। व्रणों की चिकित्सा में इसके प्रयोग से संक्रमण आगे नहीं बढ़ता और जीवाणुज विष, विषमयता का इस औषधि के आगे टिकना महा कठिन है। दुष्कर से दुष्कर रोगों में जहां भयानक व्रण थे इस औषधि के प्रयोग ने चमत्कार दिखाया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह औषधि अत्यन्त विषैली होती है, इसका प्रयोग जब अत्यधिक हो जाता है तब शरीर में इसका परिमाण बढ़ जाता है और विषैले लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। उनमें प्रमुख लक्षण, जीभ चलाना, वमन, भ्रम, तीव्र ज्वर, शरीर पर विविध प्रकार के चकते पड़ना, शरीर का नीला होजाना Cyanosis, रक्त में रक्त कणों में उथल पुथल होकर उनकी स्थिति बदल जाती है. शरीर के अन्य संस्थान जैसे रक्त, त्वचा, मूत्र संस्थान, पाचन प्रणाली, इत्यादि कोमल संस्थान एक बार इसके प्रभाव से बिल्कुल क्षुब्ध हो जाते हैं. अतः चिकित्सक को उसका प्रयोग करते रहते हुए उपरोक्त लक्षणों के विषय में सचेत रहना चाहिये तथा इन उपद्रवों के पैदा होते ही इसका प्रयोग तुरंत बंद कर देना चाहिये। और रोग शमनार्थ अन्य पेनिसिलिन, स्ट्रेप्टोमाईसीन जैसी औषधि का व्यवहार चालू कर देना चाहिये।

कभी कभी इसके प्रयोग के साथ निकोटिनिक एसिड या सोडाबाई कार्ब का प्रयोग मुख द्वारा किया जाता है ताकि इसके द्वारा होने वाली हानियां न्यूनतम हो सकें।

मात्रा एवं प्रयोग—कभी भी इसे त्वचान्तर्गत नहीं देना चाहिए, इस विधि से देने पर भयंकर परिणाम निकल आते हैं, अतः सदैव मांसान्तर्गत विधि या शिरान्तर्गत विधि से दें। प्रथम तीव्र रोग में १½ ग्राम की मात्रा में देकर फिर प्रति ४-४ घण्टे पर १-१ ग्राम देते रहना चाहिए। अवस्था ज्यों ज्यों सुधरती आए त्यों त्यों इसका प्रयोग मुख द्वारा करते जाना चाहिए। २४ घण्टों में इसको ८ ग्राम तक प्रयोग किया जा सकता है।

सिबाज़ॉल (Cibazol)

(२० प्रतिशत सल्फाथियाज़ोल सोडियम का विलियन जो ५ सी.सी. के एम्पुल में आता है।)

यह भी उपरोक्त औषधि है केवल नाम का ही अन्तर है। दोनों ही औषधियां तीव्र कीटाणु नाशक हैं और सुजाक, निमोनियां, गर्दनतोड़ बुखार, पेचिश (रक्तातिसार), फोड़े फुंसी, कर्ण प्रदाह, प्लेग, नेत्र रोग, बिसर्प, विषैले संक्रमित व्रण, प्रसूति ज्वर इत्यादि में अत्यन्त सफलता पूर्वक व्यवहृत होती रहती है।

इसके प्रयोग से कभी-कभी शरीर पर लाल चकते पड़ना, भ्रम, चक्कर, मानसिक शिथिलता, वमन, जी मचलाना, सन्धिगत शोथ, मूत्र में रक्त आने लगता है, वृक्क में इसके कण जमने लगते हैं और मूत्र आना बंद ही हो जाता है इत्यादि लक्षण प्रगट होने लगते हैं। ऐसी दशा में औषधि का प्रयोग बंद कर देना चाहिये तथा रोगी को ग्लूकोज मिला हुआ पानी पीने को देते रहना चाहिये।

मात्रा--२४ घण्टे में ८ ग्राम तक।

इन्जेक्शन से अच्छा मुख द्वारा प्रयोग होता है, अतः रोग शांत होते ही मुख द्वारा प्रयोग चालू कर देना चाहिये।

थियाज़माईड सोडियम
(Thiazamide Sodium)

यह मे बेकर कम्पनी का बनाया हुआ सल्फाथायाज़ोल है, इस द्रव्य का नाम मे बेकर कम्पनी ने थियाजमाईड रखा है। इसके गुण बिल्कुल सिबाज़ोल के समान हैं। इसके प्रयोग से भी ऊपर वर्णित विषैले लक्षणों का जन्म होता है-अतः सावधानी से इसे व्यवहार में लाना चाहिये। जो सावधानियां सिबाज़ोल आदि सल्फा श्रेणी की औषधियों के प्रयोग में बरती जाती हैं वे ही इसमें भी बरतनी चाहिए।

मात्रा—प्रत्येक बार में शिरा या मांस द्वारा १ ग्राम से २ ग्राम तक देना चाहिए, जैसा रोग हो रोगी की आयु बलाबल देखकर इसे प्रयोग करना चाहिये।

सल्फा डायज़ीन सोडियम
(Sulphadiazine sodium)

यह ४ सी.सी. के एम्पुल में एक ग्राम सल्फाडायज़ीन घुली हुई आती है।

गुण-तीव्र निमोनियां, गर्दन तोड़ बुखार, सुजाक, रक्त में विषमयता, तथा अन्यपूयोत्पादक एवं पाक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैदा करने वाले जीवाणुओं के संक्रमण को रोकने के लिए इसका प्रयोग होता है। बेक्टीरिया कोलाई तथा गेस ग्रेंग्रीन में इसका प्रयोग होता है। तथा पेनिसलीन के अभाव में और गोलाणुज Staphylococcus संक्रमण में यह हलके और तीव्र संक्रमण को नष्ट करता है। इसके साथ-साथ नेत्रगत उपरोक्त संक्रमण, कर्णपाक, त्वचा के रोगों में इसका व्यवहार होता है।

प्रयोग विधि—इसको शिरा द्वारा या निरन्तर शिरा द्वारा प्रवाहित करते हैं। निरंतर शिरा द्वारा प्रवाहित करने के लिए इसको लवणोदक Saline में मिला लिया जाता है। इसके अलावा जब रोगी की दशा सुधर जाती है तब इसको मांस द्वारा गहरा इन्जेक्शन लगा कर प्रयुक्त करते हैं। इस औषधि को कभी भी त्वचान्तर्गत, अधस्त्वगीय नहीं देना चाहिये। इस बात का सदैव ध्यान रखना चाहिये कि नाड़ियों को इससे हानि न पहुंचे अन्यथा अत्यधिक पीड़ा और दाह होती है। कभी कभी इसके असावधानी के प्रयोग से गट्टा या कलाई लटक Foot drop या Wrist brop भी हो गया है। अतः साथ में आने वाली व्यवहार प्रयोग विधि के अनुसार इसे लगावें।

मात्रा—इसके ८ से १६ सी. सी. विलियन को (२-४ ग्राम) को जल या साधारण लवणोदक में घोलकर ५ या १० प्रतिशत की शक्ति का बना लेना चाहिए और पूर्ण वयस्क के लिए यह एक मात्रा हो जाती है जोकि शिरा द्वारा देदेनी चाहिए। यह प्रथम मात्रा या तो सम्पूर्ण शिरा द्वारा देदेनी चाहिये अथवा इसका कुछ भाग गहरे मांस द्वारा भी दे सकते हैं और फिर क्रमशः मांसान्तर्गत और मुख द्वारा इसको देते रहना चाहिए।

गहरे मांसान्तर्गत प्रयोग के लिए यह विलियन बिना जल या लवणोदक में हलका किये हुए ही दे देना चाहिये।

सोलू सेप्टासीन
(Solu-septasine)

गुण—मे बेकर कम्पनी का यह प्रयोग भी अत्यधिक प्रचलित हुआ और है। इसको रक्त में मालाणुज संक्रमण तथा मस्तिष्क गोलाणुज संक्रमण, प्रसवोपरांत विषमयता, संक्रामक ज्वर, निमोनियां, फोड़ा-फुन्सी, सुजाक में प्रायः व्यवहार किया जाता है गर्दन तोड़ बुखार में भी यह सफलता से व्यवहृत होता है।

मात्रा—इसका २० प्रतिशत की १० सी. सी. की मात्रा प्रति ४-५ घंटे पर देनी चाहिये। फिर क्रमशः इंजेक्शन और किसी सल्फा श्रेणी की औषधि मुख द्वारा प्रयोग करनी आरम्भ कर देनी चाहिये। इसके एम्पुल ५ सी. सी. की मात्रा में १० तथा २० प्रतिशत शक्ति के तथा ५ सी. सी. और १० सी. सी. के एम्पुल २० प्रतिशत शक्ति के आते हैं।

विधि—इनका प्रयोग शिरा, मांसान्तर्गत, तथा अधस्त्वगीय विधि द्वारा जैसा मौका हो करना चाहिए।

साईनोमाइड इंजेक्शन

गुण—यह भी सल्फा श्रेणी के द्रव्य का इंजेक्शन है और चर्म रोग फोड़ा-फुन्सी आदि ऐसे रोगों में जहां प्रायः सल्फाश्रेणी की औषधियां व्यवहृत होती हैं व्यवहार किया जाता है।

मार्ग मात्रा—२ सी. सी. तक मांसान्तर्गत या शिरागत प्रयुक्त होता है।

एस यू. एम. ३६ (S.U.M. 36)

गुण—यह सिमेट्रिकल यूरिया श्रेणी की औषधि है। इसका गुण विशेषकर संधिप्रदाह, नेत्रगत रोग, मूत्रप्रणाली शोथ, योनि शोथ ये शोथ यदि सुजाक जन्य हों तो और भी अधिक शीघ्र लाभ होता है।

मात्रा, मार्ग-शिरान्तर्गत तथा मांसान्तर्गत विधि से ०·००२ से ०·०१ ग्राम तक, इसके ०·००२, ०·००३ तथा ०·०१ ग्राम के १ सी. सी. में घुले हुए विलियन आते हैं।

एस. यू. एम ४६८
(S.U.M. 468)

गुण—यह भी यूरिया का रूप है और इसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयोग उस अवस्था में किया जाता है जब किसी औषधि के प्रयोग से शिरावरोध Thrombophlebitis होजाय, शिरःशूल और प्रोटिअस श्रेणी के जीवाणुओं द्वारा संक्रमण में, पेम्फीगुअस रोग में विशेष लाभ करता है।

मात्रा,मार्ग-०.००१ से १.० ग्राम तक १ सी. सी. विलियन में मांसान्तर्गत, शिरान्तर्गत विधि से दें।

एस. यू. पी. ३६ (S.U.P. 36)

यह भी यूरिया की श्रेणी की औषधि है। तथा खांसी. फुफ्फुस प्रदाह, निमोनियां, शीत, जुकाम, इन्फ्लुएंजा, मुख पर छाले, लोबर निमोनिया, फुफ्फुसीय कला प्रदाह, प्रसवोपरांत विषमयता. नासापाक, कंठगत रोग जैसे टांसिलाईटिस आदि ज्वर, खसरा, सन्धिअस्थि प्रदाह, अस्थि पाक, जबड़ों के रोग, कण्ठपाक आदि, बच्चों की खांसी में।

मात्रा मार्ग-मांसगत विधि या अधस्त्वगीय विधि से ०.००५ से ०.०१ ग्राम तक ½ से १ सी. सी. विलियन में दें।

एस. यू. पी. ४६८ (S.U.P. 468)

गुण-संधिप्रदाह Arthritis विसर्प Erysipelas प्रसवोपरांत विषमयता, आमवातज्वर,आमवात, रक्तज्वर, त्वग्पाक, विस्फोट, पूयोत्पादक जीवाणुज शोथ में विशेष लाभ करता है।

मार्ग, मात्रा-मांसान्तर्गत तथा शिरान्तर्गत विधि से ०.००१ से ०.००३ ग्राम तक १ सी.सी. घोल में।

स्टोवेन (Stovaine)

यह अमीनोकेन हाईड्रोक्लोराईड है और स्थानीय, प्रादेशिक एवं सौषुम्नगत शून्यता उत्पन्न करने के काम आता है।

प्रयोग-सौषुम्नीय शून्यता के लिए 'चपट' विधि से बना विलियन ०.५ से ०.१ सी. सी. तक प्रयोग करें या १ से २ सी. सी. तक बार्कर विधि से बना विलियन प्रयोग करें।

स्ट्रिकनीन
(Strychinine)

गुण—बहुविधि प्रयुक्त होने वाली यह गुणवान औषधि कुचले के सत्व से बनी होती है। इसका मुख्य प्रभाव मस्तिष्क, सुषुम्ना तथा स्नायुविक मण्डल पर होता है। इन सभी केन्द्रों को यह उत्तेजित कर देता है। फल स्वरूप हृदय भी तीव्र गति से स्पंदन करने लगता है। तथा स्नायुविक उत्तेजना सभी तन्तुओं को उत्तेजित कर देती है। संघातक रोगों और लम्बी बीमारियों में जब हृदय दुर्बल हो जाता है जैसे निमोनिया, मंथर ज्वर तब हृदय को बल देने के लिए इसकी अवसादितावस्था में इसका प्रयोग विशेष लाभ करता है। इसी प्रकार ऐसी दशा में श्वास की गति एवं फुफ्फुसीतन्तुओं को शक्ति प्रदान करता है।

इसका प्रयोग स्नायुविक दौर्बल्य निवारण हेतु जैसे क्लैब्य, नामर्दी में जब स्नायु मण्डल क्रियारहित सा हो जाता है, तब यह अपना विशेष गुण व्यक्त करता है। लकवे में जब स्नायु के आघात (Paralysis) होते ही इसका प्रयोग किया जाए तो विशेष लाभ होता है। जहां पर भी स्नायु के अन्दर शून्यता आ जाने से अङ्ग क्रिया-रहित हो जाता हो वहां इसका प्रयोग फलप्रद होता है।

यह चूंकि एक तीव्र विष है अतः अत्यन्त सावधानी से प्रयोग करना चाहिए,और आक्षेप के समान धनुर्वात जैसे लक्षण उत्पन्न होते ही इसका प्रयोग बन्द कर देना चाहिये। जहां पर ऐंठन, इत्यादि लक्षण पहले से ही हों वहां इसका व्यवहार करने से रोग और बढ़ जाता है।

इसके योग कई प्रकार के बने हुए आते हैं, सभी अधस्त्वगीय विधि से प्रयुक्त होते हैं।

योग—(१) स्ट्रिकनीन सल्फ

(२) स्ट्रिकनीन हाईड्रोक्लोराइड

(३) एपोमार्फीन एवं स्ट्रिकनीन हाईड्रोक्लोराइड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) स्ट्रिकनीन तथा नाईट्रोग्लीसरीन ।
(५) स्ट्रिकनीन विद डिजिटेलिन ।
(६) स्ट्रिकनीन एण्ड एर्गटन ।
(७) स्ट्रिकनीन डिजिटेलिन तथा नाईट्रोग्लीसरीन ।
(८) स्ट्रिकनीन एण्ड एट्रोपीन ।
(९) आयरन साईट्रेट तथा स्ट्रिकनीन ।

स्ट्रिकनीन प्रायः १।६० ग्रेन की मात्रा में प्रयुक्त होता है, जिन जिन औषधियों को मिलाकर इसका योग बनाया जाता है. उन उनके गुणों को यह और व्यक्त कर देता है। सदैव इसका प्रयोग अधस्त्वगीय ही होता है।

साल्वोचिन (Solvochin)

कुनीन का यह योग ह्म्बर्ग कम्पनी द्वारा बनाया गया है और लगभग २५%. कुनीन ऐसे घोल में घुली हुई है जिसके प्रयोग से पीड़ा नहीं होती। यह निमोनियां की कास, तथा अन्य प्रकार के मलेरिया, इन्फ्लुएञ्जा युक्त निमोनिया, टाँसिल के रोग हृदयस्पन्दन का अनियमित रूप से बढ़ जाना, प्रसवोपरान्त की विषमयता इत्यादि ऐसे रोगों में यह काम करता है।

मात्रा प्रयोग—मांस द्वारा २-४ सी.सी. तक प्रयोग करना चाहिए, आवश्यकता पड़ने पर इसे ३-३ या ४-४ घण्टे पर प्रयोग किया जा सकता है।

इसी के समान गुणकारी पीछे वर्णित कीनोसीन औषध है।

स्टेनोक्साईल (stannoxyl)

यह आगे वर्णित कोलायड स्टेनोमैंगनीज की तरह गुणकारी है तथा उसके स्थान पर व्यवहृत होता है। मात्रा और गुण उसी के समान है।

स्ट्रोफेन्थीन (strophanthin)

गुण—१।६० ग्रेन से १।५०० ग्रेन तक एक सी.सी. के विलयन में प्रयुक्त होती है।

गुण—यह औषधि डिजिटेलिस के समान गुणकारी है, और विशेषता यह है कि डिजिटेलिस की अपेक्षा इसका गुण अधिक देर तक बना रहता है। और यह केवल हृदयावरोध (Heat failure) पर प्रयुक्त होता है। इसके प्रयोग से किसी प्रकार के उपद्रव होने की सम्भावना नहीं होती, जब निमोनिया के कारण रोगी को श्वास लेने या हृदय के कार्य में बाधा लगने लगती है तब यह ऐसी अवस्था में हृदय की गति बढ़ाने, उसे शक्ति देने के लिए अत्यन्त सफलता से व्यवहार में लाया जाता है। जहां पर डिजिटेलिस का प्रयोग हानि करता है, अथवा उसके सेवन से वमन इत्यादि उपद्रव खड़े हो जाते हैं, वहां इसका प्रयोग निर्भयता से किया जा सकता है और आशा से अधिक लाभ उठाया जा सकता है। इससे अत्यन्त शीघ्र हृदयगत सभी उपद्रव शान्त हो जाते हैं। और विशेषता यह है कि किसी प्रकार का दुष्परिणाम होने की सम्भावना नहीं होती। जहां हृद्रोग में शरीर में शोथ भी हो वहां मर्सेलाइल के साथ इसे भी अदल बदल कर यदि व्यवहार किया जाय तो आशातीत लाभ होता है।

इतना गुणवान होने पर भी इसको प्रयोग करते समय कुछ सावधानी रखनी चाहिए। सदैव इसको तभी व्यवहार में लाया जाय जब हृदय की गति असाधारण हो, साधारण हो तो प्रयोग न करें। जहां हृदय मांसपेशियां दुर्बल हो वहां भी अल्पमात्रा और अत्यधिक सोच-विचार कर प्रयोग करें। फिर जिन हृद्रोगियों में डिजिटेलिस का प्रयोग हो रहा हो, वहां इसको न वरतें, जब अधिक रक्तचाप हो तब भी इसे न दें, अथवा जब नाड़ी की गति अनियमत हो, रोगी वृद्ध हो, वृक्क शोथ हो, नाड़ी की गति ६० से ८० तक हो तब भी इसे प्रयोग न करें।

इसके अतिरिक्त यह ध्यान रखने की बात है कि एक बार के प्रयोगोपरान्त इसका प्रभाव ४८ घण्टों तक रहता है अतः इस बीच में दुबारा इसका प्रयोग न करें। जब जब यह ४८ घण्टे व्यतीत होजांए तब ही इसे पुनः प्रयोग कर सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्ग—मांसान्तर्गत या अन्तःशिरीय प्रयोग करें।

स्टिप्सिस अथवा स्टिप्टीसिन
Stypsis or Stypticin)

गुण – यह कोटारीन हाईड्रोक्लोराइड का विलियन है जिसका प्रयोग गर्भाशय के प्रत्येक प्रकार के रक्तस्राव को रोकने के लिए अतिरजः अत्यार्त्तव, एवं रक्त-स्राव को रोकने के लिए होता है।

मात्रा मार्ग--स्वचान्तर्गत इसे १ सी. सी. की मात्रा में देना चाहिए, आवश्यकता पड़ने पर पुनः इसको प्रयोग करना चाहिए, जब तक लाभ न हो।

स्ट्रोफोसिड (Strophos'd)

यह भी स्ट्रोफेन्थस (जिसका वर्णन पहले हो चुका है) की तरह है, और हृदय की मंद गति पड़ जाने के कारण जब हृत्शोथ जन्य हृदयावरोध का दशा उत्पन्न हो जाये तब करना चाहिए, हृत्शूल, हृदय की मांस-पेशियों का अपचय, रोहिणीरोग जन्य हृदयावरोध हृदय की दुर्बलता में यह वास्तविक लाभ करता है। यह हृदय की गति जब कम हो जाती है तब भी उसको अधिक संकुचित करके रक्त की अधिक मात्रा बाहर उड़ेलने में सहायक होता है। यह बढ़ी हुई गति को पुनः नियन्त्रित करके समगति पर ले आता है। अतः जब हृदय की गति डिजिटेलिस द्वारा मंद करदी गई हो तब इसका प्रयोग न करें, गति और भी कम हो जायगी, और हृदयावरोध हो जायगा।

जब अत्यन्त आवश्यक और जरूरी हो जाय तभी इसको प्रयोग करना चाहिए वैसे नहीं, क्योंकि प्रयोग के तुरन्त बाद ही हृदय की गति पर इसका प्रभाव हो जाता है। अतः जब डिजिटेलिस द्वारा हृदय की गति मंद करदी गई हो तो जब तक दो-तीन दिन में डिजिटेलिस का प्रभाव दूर न हो जाये इसे प्रयोग न करें।

प्रयोग मात्रा विधि—प्रथम १।२ सी. सी. का जिसमें १।८ मिलीग्राम हो प्रयोग शिरागत देकर देख लें कि रोगी को यह मात्रा सह्य है या नहीं। फिर १।४ मिलीग्राम की मात्रा जो १ सी. सी. में हो उसे प्रति दिन एक बार देना चाहिए। यह ध्यान रखें कि सूचीवेध के समय औषधि शिरा में ही जाए शिरा से बाहर नहीं।

सोडियम ओरोथियोसल्फेट
Sodium Aurothiosulphate

सैनोक्राईसिन Sanocrysin

नोवाक्राईसिन Novacrysin

ओरोबिन Aurobin

क्राईसालबिन Crysalbin

ये सब प्रायः एक ही द्रव्य हैं, नाम इनके अलग-अलग हैं।

गुण—ये सभी स्वर्ण के योग हैं, इनका विलियन ५ प्रतिशत की शक्ति से आरम्भ होता है अथवा ०.०१ ग्राम से ०.५ ग्राम तक १ या २ सी. सी. परिस्रुत जल में विलियन करके प्रयुक्त होता है। और विशेष कर क्षयरोग में अधिक लाभदायक माना गया है। हमारे आयुर्वेद में स्वर्ण को जहां प्रयोग करने की आज्ञा है वहां-वहां इसे प्रयोग करके देखना चाहिए। क्षय जन्य पीडिकायें, चर्म में स्थान-स्थान पर लाल चकत्ते, आमवात, संधिप्रदाह में यह विशेष लाभ करता है, इसके अतिरिक्त ल्यूपस जिसमें मुंह नाक की त्वचा लाल होकर शोथयुक्त हो जाती है, और कालान्तर में यह स्थान गलने लगता है वहां एक प्रकार का दाना सा भी बनकर वह पककर गलने लगता है, यह इस रोग में भी लाभदायक है। इस प्रकार यह जहां स्वर्ण प्रयोग की आवश्यकता हो वहां सफलता के साथ वरतना चाहिए।

कभी कभी इसके व्यवहार से विषैले लक्षण भी उत्पन्न होने लगते हैं, अतः इसके प्रयोग के साथ-साथ मधुर खटिक (केल्शियम लेक्टेट), या केलशियम ग्लूकोनेट और विटामिन ए. बी१, बी२, सी. को साथ में देते रहने से अनिष्ट की कम सम्भावना रहती है। ज्वरावस्था में या तो इसे प्रयोग ही नहीं करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये, अथवा इसे अत्यल्प मात्रा में देना ठीक होता है। ऐसी दशा में बजाए इसके साप्ताहिक प्रयोग करने के दो सप्ताह या १०-१२ दिनों में प्रयोग करना चाहिए। यह सदैव भोजनोपरान्त प्रयुक्त होता है जब भोजन को खाए दो घण्टे व्यतीत होजाएँ। अगर क्षय का उग्र रूप न हो और आरम्भिक दशा हो तब इसे न दें, अथवा जब एकज़ीमा हो, मूत्र में एल्ब्यूमिन आता हो, आंत्रिक क्षय हो, फुफ्फुस में व्रणपूर्ण गढ़े (Cavity) पड़ गए हों, चर्म में पाक या शोथ Dermatitis हो तब भी इसका प्रयोग वर्जित है।

प्रयोग--इसे सप्ताह में एक बार देना चाहिए, और प्रायः ०.०५ से ०.५ ग्राम तक देने का एक कोर्स होता है, अतः एक कोर्स की समाप्ति पर १-१½ मास का विश्राम करना चाहिये और आवश्यकता हो तो पुनः कोर्स चालू कर दें।

सदैव शिरान्तर्गत विधि से इसे प्रयोग करें, यदि असावधानी से इसका कुछ अंश शिरा से निकल कर त्वचा के नीचे आजाए तो अत्यन्त असह्य पीड़ा होती है और तब उसे शान्त करने के लिए १० ग्रेन की मात्रा में सोडियम थियोसल्फेट को ५ सी. सी. परिस्रुत जल में घोल कर प्रयुक्त करना चाहिए। यह इन्जेक्शन उसी स्थान पर जहां वेदना हो लगाना चाहिये।

सल्फा पाईरिडीन सोडियम
(Sulpha Pyridine sodium)

यह पीछे वर्णित एम० बी ६९३ साल्यूबिल है जो एम० बी० ६९३ के अधिकार में लिख आए हैं। इसके पर्याय डेगिनान सोडियम भी है।

प्रयोग और मात्रा का वर्णन पीछे दिया गया है। गुण भी पाठक एम० बी० ६९३ के वर्णन में पढ़लें।

सुरामीन या जर्मेनिन
(Suramin or Germanin)

यह औषधि बेयर कम्पनी की बनाई हुई थी और अब प्रायः कम मिलती है, बल्कि नहीं मिलती। यह चर्म शोथ, या वृक्क शोथ की उपस्थिति में वर्जनीय है। इसके प्रयोग से सौषुम्न अपचय Tripnosomiasis रोग में अत्यधिक लाभ होता है।

मात्रा प्रयोग--शिरागत इसे १५ ग्रेन १० सी. सी. में विलीन करके प्रयोग करते हैं। पहले रोगी की सहनशक्ति देखने के लिए ०.५ ग्राम देकर देखें यदि उसको कोई उपद्रव न हुआ तो दो दिन के बाद पूर्ण मात्रा १ ग्राम (१५ ग्रेन) की देनी चाहिए। और प्रति सप्ताह १ ग्रेन देते हुए एक कोर्स ५ इन्जेक्शन का देना चाहिए।

स्पार्टिन सल्फेट
(Spartein sulphate)

यह क्रिया में Coniine की तरह है, तथा मध्य स्नायुविक केन्द्र (Central Nervous system) पर बहुत कम प्रभाव करती है, बड़ी मात्राएँ सांवेदनिक नाड़ियों को शून्य कर देती हैं, हृदय सुस्त हो जाता है। पहले यह डिजिटेलिस के स्थान पर प्रयुक्त किया जाता था, पर उपरोक्त उपद्रवों के कारण इसका व्यवहार अब बन्द कर दिया गया है। आजकल वृक्क प्रदाह Nephritis, एवं हृदय रोग जन्य शोथ को दूर करता है, यह Conium से कम विषैली है, और इसका प्रभाव बीटा नेप्टाल से मिलता जुलता है।

मात्रा-प्रयोग--इसकी आधा ग्रेन की टिकियां आती हैं और १ सी. सी. परिस्रुत जल में घोलकर उनको मांसान्तर्गत विधि से प्रयुक्त करते हैं। इसकी क्रिया जरा बिलम्ब से होती है।

स्क्लेरोजिंग सोलूशन
(Sclerosing Solusion)

इसके दो योग आते हैं-

१-लिथियम सैलीसिलेट ३०%, प्रोकेन सैलीसिलेट १%	२ सी. सी. मात्रा
२-क्वीनीन यूरेथेन तथा सोडियम मोरुयेट ०.१%	२ सी. सी. मात्रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये औषधियां शिराकाठिन्य शोथ में १ सी. सी. से २ सी. सी. तक शिरा द्वारा प्रयुक्त होती हैं, प्रति तीसरे चौथे दिन प्रतिक्रिया के अनुसार इसका प्रयोग करना चाहिए।

स्प्रिट ईथर या सल्फ्यूरिक ईथर
(Spirit Ether or sulphuric Ether)

यह मदिरा का सार है, जो इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने पर शरीर में उत्तेजना लाती है। स्नायुशूल, हृदौर्बल्य, श्वासप्रणाली की कमजोरी, आक्षेप एवं पीड़ा को हरती है, कभी-कभी इसके प्रयोग से भयंकर हिक्का में अत्यंत लाभ होता है।

मात्रा प्रयोग—अधस्त्वगीय १० से ३० बूंद तक। परन्तु इसके प्रयोग से त्वगान्तर भाग में अति दाह होता है अतः इसे जैतून के तैल में मिलाकर प्रयोग करना चाहिए। उस। १०४० बूंद तक बेहोशी, हृदयावरोध, मूर्च्छा में अधस्त्वगीय प्रयोग करें, हृत्शूल, बारम्बार उठने वाली खांसी तथा कुकुरखांसी में इसके ७-८ माह के बच्चे को मांसगत विधि से १ सी. सी. तक दे देना चाहिए। परन्तु चूंकि पीड़ा और मांस के गलने का भय रहता है अतः इसे कमी के साथ प्रयोग किया जाता है। फुफ्फुस को तथा हृदय को इससे शक्ति मिलती है।

एमीटाक्स
Ametox (M. B.)

यह मे बेकर कम्पनी का योग दो रूप में आता है।

(१) सोडियम थियोसल्फेट सोलूशन
(Sodium Thiosulphate solution)

जो कि धातु-विषमयता तथा उन रोगियों में जिनके शरीर पर मल्ल के प्रयोगोपरान्त शोथ हो गया हो, या ऐसी दशा विस्मथ और स्वर्ण के लवणों के प्रयोग के कारण हो गई हो, प्रयोग होता है। इसके अतिरिक्त शीतपित्त में भी इसका प्रयोग सफलता से होता है। पेलेग्रा रोग में इससे अधिक लाभ होते देखा गया है।

मात्रा प्रयोग—इसका प्रयोग बहुधा शिरा द्वारा ५ से १० सी. सी. तक इसके १० प्रतिशित शक्ति के घोल का होता है, इसे मांसान्तर्गत बहुत ही कम प्रयुक्त करते हैं।

(२) मेगनेशियम थियोसल्फेट
(Magnesium Thiosulphate)

यह श्वास, श्वसनक ज्वर, शीतपित्त, इकचीमा, और अन्जी के लक्षणों में प्रयुक्त होता है। परन्तु यह मुख द्वारा ही दिया जाता है, मात्रा प्रतिदिन २-१० गोलियां (जो ०.५ ग्राम की होती हैं)।

सोडियम सेलीसिलेट
(sodium salicylate)

यह चूर्ण अथवा टिकिया के रूप में आती है। और विशेष कर आमवातज ज्वरों पर इसका प्रयोग होता है। इसके अतिरिक्त तीव्र ज्वर, संधि शोथ, और स्नायुविक वेदनाओं में इसे सफलता से दिया जाता है। यह गठिया, वात-व्याधि, स्त्रीरोगों में, कटिशूल, गृध्रसी में अत्यन्त हितकर है। इसका प्रयोग प्रतिदिन एक बार या दो बार करते हैं।

इसका योग निम्न प्रकार के बनाया हुआ ठीक रहता है—

सोडियम सेलीसिलेट (शुद्ध) २ ड्राम या ८ ग्राम
परिस्रुत जल ताजा ५० सी. सी. या १½ औंस

इसमें से २ सी.सी. प्रतिदिन एक या दो बार देते हैं। इसी में कैफीन सोडियम बेन्जोएट १।२ या २ ड्राम मिला ली जाय तो अधिक लाभदायक और पीड़ा कम करने वाला हो जाता है।

मात्रा विधि-यह १ सी.सी. में १ ग्रेन, २ सी.सी. में २, और ५ ग्रेन तक घुला हुआ आता है। जब सोडा-सेलीसिलास का मुख द्वारा प्रयोग रुचिकर न हो तब यह त्वचांतर्गत या शिरान्तर्गत दिया जाता है। त्वचान्तर्गत देने से कभी-कभी पीड़ा बहुत होती है, अतः शिरामार्ग द्वारा देने में अधिक सुगमता रहती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे सप्ताह में २-३ बार भी देते हैं।

सोडियम नाईट्रेट
(Sodium nitrate)

जब यकायक किसी कारण दृष्टि-नाड़ी का नाश (atrophy of optic nerve) या आंख के गोले के पिछले भाग में स्थित नाड़ी का शोथ होकर दृष्टि-नाश होने लगे तब इसका प्रयोग अपना प्रभाव दिखाता है, इसके अतिरिक्त जो व्यक्ति तम्बाकू अधिक पीते हैं और उनको धुंधला दिखाई देता है तब इसके प्रयोग से काफी सफलता मिलती है। यदि दृष्टि नाड़ी की शक्ति का ह्रास पूर्णतः हुआ हो तो इसके प्रयोग से १०-२० दिनों में पुनः दृष्टि आ जाती है, इस प्रकार ६० प्रतिशत रोगियों को लाभ हो जाता है।

मात्रा प्रयोग—शिरागत इसे ०.०४ से ०.१ ग्राम तक १० प्रतिशत की शक्ति के विलियन के रूप में प्रयोग करते हैं।

सोडियम अमीटाल
(Sodium Amytal)

गुण-यह बार्बीट्यूरेट श्रेणी की औषधि है और संज्ञाहीनता उत्पन्न करने के लिए प्रयुक्त की जाती है। यह एक तीव्र निद्राकर औषधि है तथा अतिशीघ्र अचेतना एवं संज्ञाहीनता उत्पन्न कर देती है। चूंकि इससे बेहोशी अत्यन्त शीघ्रता से उत्पन्न होजाती है, अतः इसका प्रयोग शल्यकर्म करने से जरा देर पहले ही करना चाहिये। इसका प्रभाव चूंकि रक्तनलिकाओं और श्वास संस्थान पर होता है यह शीघ्र ही रक्तचाप कम कर देती है। शरीर में इसका पूर्णरूपेण नाश होजाता है। जब कुचला का विषैला लक्षण होगया हो, अथवा धनुर्वात् (tetanus) रोग में आक्षेप होरहा हो तब इसका प्रयोग पूरी मात्रा में करते हैं। मांसपेशी में ऐंठन और प्रसवकालीन विषमयता, कोकीन के विष को दूर करती है।

प्रयोग विधि एवं मात्रा—

इसका १० प्रतिशत का विलियन प्रयुक्त होता है, तथा शिरा द्वारा इसे प्रति मिनट में १ सी. सी. की मात्रा से प्रविष्ट करते हैं, साधारणतया प्रभाव उत्पन्न करने के लिये ७ से १५ ग्रेन तक औषधि पर्याप्त होती है। जब संज्ञाहीनता उत्पन्न हो जाय तब इसे रोकलें सुई को वहीं लगी रहने दें और वहीं पिचकारी भी अड़ी रहने दें। यदि और बेहोशी पैदा करनी अभीष्ट हो तो इसे और भी दिया जा सकता है।

सोडियम बेंज़ोएट
(Sodium Benzoate)

गुण-यदि फुफ्फुस में उत्पन्न हुई गेंग्रीन(विद्रधि) सड़ने वाली विद्रधि का रूप धारण करले तो इसका प्रयोग आशुफलदायक होता है।

मात्रा प्रयोग—२० प्रतिशत शक्ति के विलियन को प्रतिदिन शिरान्तर्गत विधि द्वारा २० सी. सी. की मात्रा तक प्रविष्ट किया जाता है।

सोडियम फोनीबार्बीटोन
(Sodium Phenobarbitone)

इसको Luminal sodium भी कहते हैं, अन्य नामों से भी यह मिलता है, यह मृगी, गर्भावस्था की विषमयता, काली खांसी, कुचले का विष दूर करने के लिए प्रयुक्त होता है। यह बेयर कम्पनी की औषधि थी, अब प्रायः दुष्प्राप्य है। इस sod. phenobarb. के अन्य योग गर्डिनल नाम के मिल जाते हैं।

मात्रा प्रयोग–१/२ से ६ ग्रेन तक, एक बार में अधिक से अधिक ६ ग्रेन, एक दिन में अधिक से अधिक १२ ग्रेन दे सकते हैं। यह मांसपेशीगत ही दिया जाता है।

सोडियम बाईबोरेट
(Sodium biborate)

टंकण द्वारा इसका ५ प्रतिशत का विलियन बनाया जाता है और यह पित्ताशय शूल (यकृत्शूल) cholecystitis में सफलता से व्यवहार की जाती है। इसके प्रयोग द्वारा रोगियों की भूख बढ़ जाती है और उनका शारीरिक भार बढ़ जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—५ सी. सी. से १० सी. सी. तक की मात्रा में इसका १० प्रतिशत का घोल प्रयोग किया जाता है।

सोडियम मोरुयेट
(Sodium Morrhuate)

इसका निर्माण काडलिवर आयल और सोडियम साल्ट से होता है, यह एक स्केलोसिंग औषधि है इसके प्रयोग से उभरी हुई कठिन शिराएं प्रायः ठीक होजाती हैं, यह कुष्ठ रोग में तथा राजयक्ष्मा में प्रयुक्त की जाती है।

प्रयोग एवं मात्रा

इसका २ प्रतिशत एवं ३ प्रतिशत की शक्ति का योग प्रयोग किया जाता है। अधस्त्वगीय प्रयोग में १ सी. सी. से २ सी. सी. तक २ प्रतिशत को और फिर शिरा द्वारा ३ प्रतिशत वाली को आधा सी. सी. से ५ सी.सी. तक प्रयुक्त करते हैं। आरम्भ में हमेशा २ प्रतिशत के योग को प्रयोग करें और क्रमशः १।४ से १।२ सी. सी. प्रतिवार बढ़ाते हुए २ सी. सी. तक लावें, तब शिरा द्वारा ३ प्रतिशत को १.२ या १ सी.सी. दें और १।२ सी. सी. प्रतिबार बढ़ाते हुए ५ सी. सी. तक ले आवें।

सोडियम फ्लोरिड
(Sodium flourid)

यह घेघे रोग में दी जाती है, जब हृदय की गति तीव्र हो और साथ में घेघे का भी रोग हो तब इसका प्रयोग होता है और अत्यधिक लाभ होता है। यह हृदयस्पन्दन को जो बढ़ा हुआ होता है कम कर देती है और घेघे को कम करके शरीर के भार को बढ़ाने लगती है। इसके प्रयोग से किसी भी प्रकार की हानि या अनिष्ट प्रतिक्रिया जैसी कि आयोडिन के प्रयोगों से होती है, नहीं होसकती।

मात्रा मार्ग—इसको शिरामार्ग द्वारा १।१२ ग्रेन से १.२ ग्रेन तक क्रमशः बढ़ाते हुए प्रयोग करना चाहिए।

सोडियम लेक्टेट
(Sodium Lactate)

जब किसी भी रोग जैसे मधुमेह, अतिसार, हैजा, वमन द्वारा शरीर का जलीयांश अधिक निकल जाता है, तब इसका प्रयोग लाभ करता है। वैसे इसको मधुमेह जन्य मूर्छा Coma में इन्सुलिन के साथ-साथ देते हैं। इसका प्रयोग वृक्क शोथ Nephritis में भी कर सकते हैं। इसको जब मधुमेह जन्य मूर्छा में इन्सुलीन के साथ मिलाकर प्रयोग करने से अन्य और उपायों से अधिक लाभ होता है।

इसका विशेष लाभ यह होता है कि इसका लवण भाग (सोडियम) प्रथक होकर रक्ताम्लता (Acidosis) को दूर कर देता है, और लेक्टेट भाग यकृत में जाकर मधुर भाग का रूपान्तर ग्लाइकोजन बन जाता है। यह सिद्धान्त अन्य चिकित्सकों ने भी उपकारी माना है।

मार्ग मात्रा—शिरा द्वारा इसका ५० सी. सी. विलियन और २ यूनिट इन्सुलिन प्रत्येक १ किलो-ग्राम भार पर देना चाहिये।

रूबिल (Rubyl)

इसमें कुनीन, बिस्मथ और आयोडीन का एक मिश्रित योग है जो उपदंश में प्रयुक्त किया जाता है।

मात्रा—इसे मांसपेशी द्वारा ३॥ सी. सी. की मात्रा में १० प्रतिशत के विलियन को प्रयोग करना चाहिए और प्रति सप्ताह दो बार प्रयोग करना उचित रहता है।

सोडियम बाईकार्बोनेट
(Sodium bicarbonate)

साधारण सोडाकार्ब (खाने के सोडे) का ३ प्रतिशत या ५ प्रतिशत शक्ति का घोल बनाकर प्रयुक्त किया जाता है। यद्यपि यह साधारण औषधि है परन्तु इसका गुण और रोग शमन प्रभाव अत्यधिक है। इसको प्रयोग करने के लिए निम्न प्रकार से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विलियन निर्माण करना चाहिए जो कि बहुधा हैजे में प्रयुक्त होता है।

सोडाबाई कार्ब	१६० ग्रेन
सोडियम क्लोराइड (नमक)	६० ग्रेन
परिस्रुत जल	१ पाइण्ट (२० औंस)

यह विशूचिका में जब शरीर का जलांश अधिक निकल जाता है तब रक्त की प्रतिक्रिया का पुनः अम्लीय से क्षारीय करने के लिए इसको प्रयुक्त करते हैं. इससे रक्त की अम्लता नष्ट हो जाती है और मूत्र न आने से जो मूत्र रक्तता Uraemia का विष शरीर में उत्पन्न हो जाता है वह भी नहीं होता। हैजे में मूत्रावरोध जन्य मूत्र विषमयता Uraemia द्वारा होने वाली मृत्यु होने की प्रायः सम्भावना कम हो जाती है।

इसके अतिरिक्त जब मधुमेह जन्य रक्त अम्लता Diabetic Acidosis के कारण बेहोशी Coma हो जाती है तब भी इसको अकेले १.३ प्रतिशत की शक्ति में इन्सुलीन के साथ प्रयोग करने से शीघ्र रोगी को होश आजाता है।

गर्भावस्था में भी जब रक्त में अम्लभाव अधिक होकर विषमयता Toxaemia अधिक बढ़ जाती है तब इसका प्रयोग लाभ करता है।

ब्लेकवाटरफीवर में इसे १५० ग्रेन से लेकर १ पाईन्ट (२० औंस) पानी में मिलाकर. इसमें डिजिटेलिस स्ट्रिकनीन मिलाकर त्वगधः विधि से इन्जेक्शन देना चाहिये, अत्यन्त लाभ होता है।

इसी प्रकार एस्पिरीन के विष को यह हरती है। जब शिशु बारम्बार दुग्ध वमन करे, और फटे हुए अतिसार होने लगें तब इसको अल्प मात्रा में देने से लाभ होता है।

इसे सदैव शिरागत विधि से देना चाहिए, और यदि चमड़े के नीचे देना हो तो जहां कि चमड़े के नीचे का स्थान ढीला हो वहां (जैसे बगल, पेट, छाती, स्तन) इन्जेक्शन लगाना ठीक होता है।

कभी भी इसको घोल कर के उस विलियन को दुबारा गरम नहीं करना चाहिए. बल्कि Sodabicarbonate को ओटोक्लेव (पीछे वर्णन देखें) में पूतिकरण करके, शुद्ध परिस्रुत जल में विलियन निर्माण करलें, और फिर उसे गरम न करें, यदि गरम कर लिया जाएगा तो वह एक भेदनीयक्षार Caustic sodium Carbonate बन कर जहां भी प्रयुक्त होगा वहां दाहक प्रभाव उत्पन्न करेगा।

स्पाज्मोलिसिन

(spasmolysin)

भारतीय कम्पनी "स्टेण्डर्ड कम्पनी" की बनी यह औषधि श्वास दमा पर दौरे के समय रामबाण का काम करती है। इसमें एड्रेनिलीन, एफेड्रीन, अर्गेह-नाल, एट्रोपीन सल्फ इत्यादि औषधियां मिली हैं। इसके अतिरिक्त इसमें आयुर्वेदिक औषधि बांसा का उपयोग भी है। श्वास के दौरे को तुरन्त शान्त करती है।

मात्रा प्रयोग—१ सी. सी. का एक एम्पुल अधःत्वगीय अथवा मांसान्तर्गत विधि से दें। तीव्र दशाओं में दो एम्पुल (२ सी. सी.) भी दे सकते हैं। यदि आवश्यकता पड़े तो १०-१० घण्टे पर दिन में दो बार भी यह दिया जा सकता है।

सोडियम हिडनोकार्पेट

(Sodium Hydnocarpate)

इसका दूसरा नाम Alepol भी है। यह एक प्रकार का लवण है जो चावल मूगरे की तरह हिडनोकार्पस वेटियाना (Hydnocarpus weightiana oil) के तैल से प्राप्त होती है और इसका ३% प्रतिशत की शक्ति का विलियन मांस पेशीगत या त्वचांतर्गत सप्ताह में दो बार ०.५ सी.सी. से बढ़ाकर ५ सी.सी. तक दिया जाता है।

यह कुष्ठ रोग में आक्रान्त स्थानों में प्रविष्ट भी की जाती है, इसके प्रयोग से कुष्ठ के जीवाणु मर जाते हैं, तथा शरीर को शक्ति भी प्राप्त होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोडियम चावल मूग्रेट
(Sodium Chaul Moograte)

इसका दूसरा नाम सोडियम गाईनोकार्डेट भी है। इसके दो प्रकार के योग निर्मित होते हैं। एक सोडियम चावल मोग्रास 'ए' जिसमें वसाम्ल Fatty acids का भाग अधिक होता है तथा सोडियम चावल मोग्रास 'सी' जिसमें उपरोक्त वसाम्ल भाग नहीं होते—

(Sodium Chaul moogras A, Sodium Chaulmoogras 'c')

इनका प्रयोग २%. से ३%. शक्ति में कुष्ठ में शिरा द्वारा किया जाता है।

इथाईलिस चावल मूग्रास यू. एस. पी.
Ethylis Chaulmoogras u. s. p.

इसके पर्याय इथाईल चावल मूग्रास Ethyl Chaulmoogras तथा मूमाल भी हैं। यह पीले वर्ण का तरल होता है, इसमें से गंध आती है। यह जल में नहीं घुलता बल्कि अल्कोहाल, क्लोरोफार्म और ईथर में मिल जाता है। इसकी १ सी.सी. या १५ बूंद तक की मात्रा मांस द्वारा प्रति सप्ताह दो एक बार देने की है। यह भी कुष्ठ की विशेष औषधि है।

सिन्कोडाईल
Cynkodyl (Standard)

इसमें कुनीन स्ट्रिकनीन और संखिये का मिश्रण है और यह दो प्रकार की शक्ति का आता है सिन्कोडाईल स्ट्राँग जिसमें कुनीन बाई हाईड्रोक्लोराईड की मात्रा १० ग्रेन होती है तथा सिन्कोल डाईल वीक जिसमें कुनीन बा० हा० की मात्रा ५ ग्रेन होती है। इसकी विशेषता यह है कि इसका इन्जेक्शन पीड़ा रहित होता है (यदि विधिवत् लगाया जाय) तथा साधारण कुनीन की अपेक्षा अधिक गुणदायक है। मलेरिया विषम ज्वर के लिए यह रामबाण है।

मात्रा विधि-युवा पुरुष को अधिक शक्ति वाला योग २४ घण्टे में दो बार देदेना चाहिए, उसके बाद मुख द्वारा कुनीन का प्रयोग चालू कर देना चाहिये। ८ से १२ वर्ष के बालकों को कम शक्ति वाला योग इसी प्रकार लगावें। इससे कम आयु वालों को वीक इस योग का १/२ या १/४ भाग देना चाहिये। इन्जेक्शन सदैव नितम्ब के मांस भाग में गहरा लगाना चाहिये।

सोडियम डिहाईड्रोकोलेट
(Sodium Dehydrocholate)

यह दो प्रकार के रूप में आता है।

(१) डिकोलीन सोडियम-जिसकी २०%. शक्ति के घोल की १० सी.सी. को एक एम्पुल आती है।

(२) सुप्राकाल २०%. शक्ति के घोल की ५ सी.सी. से १० सी.सी. तक की एम्पुल आती है।

इसको सदैव २०%. की शक्ति में ही प्रयोग करते हैं और यह औषधि वृक्क के कार्य को ही उत्तेजित करती है, इसके प्रयोग से मूत्र अधिक आता है।

मात्रा विधि—५ सी. सी. तक शिरान्तर्गत विधि से देना चाहिये।

सोडियम केकोडाईलेट
(Sodium Cacodylate)

मल्ल (संख्या) का यह योग है। इसका प्रयोग जहां पर संख्या का व्यवहार होता है वहां किया जाता है। जैसे विषमज्वर (मलेरिया) में, क्षय Pthisis रक्तहीनता, अङ्गों के फड़कने में Chorea तथा चर्म के जीर्ण रोगों में इसे देते हैं। कुछ का मत है कि घेघे Goitre रोग की यह महान उपकारी औषधि है। विषम ज्वर की सीहा में इसे देते हैं। यह उपदंश रोग में सफलता पूर्वक दी जाती है और प्रसिद्ध औषधि सोआमीन की तरह कार्य करती है। अहिफेन का अभ्यासी जब अहिफेन का सेवन त्याग देता है और निर्बलता अनुभव करता है तब इसे अत्यल्प मात्रा में प्रयोग करना चाहिये। इसकी मात्रा सीहा, उपदंश और विषमज्वर में अन्य रोगों में दी जाने वाली मात्रा की अपेक्षा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिक होनी चाहिये। इसका दूसरा नाम सोडियम-डाई-मीथाइलार्सोनेट है।

मात्रा–चर्म तथा क्षय में मांसगत १-२ ग्रेन की मात्रा में दें, अधस्त्वगीय देने के लिए १।२ ग्रेन से १ ग्रेन तक देकर क्रमशः ३ ग्रेन तक बढ़ा सकते हैं यह मात्रा अधिक से अधिक है जो २४ घण्टे में दी जा सकती है।

डाई–सोडियम मिथाईलार्सोनेट

(Di-sodium Methylarsonate)

इसके पर्याय अर्रेह्नाल, तथा न्यू कैकोडाईल है, और उपरोक्त की तरह गुणकारी और प्रयुक्त की जाती है। इसमें संखिये का अंश २७-३५ प्रतिशत होता है।

ट्रैसिनटीन ६ एच

(Trasentin 6 H)

यह पेपावेरेन एवं एट्रोनिलीन की तरह कार्य करता है। और प्रत्येक प्रकार के संकोचन को प्रसारित कर देता है। चाहे वह संकोचन मांसपेशीगत हो, आमाशय, पित्त-वाहक नलिका में हो या आमाशयगत व्रण के कारण ग्रहणी मुख बन्द हो और तज्जन्य शूल हो, पाचक संस्थान के तीव्र शूल में, हृत्संकोचन (Cardiac Spasm) आंतों के संकोच के कारण उत्पन्न मल-बद्धता, यकृतशूल (Biliary-calic) किसी कारण से मूत्राशय संकोच जन्य मूत्रावरोध जन्य संकोच, अथवा मूत्र वाहक नलिका (Ureter) के संकोच से उत्पन्न शूल, मसोस, मरोड़, मासिक स्राव होते समय वहां की रक्त नलिकाओं के संकोचन से उत्पन्न शूल, कष्टार्तव, इत्यादि शरीर गत किसी भी भाग में संकोच भावोद्भव पीड़ा और शोथ में लाभ करता है।

मात्रा विधि—.०७५ ग्राम की मात्रा १०७ सी.सी. के विलियन में प्रतिदिन एक या दो बार आवश्यकतानुसार, मांस पेशीगत अथवा अधस्त्वगीय। जब इसके एम्पुल के प्रयोग से कम काम चलता हो तब इसी की २ से ६ टिकियां .०७५ ग्राम की टिकियां अथवा १ गुदावर्ति भी प्रयोग की जा सकती है।

पुलमोचिन

(Pulmochin, union)

यह कर्पूर और कुनीन का तैल में विघुलित योग है। इसमें कुनीन ३%, कर्पूर २.५%. होता है। इसका प्रभाव तीव्र एवं जीर्ण फुफ्फुसीय विकारों को शमन करने के हेतु जैसे तीव्र कास, ब्राँकाईटिस, निमोनिया, इन्फ्लुएञ्जा युक्त निमोनियां, एवं फुफ्फुस शोथ एवं पाक, जैसी खांसी जिसमें बदबूदार बलग़म आता हो, फुफ्फुसीय व्रण अथवा सड़ांधयुक्त व्रण, (Gangrene) श्वास, यक्ष्मा इत्यादि में व्यवहृत होता है।

मात्रा विधि–बड़ों के लिए प्रतिदिन २ सी.सी. का मात्रा प्रयुक्त करनी चाहिए, बच्चों के लिए १ सी.सी. या कुछ कम। इसको नितम्ब के मांस भाग में गहरा इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त करें। इसके इन्जेक्शन के कुछ घण्टों के बाद बलगम निकलना आरम्भ हो जाता है, अतः इसे प्रातः ही लगाना ठीक होता है, क्योंकि सायंकाल प्रयुक्त करने से रोगी को रात को खांसने, बलग़म निकालने के लिए जागना पड़ेगा।

कुर्चिलोयड

(Kurchiloid)

यह कुटज के क्षारोद (Alkaloid) का योग है। और अमीबिक प्रकार की पेचिश संग्रहणी, रक्तातिसार, आमातिसार तथा पाक रहित अमीबा जन्य यकृत शोथ (Non suppurative Amoebic Hepatitis) में विशेषकर लाभ करता है। देखा गया है कि कुटज के क्षारोद का इन्जेक्शन, प्रसिद्ध एलोपेथिक इन्जेक्शन एमिटीन की तरह अवसादक एवं उपद्रवकारक नहीं है. अतः इसको उक्त औषधि के स्थान पर प्रयुक्त कर सकते हैं।

मार्ग मात्रा—इसको मांसपेशो द्वारा प्रयुक्त करते हैं, तथा रोग, रोगी, रोगी की सहन शक्ति के अनुसार इसके इन्जेक्शन की मात्रा और संख्या निर्धारित की जाती है। वैसे इसके प्रत्येक १ सी.सी. वाले एम्पुल में १ ग्रेन कुटज का क्षारोद होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह एक एम्पुल तीव्रावस्था में प्रतिदिन लगाना चाहिए इसके छः इन्जेक्शनों का एक कोर्स प्रायः होता है। तथा १ सप्ताह के विश्राम के उपरान्त दूसरा कोर्स भी प्रारम्भ किया जा सकता है। जीर्ण रोग में एक दूसरे इन्जेक्शन के मध्य का समय बढ़ा देना ठीक होता है, इसी प्रकार बालकों के लिए इसकी मात्रा १।२ या १।३ सी.सी. कर देनी चाहिए।

केलसीब्रोनेट
(Calcibronate)

गुण—यह चूने (Calcium) का योग है और सैंडोज कम्पनी का बनाया हुआ है, इसका विशेष प्रयोग मृगी, शीत पित्त (Urticaria), खाज, पामा, त्वचा का शोथ, एक्जमा, श्वसनकज्वर (Hayfever) श्वास, दमा, भ्रम, कानों में भांय-भांय होना इत्यादि रोगों को नष्ट करता है।

मात्रा मार्ग-इसको ५ सी. सी. से १० सी. सी. तक रोग, रोगी अवस्था भेद से सप्ताह में दो या तीन बार मांसा॰तर्गत और शिरा मार्ग द्वारा प्रयुक्त करते है।

केलसियोस्टेब
(Calciostab)

इसका प्रयोग विषैली धातुओं जैसे विस्मथ, संखिया इत्यादि के प्रयोग से उत्पन्न विकारों में प्रति दिन ६-७ दिन तक, फिर उसके उपरान्त दूसरे दिन शिरा मार्ग द्वारा २ से ६ सी. सी. तक प्रयुक्त किया जाता है।

सिवल्जिन (Cibalgin)

गुण—पीड़ाशूल हरने वाला, ज्वरहर, तथा प्रत्येक प्रकार की पीड़ा और शूल जो विशेष कर स्नायुविक होगी। जैसे दांत, शिरःशूल, अर्द्धावभेद, सूर्यावर्त, कर्णशूल, गृध्रसी, आमवातज शूल, मासिक धर्म के समय उठने वाला शूल, मक्कल शूल इत्यदि पीड़ा को हरता है।

मात्रा मार्ग—इसको १ या २ सी. सी. की मात्रा में मांसान्तर्गत या शिरान्तर्गत विधि से आवश्यकतानुसार प्रयोग करना चाहिए।

कोर्वोटोन (Corvotone)

गुण—यह एक विश्वसनीय हृदय एवं फुफ्फुस क्रिया उत्तेजक है, जब अचानक हृदयावसाद, हृदयावरोध, श्वासावरोध होने लगे जैसे विशेषकर निमोनिया इत्यादि में तब इसका प्रयोग आशातीत लाभ करता है, बेहोशी में भी इसका व्यवहार करने से शीघ्र चेतना आती है।

मात्रा मार्ग—आवश्यकतानुसार २ सी. सी. से ५ सी. सी. तक मांसान्तर्गत, अधस्त्वगीय अथवा शिरान्तर्गत विधि से देना चाहिए।

डिजिफोलिन (Digifolin)

यह सिवा कम्पनी की बनाई हुई औषधि डिजीटेलिस औषधि का योग है, जिसका व्यवहार उन समस्त अवस्थाओं में सफलता पूर्वक एवं निरापद रूप से किया जा सकता है जहां पर प्रायः डिजिटेलिस के अन्य योग प्रयुक्त किये जाते हैं। इसे प्रतिदिन १ से ४ बार प्रति एम्पुल के हिसाब से मांसान्तर्गत तथा शिरान्तर्गत दे सकते हैं। डिजिटेलिस के विवरण के लिए पीछे डिजिटेलिस की औषधियों का प्रकरण देखें।

हायोसीन हाइड्रोब्रोमाइड
(Hyoscine Hydrobromide)

गुण—यह एक तीव्र निद्राजनक, मस्तिष्क केन्द्रों की उत्तेजनाओं को शमन करने वाली उग्रौषधि है। इसके प्रयोग से मृगी, पागलपन, प्रसवोपरान्त विषमयता, कोरिया, मदात्यय, उन्माद, अनिद्रा, मस्तिष्क, उत्तेजना शान्त हो जाती है। रोगी को तुरन्त शान्ति मिल जाती है।

मात्रा—इसके प्रत्येक सी. सी. एम्पुल में १।१०० ग्रेन मूलौषधि घुली होती है। इसका प्रयोग त्वचान्तर्गत तथा मांसान्तर्गत विधि से किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयोडोलाइसिन (Iodolysin)

गुण—यह आयोडीन का एक योग है और विशेषकर जहां आयोडीन का प्रयोग करना होता है वहां किया जाता है, इसके अतिरिक्त यह आमवातज संधिप्रदाह के लिए इसका प्रयोग मुख्यतया होता है। संधिगतशोथ इसके तीन-चार इन्जेक्शनों से ही दूर हो जाती है।

मात्रा मार्ग—सप्ताह में ३-४ बार इसको १।२ सी. सी. से २ सी. सी. की मात्रा तक प्रयोग करें। इसको त्वचान्तर्गत या मांसान्तर्गत जैसी अवस्था विशेष हो लगाना चाहिए।

लेक्टुमिन (Lactumin)

यह दूध का इन्जेक्शन है और पीछे वर्णित दूध के इन्जेक्शनों की तरह इसका प्रयोग होता है। यह बहुधा मांसगत लगाया जाता है।

लिवो-कैल्सिन (Levu Calcin)

खटिक का एक हानिरहित और बहुगुण सम्पन्न यह योग विशेषतया क्षयरोग और फुफ्फुसीय रोग, तथा जहां चूने की अधिक आवश्यकता है,प्रयोग होता है। रक्तस्राव होने की दशा में इसका प्रयोग करने पर प्रायः विशेष लाभ होता है। इसको २ सी. सी. से १० सी. सी. तक मांसान्तर्गत विधि से दें।

लोबिलीन 'सेण्डोज़' (Lobeline 'sandoz')

सेण्डोज़ कम्पनी का यह योग लोबिलिया द्वारा बनाया जाता है। और शीत, प्रतिश्याय, निमोनिया, श्वास, दमा, छाती की ठण्ड, जुकाम, खांसी, नवजात-शिशु के श्वासावरोध में विशेष रूप से प्रयुक्त होता है। इसको ०.००३ ग्राम से ०.०१ ग्राम तक प्रतिबार २४ घण्टों में १-२ बार मांसान्तर्गत अधस्त्वगीय, तथा शिरान्तर्गत जैसी आवश्यकता हो देना चाहिए।

डिजिलेनिड (Digilenid)

यह डिजेटेलिस का योग सेन्डोज़ कम्पनी का बनाया हुआ है। और जहां-जहां डिजिटेलिस का प्रयोग करना अभीष्ट हो वहां-वहां इसे प्रयोग करना चाहिए। यह रोज़ाना इन्ट्रावीनस विधि से ४ सी.सी. तथा मांसान्तर्गत विधि से २ सी. सी. प्रयुक्त होता है।

गोनाक्रीन (Gonacrine)

यह एक्रीफ्लेविन का विलियन होता है और प्रायः मूत्रसंस्थान के संक्रमण युक्त रोग जैसे सुज़ाक, शोथ तथा सुज़ाक जन्य रोगों आदि पर प्रभावकारी है। इसको देने से प्रायः हानि कुछ नहीं होती; कभी-कभी जी मचलाना इत्यादि उपद्रव हो सकता है जो औषधि देना बन्द करने पर दूर हो जाते हैं, ये उपद्रव भी बड़ी मात्रा देने पर होते हैं, साधारणतया यह निरापद है।

मात्रा—इसको २ सी. सी. तक शिरान्तर्गत अवस्था रोग दशा के अनुसार देना चाहिए।

गाईनेर्जिन (Gynergin)

गुण—सेण्डोज़ कम्पनी का यह योग शिरःशूल अर्द्धावभेद, भ्रम, रक्तस्राव, प्रसवोपरांत होने वाला रक्तस्राव तथा अन्य रक्तस्रावों में प्रयुक्त होता है।

मात्रा विधि—आधा सी. सी. तक दशा अवस्था भेद से आवश्यकतानुसार अधस्त्वगीय, मांसान्तर्गत तथा शिरान्तर्गत विधि से।

हिपास्टेब (Hepastab)

गुण- बूट्स कम्पनी का यह योग यकृत जन्य विकार और विशेषकर रक्तहीनता में बहुत प्रचलित है इसका सीधा प्रभाव रक्त के लाल कणों की वृद्धि पर होता है जो तीव्र गति से बढ़ने आरम्भ हो जाते हैं और कुछ कालोपरांत चेहरा लाल हो जाता है यह तभी गुण करता है जब विकार विशेषकर यकृत के कारण से हो।

मात्रा-विधि—इसको क्रमशः बढ़ाते हुए २ सी. सी. तक मांसान्तर्गत विधि से दें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिपाटेक्स कम्पाऊंड
(Hepatex 'Compound')

यह ईवान्स कम्पनी का योग है, इसमें यकृतसार का मिश्रण भी है, और यह भी उपरवर्णित योग की तरह दुर्बलता, रक्तहीनता के रोग में बहु-प्रचलित है। इसका प्रयोग भी १ सी. सी या २ सी. सी. नित्य या तीसरे दिन मांसान्तर्गत विधि से देना चाहिए।

हेक्सामीन (Hexamine)

गुण—यह औषधि मूत्र संस्थान पर अपना विशेष प्रभाव करती है, और इसका गुण उस स्थान के संक्रमण के विरुद्ध अपनी प्रतिक्रिया करने के रूप में होता है। इसके द्वारा मूत्र-मार्ग का प्रदाह, जो वृक्क से लगा कर मूत्र नलिका, मूत्राशय तक होता है। मूत्राशय शोथ, वृक्क शोथ, मूत्राघात, आंत्रिक ज्वर, पित्ताशय के शोथ एवं रोग, कामला जो पित्ताशय के शोथ के कारण हो, गर्दनतोड़ बुखार, व्रणमेह, सुजाक, एवं विषमयता Septicaemia इत्यादि में इसका व्यवहार होता है।

मात्रा विधि—इसको ४० प्रतिशत की शक्ति के घोल के रूप में ५ सी. सी. से १० सी. सी. तक प्रति तीसरे-चौथे दिन शिरा मार्ग द्वारा देना चाहिए। देने से पूर्व औषधि को कुछ शीतोष्ण कर लें।

हाईड्राजिरी परक्लोराइड
(Hydrargyri Perchloride) एवं
हाइड्राजिरी बिनआयोडाइड

(१) hyd. Per.(हाई॰ पर.)—यह पारद का योग है और उपदंश, फिरंग में अत्यधिक व्यवहृत होता है, इसका ३ प्रतिशत का विलियन १ तथा २ सी. सी. की मात्रा में मांसान्तर्गत दिया जाता है।

(२) hyd. Biniod. (हाई० बि०)—यह भी पारद का योग है और उपदंश, फिरंग के रोग एवं उसके विकारों में प्रयुक्त होता है, यह १।८ ग्रेन की मात्रा में १ सी. सी. में तथा १४ ग्रेन की मात्रा में १ सी. सी. तथा २ सी. सी. के एम्पुल में आता है और प्राय: मांसान्तर्गत तथा शिरागत प्रयुक्त होता है।

इन दोनों योगों का प्रयोग जहां पारद को प्रयोग किया जाता है वहां-वहां भी करते हैं, तथा जिन जिन बातों की सावधानी पारद को प्रयोग करने में रखी जाती हैं, उन्हीं-उन्हीं बातों की सावधानी इनके प्रयोग में भी रखनी चाहिए।

ओरिसॉल (Orisol)

यह औषधि बर्बेरिन सल्फ का योग है और प्राय: जब व्रण हठीला होजाता है अथवा दुष्ट व्रण जिन्हें लाहौर सोर या मुगलई फोड़े कहते हैं होजाते हैं तब इस औषधि का प्रयोग उस व्रण के चारों ओर के तन्तुओं में इन्जेक्शन द्वारा किया जाता है। समीपस्थ भाग के अन्दर इस औषधि के पहुंचते ही आराम होने की प्रतिक्रिया आरम्भ होजाती है।

प्रयोग-विधि—औषधि को पिचकारी के अन्दर भरकर उसकी सुई को व्रण के चारों ओर के स्वस्थ भाग में भोंककर इस हिसाब से औषधि को उन तन्तुओं में डालें कि व्रण के हिसाब से उसके चारों ओर (जगह जगह इंजेक्शन लगाकर) ०·५ से १·५ सी. सी. औषधि प्रविष्ट होजाय। इसी प्रकार द्वितीय बार प्रति सप्ताहोपरांत करना चाहिये।

फ्रेनाज़ोल (Phrenazol)

यह बूट्स कम्पनी का बनाया हुआ ऐसा योग है जिसमें सोमकल्पलता का सत्व विशेषकर है और यह इसीलिये हृदय और श्वास के अवरोधावस्था, एवं अवसादावस्था में इनकी क्रियाओं को उत्तेजित करने के लिए प्रयुक्त होता है, इसके अतिरिक्त ज्वर, निमोनिया, श्वास, मन्थर, हैजा और प्लेग में जब श्वास संस्थान और हृदयग्रसित होते हैं तब यह अपना प्रमुख प्रभाव दिखाता है।

मात्रा, विधि—१ सी. सी. की मात्रा का १ इंजेक्शन एक बार में लगाते हैं, इसको पुन: भी आव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्यकता पड़ने पर अधस्त्वगीय विधि से लगा सकते हैं।

फिज़ोलेक्टिन (Physolactin)

गुण—इसकी एक शीशी १५ सी. सी. की आती है और उसीमें से आवश्यकतानुसार प्रति बार निकाल निकाल कर प्रयुक्त करते रहने हैं। यह माता का दूध अधिक करने के लिए बहुधा प्रयुक्त होता है।

मात्रा और विधि—प्रथम व द्वितीय दिन ५-५ सी.सी. तीसरे व चौथे दिन २-२ सी.सी., पांचवे दिन १ सी. सी., इस प्रकार कुल पांच इंजेक्शनों से काम चल जाता है। विधि मांसान्तर्गत या त्वचान्तर्गत है।

पेरेण्ड्रिन (Parandrin)

सिबा कम्पनी के इस योग ने काफी ख्याति पाई है, इसका प्रयोग मांसातर्गत क्लेब्य, नपुंसकता, नष्ट कामवासना को जागृत करने के लिए, शक्तिवर्धन हेतु, वाजीकरण हेतु, दुर्बलता तथा स्त्रियों के आर्तव सम्बन्धी विकार तथा रजोनिवृत्ति के समय अन्य उपद्रवों की शान्ति के लिए किया जाता है।

मात्रा विधि—सप्ताह में १ से ३ बार तक मासान्तर्गत विधि से ५ से २५ मिलिग्राम तक इसका प्रयोग करें। इसके एम्पुल १ सी. सी. के तीन शक्ति के आते हैं, जो ५,१०,२५ मिलिग्राम के होते हैं।

पिथाईडीन हाइड्रोक्लोराइड
(Pethidine hydrochloride)

गुण—यह स्नायुविक शूल, आमवातज पीड़ा, कटिशूल, शरीर में होने वाले प्रत्येक प्रकार के शूल, जैसे प्रसवकालीन वेदना, मासिक-ऋतु का शूल, यकृत, वृक्क, शिर इत्यादि की पीड़ाओं पर प्रयुक्त होता है। यह विश्वसनीय पीड़ा शामक औषधि है।

विधि, मार्ग—आवश्यकतानुसार १।२ सी. सी. से १ सी. सी. तक (५० मिलिग्राम से १०० मिलिग्राम तक) मांसान्तर्गत से दें, यदि एक बार के प्रयोग से लाभ न हो तो दूसरा इंजेक्शन भी लगा सकते हैं।

नेप्टाल (Neptal)

यह पारद का योग है और इसका प्रभाव सेलाइर्गिन की तरह होता है जब जलोदर, शोथ, सर्वांग शोथ, विशेषकर ऐसी शोथ जो हृदय के विकार से हो यह अधिक लाभ करता है। वैसे वृक्क एवं यकृत जन्य शोथ में यह उतनी ही उपकारी है। इन्जेक्शन लगाने के २ घण्टे बाद से ही इसकी क्रिया आरम्भ हो जाती है और मूत्र अत्यधिक परिमाण में आने लगता है। यदि इसके साथ नौशादर का प्रयोग भी मुख द्वारा कर दिया जाय तो अधिक तीव्र गति से इसकी क्रिया होने लगती है। फुफ्फुसावरण मध्य सचित तरल भी इसके प्रयोग से कम होजाता है।

विधि मात्रा—इसकी १ से २ सी. सी. तक की मात्रा है जिसमें लगभग १।२ ग्रेन पारद होता है, विशेषकर मांसान्तर्गत विधि से ही लगाया जाता है, आवश्यकता पड़ने पर शिरागत भी देसकते हैं। हमेशा इसको पहिले १।२ सी. सी. की मात्रा में लगाकर रोगी की सहन-शक्ति का परिचय लेलेना चाहिए फिर इसके बाद १-२ सी. सी. सप्ताह में १ या दो बार आवश्यकता के अनुसार लगाना चाहिये।

नोवोस्टैब (Novostab)

गुण—यह बूटस कम्पनी का बना योग है, और उपदंश. फिरंग तथा उसके उपद्रवों में प्रचलित है, जहां जहां मल्ल या विस्मथ का प्रयोग करना हो वहां २ इसे देना चाहिए। उपदंश के अतिरिक्त यह पुनरावर्तकज्वर, चर्मरोगों आदि पर भी प्रयुक्त होता है।

मात्रा, विधि—इसके शुष्क चूर्ण के एम्पुल आते हैं जिनमें .१५, .३०, .४५, .६०, .७०, .९० ग्राम औषधि होती है, इसे द्विवार परिस्रुत जल में घोल कर शिराद्वारा प्रयोग करना चाहिए, इसकी विधि भी पीछे ,वर्णित एन.ए.बी. की तरह है, सप्ताह में १ बार प्रयाग करें।

सायोलान तथा सायोलान-कम आयोडीन
(Siolan Siolan-c-Iodine)

यह पीछे वर्णित लेक्टुमिन अथवा दुग्ध के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्जेक्शन के समान गुणकारी है। जहां-जहां पर दूध के साथ आयोडीन का भी प्रयोग करना अभीष्ट हो वहां वहां इसको आयोड न मिला योग देना चाहिए। सप्ताह में २-३ बार मांसान्तर्गत विधि से नितम्ब के गहरे मांसभाग में देना चाहिए।

सल्फा टेब (sulphostab)

गुण—यह बूट्स कम्पनी का बनाया हुआ योग है और उपदंश, फिरंग इनके विकार, पुनरावर्तक ज्वर, सुजाक के विकार एवं अन्य ऐसे ही रोगों के उपद्रवों में सफलता के साथ प्रयुक्त होता है।

मात्रा विधि—इसके एम्पुल चूर्ण रूप में आते हैं, इनमें ०.३०; ०.३८; ०.४५; ०.६० ग्राम औषधि भरी होती है, जिसे काट कर १ या २ सी. सी. द्विगार परिस्रुत जल में घोल कर अधस्त्वगीय, मांसान्तर्गत विधि से इन्जेक्शन देते हैं। इसका प्रयोग सप्ताह में १ बार निम्न विधि से करते हैं।

यदि ३ मास की आयु हो तो ०.००५ से ०.०७५ ग्राम; ३ मास से १२ मास की आयु में ०.०७५ से ०.१५ ग्राम तक; १ वर्ष से ३ वर्ष तक ०.१५ से ०.२० ग्राम तक, एवं युवा पुरुष को ०.२० से ०.६० ग्राम तक परिस्रुत जल में घोल कर चर्म के नीचे या मांसान्तर्गत लगाना चाहिए।

थियोस्टेब (Thiostab)

गुण-यह पीछे वर्णित Sod. thiosulphate के योग का नाम है जो बूट्स कम्पनी ने रखा है। इसका प्रयोग मल्ल (संखिया) विस्मथ, पारद इत्यादि विषैली औषधियों के उपद्रव एवं कुप्रभावों को नष्ट करने के लिए किया जाता है।

मात्रा विधि १० प्रतिशत शक्ति के घोल का मांसान्तर्गत या शिरा द्वारा प्रयोग प्रत्येक तीसरे दिन किया जाता है। कई प्रकार की मात्रा के एम्पुल आते हैं. जिनमें .३; ०.४५; .६; .७५, .९०; मिलीग्राम औषधि का १० प्रतिशत शक्ति का घोल होता है। अवस्था, रोग और दशा के अनुसार प्रयोग करना चाहिए।

थाईसिन (Thisin)

गुण—यह थाईसिस की खांसी की अत्यन्त उपकारी औषधि है, और १ सी. सी. के बंद एम्पुल में आती है। यह क्षय कास के अतिरिक्त प्रत्येक प्रकार की खांसी, कण्ठ रोग, श्वास नलिका के उपद्रवों की रामबाण औषधि है।

प्रयोग मात्रा—बच्चों को इसकी १ सी. सी. की मात्रा सप्ताह में दो-एक बार तथा युवा के लिए १ सी. सी. प्रति दिन मांसपेशी द्वारा लगाना चाहिए।

टिनौक्भाईल (Tinnoxyl)

गुण टीन के योग द्वारा बनी यह औषधि रक्त विकार जनित चर्म रोगों के लिए विशेषकर उपकारी है इसके प्रयोग से प्रत्येक प्रकार के फुंसी फोड़े, खाज पामा, त्वग्रोग, विचर्चिका को लाभ होता है।

मात्रा प्रयोग--प्रतिदिन अथवा प्रति तीसरे दिन इसको १-२ सी. सी. अवस्था, रोग एवं दशा के अनुसार प्रयोग करना चाहिए।

योहम्बीन हाईड्रोक्लोराईड (Yohimbine Hydrochloride)

गुण-योहम्बीन के लवण द्वारा निर्मित यह योग विशेषकर जननेन्द्रिय के रोगों विशेषकर नपुंसकता क्लैव्य एवं दुर्बलता में विशेषकर प्रयुक्त होती है, जिन व्यक्तिओं के अंगों में थोड़ा विकार है तथा दुर्बलता के कारण कामेच्छा नष्ट होगई हो उनके लिए विशेष रूप से लाभ देता है। इसके अतिरिक्त दुर्बलता में यह गुणकारी है।

विधि-मात्रा-१।३ ग्रेन प्रति सी. सी. के एम्पुल को सप्ताह में १-२ बार अधस्त्वगीय विधि से दें।

फाईब्रीनोप्रोटीन (Fibrino-protein)

गुण-यह रक्त की प्रोटीन को विश्लेषण करके बनाया जाता है और जहां-जहां 'नान प्रोटीन स्पेसिफिकथिरेपी' जैसे दूध के इन्जेक्शन आदि को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यवहार करते हैं) की आवश्यकता हो तो वहां प्रयोग करते हैं।

मात्रा—१/२ सी. सी. तक अधस्त्वगीय या मासांतर्गत विधि से प्रति दिन अथवा प्रति तीसरे दिन दिया जाता है।

हीमोप्रोटीन (Haemo-protein)

यह भी फाईब्रीनो-प्रोटीन की तरह गुणकारी है, यह ब्रुक्स एवं पी० डी० कम्पनी के भी योग हैं। विधि और मात्रा भी फाईब्रो प्रोटीन की तरह हैं।

लेरास्टोडीन (रोचि) Larostodin (Roche)

गुण--यह हिस्टजीन मोनोहाईड्रो क्लोराईड के ही द्रव्य का योग है और अधिकतर आजकल आमाशय व्रण, ग्रहणी व्रण, आंत्र व्रण, आमाशय शोथ, इत्यादि से उत्पन्न आमाशय के अन्य लक्षणों में व्यवहृत होता है।

प्रयोग मात्रा--एक एम्पुल प्रतिदिन अधस्त्वगीय या मांसान्तर्गत विधि से प्रायः तीन सप्ताह तक लगाना चाहिए बहुत कुछ लाभ हो जाता है।

हाईपर बिस्मथ (Hyper Bismuth)

गुण—यह २० प्रतिशत शक्ति का शुद्ध बिस्मथ चूर्ण का उपयुक्त माध्यम में प्रसार Suspension है। जो कि अन्य बिस्मथ के योगों की तरह उपदंश, उपदंश के विकारों तथा अवस्थाओं में प्रयुक्त होती है।

मात्रा विधि-१।२ सी. सी. से १ सी. सी. तक ४ दिन से ७ दिन के अन्तर से मांसान्तर्गत विधि से प्रयोग करें।

हाइपोलायड बिस्मथ (Hypoloid Bismuth)

उपरोक्त हाईपर बिस्मथ का ही दूसरा रूप है जो (B. W.) कम्पनी द्वारा बनाया गया है। मात्रा और प्रयोग उपरोक्त की तरह है।

बिस्मो क्रीम (B. I.) (Bismo-Cream)

यह बिस्मथ के १५%. शक्ति में क्रिओ केम्फर में मिला हुआ योग है जो कि उपदंश और उसके अन्य उपद्रवों की शक्ति तथा उपदंश की प्रत्येक अवस्था में व्यवहृत होता है।

मार्ग मात्रा—नितम्ब गहरे मांस में इसको १।२ सी. सी. से १ सी. सी. तक प्रति तीसरे दिन मांसान्तर्गत विधि से देना चाहिए, इस प्रकार १०-१५ इन्जेक्शनों का एक कोर्स होता है।

केस-बिस (CasBis)

ऊपर वर्णित बिस्मोक्रीम के समान यह भी है, गुण, मात्रा, प्रयोग भी उपरोक्त के समान हैं।

स्टिप्टिसिन (Stipticin)

गुण यह बेंगाल इम्यूनिटी के स्टिप्सिस के समान गुणकारी है जिसका वर्णन पीछे आचुका है। यह भी कोटार्नीन हाईड्रो० का योग है, तथा गर्भाशय सम्बन्धी प्रत्येक प्रकार के बढ़े हुए रक्त स्राव, अतिरजः, अत्यार्तव इत्यादि को रोकने में बेमिसाल है।

मात्रा विधि-प्रत्येक बार में १ सी.सी. की मात्रा अधस्त्वगीय विधि से दें।

सलफोनामाइड के अन्य घुलित योग (Sulphonamide)

१-यूलेरांन, २-प्रोन्टासिल
३ सोलूसेप्टासीन, ४-स्ट्रेप्टोसाईड सोलूशन

गुण मात्रा विधि—पीछे वर्णित सल्फा श्रेणी की औषधियों के समान गुणकारी है, लगभग ५ सी.सी. की मात्रा में प्रत्येक ४-६ घण्टों पर अधस्त्वगीय, मांसान्तर्गत एवं अत्यन्त आवश्यकता पड़ने पर शिरामार्ग द्वारा भी प्रयुक्त कर सकते हैं। परन्तु शिरा द्वारा प्रयोग करने में अधिक सावधानी की आवश्यकता है। बच्चों को अवस्थानुसार न्यून मात्रा में दें।

साईलोट्रापिन (Cylotropin)

गुण—यह योग और पीछे वर्णित केसीलोभिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रायः एक से ही हैं, और यह कैफीन सोडा सेली-सिलास और हेक्सामीन का मिश्रण है। इसका विशेष प्रभाव यकृत की पित्ताश्मरीजन्य पित्ताशय शोथ, पित्तप्रगाढ़ता, पित्तमार्गावरोध, वहां पूय पड़ जाना, वृक्क पाक Pyelonephritis, वृक्क शोथ Cystitis, आमवात, वात-ज्वर, मूत्र मार्ग का संक्रमण इत्यादि रोगों में अत्यन्त गुणकारी है।

मार्ग मात्रा- शिरा मार्ग द्वारा प्रायः ५ सी. सी. की मात्रा तक तीसरे दिन लगाना चाहिए जब तक कि मूत्र स्वच्छ न होजाए और प्रतिक्रिया में अम्ल न हो जाय।

ट्रान्सपुलमीन [होम वर्ग]

Transpulmin (Homburg)

गुण-यह कुनीन, कपूर इत्यादि का योग है और निमोनिया, श्वास, कास, फुफ्फुस के प्रत्येक विकार, काली खांसी,इन्फ्लुएञ्जा युक्त निमोनिया तथा अन्य छाती व फेफड़ों के रोगों में व्यवहार करते हैं।

मात्रा मार्ग-प्रतिदिन १-२ सी. सी. तक मांसा-न्तर्गत विधि से रोग व रोगी की अवस्थानुसार दें।

केज़ीनोसोल (Caseinosol)

गुण-यह विशेष रूप से केज़ीन को शुद्ध करके बनाया गया है और जहां दूध के इंजेक्शनों द्वारा अथवा अन्य विधि से नोन-स्पेसिफिक प्रोटीन थीरापी का व्यवहार होता है वहां यह सफलतापूर्वक प्रसवोपरांत ज्वर, एक्ज़ीमा, फोड़े फुंसी, कार्बन्कल विद्रधि, गर्भाशय बंधन शोथ, वस्ति-प्रदेश में शोथ, संधिशोथ (चाहे वह सुजाक जन्य हो चाहे आम-वातज) में अवश्य लाभ करता है।

मार्ग मात्रा-गहरे मांसभाग में क्रमशः बढ़ाते हुए प्रति ३-५ दिन के अन्तर से १ सी. सी. से ७-८ सी.सी. तक प्रयोग करें।

केजियोसान (caseosan)

यह भी उपरोक्त योग का दूसरा नाम विदेशीय निर्माणशाला द्वारा रखा गया है। गुण, मात्रा और विधि उपरोक्त के समान है।

डिकोलिन (Decholin)

गुण-पीछे वर्णित डी-हाईड्रोकोलिन के समान गुणकारी है और यकृत पित्ताशय में विकार उत्पन्न होने पर प्रयोग की जाती है। यकृत शोथ, पित्ताशय शोथ, रक्त में पित्त की अधिक उपस्थिति तथा यकृत एवं पित्ताशय की तीव्र शोथ में और शोथजन्य कामला में विशेष गुणकारी है।

मात्रा मार्ग-अवस्थानुसार इसका ५-१० और २० प्रतिशत शक्ति के विलियन का प्रयोग क्रमशः १०,१० और ५ सी. सी. की मात्रा में रोग रोगी की अवस्थानुसार होता है।

क्वीनोफार्म (Quinoform)

गुण-यह कुनीन का ऐसा योग है जिसमें कुनीन के साथ अन्य औषधियां जैसे लोह, मल्ल इत्यादि को मिलाया गया है और प्रायः जीर्ण मलेरिया, मलेरिया विषमज्वर, जीर्ण विषमज्वर, हल्का रहने वाला ज्वर तथा रक्त हीनता आदि को दूर करता है।

मात्रा मार्ग-इसको आहिस्ता-आहिस्ता नितम्ब या कन्धे की मांसपेशी में प्रति दो दिन के अन्तर या और अधिक अंतर से आवश्यकतानुसार १।२ या २ सी.सी. तक प्रयोग करना चाहिए।

आइडोकेल्सिन

(Iodocalcin)

गुण—इसमें प्रति सी.सी. विलियन में ०.३३ ग्रेन शुद्ध आयोडीन, ०.७५ ग्रेन चूना Calcium ग्लूकानिक एसिड के माध्यम Base पर मिला हुआ होता है। इसका मुख्य प्रयोग निमोनियां, प्लूरिसी उरस्तोय, क्षयज ग्रन्थियां, खाज एक्ज़ीमा, पूयोत्पादक जीवाणु जन्य संक्रमण, ग्रन्थियों का शोथ, अण्डकोष, ग्रन्थि शोथ, आमवातज संधि शोथ, इत्यादि में व्यव-हार होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्ग मात्रा—प्रति दूसरे दिन मांसान्तर्गत विधि से आवश्यकतानुसार १ सी.सी. से ५ सी.सी. तक क्रमशः बढ़ाते हुए लगाइये।

आईडो लेक्टो प्रोटीन
(Iodo Lacto-Protein)

गुण-जहां आयोडीन और नान. स्पे. प्रो. Non-Sp. Pro. Therapy का व्यवहार होता है तथा प्रमेह? रांत विषमयता, संक्रमित ज्वर, संक्रमित संधि-प्रदाह Infective Arthritis इत्यादि में इसे प्रयोग करते हैं।

मात्रा मार्ग—सप्ताह में एक या दो बार मांसान्तर्गत विधि से प्रयोग करें; मात्रा १ से ५ सी.सी. तक।

आयडो प्रोटीन Ido Protein, (Boots)

आयोडोकेसीन (मल्फोर्ड)(Iod. Casein) साजोडीन (Sajodin) ये सब उपरोक्त वर्णित आयडोलेक्टोप्रोटीन के समान गुणकारी हैं और उसी प्रकार प्रयुक्त होते हैं। ये सब प्रायः एक ही वस्तुएं हैं परन्तु भिन्न-भिन्न निर्माणशालाओं द्वारा निर्मित और नाम से प्रचलित हैं।

लेक्टो प्रोटीन (Lacto-Protein)

दूध की प्रोटीन का योग है जो जीवाणु और वसा से रहित है। यह भी उपरोक्त की तरह उन्हीं रोगों में व्यवहृत होता है विशेषकर जीर्ण संक्रमित रोगों में सधिप्रदाह, त्वग्रोग प्रसूति विषयक रोगों में घृणित रोग Veneral diseases जिनका सम्बन्ध जननेन्द्रिय से है, सुजाक इत्यादि, नेत्रामय, दन्तरोग इत्यादि में यह प्रयुक्त होता है।

इसीके समान गुणकारी और लगभग यही औषधि निम्न हैं—

एओलान (Aolan), एबीजान (Abijon), सायोलान (Siolan), लेक्टुमिन (Lactumin)

मात्रा मार्ग—क्रमशः १ सी.सी. तक मांसान्तर्गत विधि से नितम्ब मांस में इन्जेक्शन लगावें। इन्जेक्शन प्रति ३-५ दिनों के उपरान्त लगावें।

आर्सीक्विन (Arsequin, c. d. c.)

गुण-यह कुनीन व मल्ल का योग है। जिसमें प्रति २ सी. सी. विलियन में लगभग ५ ग्रेन कुनीन और ३।४ ग्रेन मल्ल का योग होता है। और यह पीछे वर्णित कुनीन आर्सेनिक कम्पाऊंड की तरह उन हठीले मलेरिया के ज्वरों में प्रयुक्त होता है जहां कुनीन का प्रयोग निष्फल हो गया हो।

मात्रा मार्ग-सदैव १।२ से २ सी. सी. की मात्रा में नितम्ब के गहरे मांस में प्रति तीसरे चौथे दिन लगाने चाहिए।

क्वीडो विस्मथ (Quido Bismuth)

यह १० प्रतिशत की शक्ति में डबल आयोडाईड आफ विस्मथ तथा कुनीन का विलियन है, और उपदंश रोग में तथा उसकी प्रत्येक अवस्थाओं में प्रयुक्त होता है। इसी के समान गुणकारी और इसी द्रव्य द्वारा निर्मित, परन्तु विभिन्न नामों से मिलने वाले निम्न योग भी हैं जिनको इसके स्थान पर प्रयोग किया जा सकता है।

(१) क्वीनोस्टेब Quinostab (Boots)
(२) क्विनीबी Quiniby
(३) बिसक्वीनोल Bisquinol (c. d. c.)
(४) रूबाईल Rubyl

मात्रा—इसकी पूर्ण युवक के लिए ३ सी. सी. की १२ मात्रायें नितम्ब प्रदेश में मांसान्तर्गत विधि से देनी चाहिए और प्रति ५ वें दिन के अन्तर से दें। और एक सप्ताह का विश्राम लेने के बाद दूसरा कोर्स भी आरम्भ कर सकते हैं।

बच्चों के लिए उनकी आयु के अनुसार प्रयोग करना चाहिए।

प्रोटोलान
Protolan (standard)

यह दूध का इन्जेक्शन है और पीछे वर्णित इसी प्रकार के अन्य इन्जेक्शनों की तरह प्रयुक्त होता है तथा वही गुण इसके अन्दर हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्विनोमेटीनको०

Quinometin co (standard)

इसके प्रत्येक २ सी. सी. विलियन में क्विनीन बाईहाईड्रोक्लोराईड ५ ग्रेन और इमेटीन हाईड्रोक्लोराईड १।२ ग्रेन होता है। इसका प्रयोग सदैव अमीबा जन्य विकारों तथा तज्जन्य यकृत विद्रधि आमाशय विकार मूत्र प्रणाली के विकार रक्तातिसार में भी जब आंतों में विषमज्वर के जीवाणु अपना प्रभाव जमाए हुये हों प्रयुक्त किया जाता है।

मात्रा--मांसान्तर्गत विधि से १ सी. सी. से २ सी. सी. तक प्रति दूसरे तीसरे दिन व्यवहार करें।

पिलोकार्पिन हाईड्रोक्लोराईड

(Pilocarpine Hydrochloride)

यह अत्यधिक स्वेद-कारक है, इसके एक बार के इन्जेक्शन से प्रथम चहरे पर सुर्खी उत्पन्न होकर पसीना आना आरम्भ हो जाता है और इतना पसीना आसकता है कि तमाम कपड़े भीग जांए, इसी प्रकार यह जब रक्त में मूत्र-विषमयता हो जाये और उसके कारण आक्षेप होने लगें, और वृक्क रोग में जब मूत्र कम आता है, इसके प्रयोग से वह काम स्वेद के अत्यधिक आने से हो जाता है। पसीना आकर वृक्कों को आराम मिल जाता है। यदि शोथ हो और कहीं जलाति वृद्धि हो तो वह भी कम होजाती है। हृदय जन्य शोथ में इसको अत्यधिक सावधानी से व्यवहार करना चाहिए क्योंकि इसके प्रयोग से एक प्रकार से जी डूबना, दुर्बलता, कमजोरी सी अत्यधिक अनुभव होने लगती है। अतः सावधानी से प्रयोग करना चाहिये। इसके स्थान पर पिलोकार्पीननाईट्रेट—

पिलोकार्पीन नाईट्रेट

(Pilocarpinenitrate)

भी प्रयुक्त होता है। इसकी मात्रा अधस्त्वगीय विधि से १।६ ग्रेन तक है। कभी-कभी इसकी १।४ ग्रेन की मात्रा से ही संकट पूर्ण स्थिति उत्पन्न हो जाती है और तभी तुरन्त एट्रापीन का प्रयोग कर देना चाहिए। सभी लक्षण तुरन्त ५-१० मिनट के अन्दर शान्त हो जांयगे। इसका प्रयोग वृक्क की उन अवस्थाओं में वर्जित है जहां फुफ्फुस की दशा शोथयुक्त होती है। क्योंकि फेफड़े की तकलीफ बलगम के अधिक बढ़ जाने से और भी बढ़ सकती हैं।

यह बेलाडोना के विष पर भी प्रयुक्त होता है। इसके प्रयोग से थूक इतना अधिक आता है कि कभी-कभी सेरों के परिमाण में निकल जाता है।

मात्रा मार्ग—सदैव अधस्त्वगीय विधि से १।१२ ग्रेन (०. ००५ ग्राम) प्रयुक्त होता है। क्योंकि यह गर्भाशय को मांसपेशियों को संकुचित करता है, अतः गर्भवती स्त्रियों को सावधानी से प्रयुक्त करावें।

सावधानी—यदि इसके प्रयोग से अनिष्ट लक्षण पैदा होने लगे तो तुरन्त ही एट्रोपीन का प्रयोग करके लक्षणों की निवृति कर देनी चाहिये। (वर्णन पीछे भी आ चुका है)।

एज्मोफोर

(Asthmophore, stanbard)

इसकी प्रत्येक १ सी. सी. में एड्रिनलिन क्लोराईड (१००० में १) १।२ सी. सी. तथा पोस्ट पिट्यूट्री एक्सट्रेक्ट (५ यूनिट) १।२ सी. सी. होता है, यह श्वास, रक्तस्राव, गर्भाशय के रक्तस्राव को रोकने के काम आता है। शीत पित्त इत्यादि में भी प्रयुक्त होता है।

मार्ग मात्रा—मांसान्तर्गत या अधस्त्वगीय विधि से १ सी. सी. प्रति बार दें।

सेलाईन इन्जेक्शन लवणोदक इन्जेक्शन

(Saline Injection)

हमने पीछे के अध्यायों में जगह-जगह लवणोदक Saline Lotion का जिक्र किया है, तथा इसके विषय में चर्चा भी पर्याप्त करदी है अतः यहां उसका स्पष्टीकरण किया जाता है।

लवण शरीर के प्रत्येक तन्तु में होता है और इसकी उपस्थिति रक्त के सीरम में विशेषकर रहती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः स्पष्ट है कि जहां कहीं भी शरीर से रक्तस्राव, भयङ्कर अतिसार, विशूचिका इत्यादि द्वारा जब रक्त के जलीयांश का नाश हो जाता है, तो उसका यही अर्थ लगाया जाता है कि रक्त का लवण मिश्रित जलीयांश विशेष रूप से कम हो गया है, अतः यही उपाय सामने रह जाता है कि किसी प्रकार उस लवण जल की पूर्ति शीघ्र की जाय, क्योंकि इस लवणोदक का क्षय, कुछ ऐसे अनिष्ट और भयङ्कर उपद्रवों को जन्म दे देते हैं, जिनकी यदि शीघ्र ही चिकित्सा न की जाय तो जीवन की आशा कम रह जाती है, फिर, यह भी देखा गया है कि किसी उपाय से जब इसकी पूर्ति होजाती है. तो शरीर सचेत होता चला आता है, लुप्त नाड़ी पुनः बलिष्ट रूप से स्पन्दन करने लगती है, और रोगी का गिरा हुआ रक्तचाप फिर बढ़ जाता है। जिन अवस्थाओं में इसको प्रयोग करना चाहिए वे दशायें निम्न हैं—

(१) हैजे में जब शरीर गिर रहा हो, नाड़ी लुप्त होरही हो, वमन और अतिसार भयङ्कर रूप धारण कर बारम्बार शरीर का तरल एवं लवण भाग को प्रचुर मात्रा में निकाल रहे हों।

(२) उपरोक्त अथवा अन्य कारणों से जब मूत्रावरोध (suppression of urine) की अवस्था उत्पन्न होगई हो।

(३) रक्त में विविध प्रकार की विषमयता उपस्थित हो गई हो।

(४) शरीर से अत्यधिक रक्तस्राव, जैसे गर्भस्राव हाथ पांव के कट जाने, चोट लगने के पश्चात् हुए रक्तस्राव के रक्तक्षय होने पर।

(५) शल्यकर्म (surgical operation) के बाद लगने वाली प्यास को शान्त करने के लिए।

(६) मद्य, एवं कार्बोलिक एसिड, अन्य तेजाब, गैस विष (Gas-poisoning) जनित उपद्रवों और विकारों की शान्ति के लिए।

यह चिकित्सक की बुद्धि के ऊपर निर्भर है और उसकी कल्पना के आधार पर वह लवणोदक प्रयोग करने के अवसर को नहीं चूकता। इतना उपकारी और सुलभ योग होते हुए भी कुछ ऐसी अवस्थायें हैं जहां इसका प्रयोग वर्जित और निषिद्ध है। जैसे—

(१) जीर्ण शोथ (Chronic dropsy) तथा फुफ्फुसीय शोथ (Pulmonary oedema) की उपस्थिति में इसके प्रयोग से ये दशायें और बढ़ जाती हैं।

(२) जब हृदय शक्तिहीन होकर शिथिल पड़ जाता है तो प्रविष्ट किया गया लवणोदक बहुत ही शिथिलता से समस्त शरीर में गति करता है, शेष अधिकांश फेफड़ों के स्थान पर संचित होकर वहां उपद्रव उत्पन्न करता है।

सेलाईन का निर्माण—

सेलाईन या लवणोदक औषधालय में भी बनाया जा सकता है, और इसकी कई प्रकार की टिकियां भी आती हैं, जिनको केवल गरम परिस्रुत जल में घोल देने मात्र से ही प्रयोग योग्य लवणोदक बन जाता है। जो औषधालय में बनाया जा सकता है वे प्रायः निम्न प्रकार के और निम्न विधि से बनते हैं।

स्वाभाविक अथवा समबल लवणोदक
(Normal Saline)

(१) सोडियम क्लोराईड (लवण)	६ ग्राम
पोटाश्यम क्लोराईड	४२ ग्राम
केलिशयम क्लोराईड	४८ ग्राम
सोडाबाई कार्ब	५ ग्राम
परिस्रुत जल	१००० सी. सी.
(२) सोडियम क्लोराइड	६ ग्राम
केलिशयम क्लोराईड	४८ ग्राम
पोटाश्यम क्लोराईड	४२ ग्राम
सोडाबाई कार्ब	५ ग्राम
ग्लूकोज	१ ग्राम
परिस्रुत जल	१००० सी.सी.

इनके अतिरिक्त जब अधिक रक्तस्राव हो जाने पर दशा चिन्ताजनक होजाती है, तब एक विशेष विधि से बना हुआ लवणोदक जिसे Gum-saline गोंद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युक्त लवणोदक कहते हैं प्रयोग किया जाता है वह डाक्टर बेलिस महोदय ने गत महायुद्ध में जख्मी जवानों के शरीर में प्रविष्ट करके अत्यन्त उपकार किया था विधि—

सोडियम क्लोराइड	२ ग्राम
कैल्शियम क्लोराइड	·०५ ग्राम
पोटाशियम क्लोराइड	·०५ ग्राम
बबूल का गोंद	०·४ ग्राम
परिस्रुत जल	१०० सी. सी.

नार्मल सेलाईन समबल या स्वाभाविक लवणोदक को ही फीजियोलोजिकल सेलाईन सोलूशन कहते हैं। और यह ०·६%. लवण की शक्ति का बनाया जाता है, और प्रायः २० औंस (१ पाईन्ट) शुद्ध परिस्रुत जल में घोलकर बनाया जाता है, और बन जाने के २४ घण्टे के अन्दर-अन्दर इसको प्रयोग कर लेना चाहिए।

और, यह जो गोंद-युक्त योग है इसमें भी ०·६%. प्रतिशत लवण और ६%. प्रतिशत गोंद रखने का सिद्धान्त रखा गया है। इस प्रकार गोंद मिलाने का सिद्धांत जो है उसका लाभ केवल यही माना जाता है कि गोंद और जिलेटीन इसीलिए लवणोदक में मिलाए जाते हैं कि उनसे रक्त-चाप Blood Pressure अधिक काल तक बना रहता है। परन्तु इस प्रकार का गोंद मिला हुआ अत्यन्त सावधानी से बरतने की जरूरत है क्योंकि संकटपूर्ण और घातक परिणामों का मुंह, गोंद मिलाकर लवणोदक देने के उपरांत देखना पड़ा है। उसका कारण गलत तरीके से लवणोदक देना और गोंद की प्रतिक्रिया शरीर को असात्म्य होना, तथा रक्त का चारोद संतुलन Colloidal Equilibrium बदल जाता है, जिससे रक्त कणों में ग्रंथियां सी हो जाती हैं, कुछ ऐसा माना जाता है। जो भी हो यह गोंद की विधि खतरे से खाली नहीं।

लवणोदक को इसीलिए समझने के लिए विशेष विवेचन की आवश्यकता है जिसको जाने बिना लवणोदक का प्रयोग विशेष महत्व नहीं रखता।

अस्तु, लवणोदक ३ प्रकार का साधारणतया माना गया है। १-'आईसोटानिक या समबल,' (२) हाईपर टानिक या अतिबल, (३) "हाईपोटानिक या हीनबल" शरीर में प्रायः सभी श्लेष्मिककलाए-तन्तुओं, रक्त नलिकाओं के तन्तु, वृक्क की मूत्र कोशकाएं इत्यादि कुछ ऐसी रचना और शक्ति युक्त हैं कि यह अपने में से किसी विलियन को कुछ-कुछ छन जाने देती हैं (semipermeable), अर्थात् यों समझ लें कि जिंदा झिल्ली में से घोलने वाला द्रव तो छन जाएगा परन्तु जो वस्तु घुली हुई है वह या तो बिल्कुल ही नहीं छनेगी या फिर बहुत ही कम मात्रा में छन सकेगी। यदि ऐसी झिल्ली को बीच में खड़ी करके इसके दोनों ओर एक सी शक्ति के घोल रख दिए जाएं तो इन दोनों विलयनों का द्रव्यात्मक चाप Osmotic Pressure समान रहेगा। और तब दोनों घोल (विलियन) परस्पर में समबल या आईसोटानिक कहलाएंगे और तब उस झिल्ली में को दोनों ओर के द्रव्यों की अदला-बदली नहीं होगी। यदि ऐसे लवणोदक जिसकी लवण की प्रतिशत शक्ति रक्त की लवण प्रतिशत शक्ति के समान है, तो उसको समबल लवणोदक कहा जायगा।

यदि इन दोनों (रक्त तथा लवणोदक विलियन) में से किसी का लवण प्रतिशत मात्रा अधिक है तो वह हाइपर टानिक अतिबल कहलाएगा और दोनों के द्रव्यों और द्रवों का आदान-प्रदान (अर्थात् छनना) आरम्भ हो जाता है। तब हीनबल Hypotonic में से जलीयांश खिंच कर अतिबल वाले में जाने लगता है। और यह भी होता है कि अतिबल वाले घोल का लवण थोड़ी सी मात्रा में न्यून बल वाले की ओर आता है। और यह कोशिश होती रहती है कि दोनों समबल कभी न कभी होजाएं।

इसीलिए जब भी लवणोदक का प्रयोग किया जाय यह देख लेना चाहिए कि रोगी को आईसो-समबल, अति-हाईपर, या न्यून हाईपो-टानिक की जरूरत है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि अगर हाईपोटानिक का प्रयोग किया जाता है तो वह शीघ्र ही शरीर के तन्तुओं में जहां लवण अधिक जल थोड़ा है, जलीयांश में शीघ्र खिच जायगा, तथा यदि वहहाई पर टानिक है तो तन्तुओं में से जलीयांश खींचकर रक्त में आजाएगा और रक्त की वृद्धि हो जाएगी, और–

अगर वह समबल है तो कोई विशेष उल्लेखनीय परिवर्तन सिवाय इसके कि रक्त की मात्रा ही बढ़ जाए, कुछ तन्तुओं से रक्त में आदान-प्रदान नहीं होने पाता। अतः यह इसलिए अति-आवश्यक होता है कि पहले, यदि सम्भव हो तो रोगी के रक्त की अपेक्षाकृत भार specific Gravity की परीक्षा कर लेनी चाहिए। तभी इच्छितफल लवणोदक प्रयोग से प्राप्त होने की आशा होती है।

जब नाप तौल के साधन न हों और लवणोदक का प्रयोग करना हो तो उस समय लगभग ८० ग्रेन साधारण खाने का नमक लेकर एक पाईन्ट जल में मिलाकर साधारण लवणोदक Normal saline जो रक्त के साथ समबल होता है बनाया जा सकता है, इसको शिरा मार्ग द्वारा, गुदा मार्ग द्वारा और ढीले अधस्त्वचीय तन्तुओं में जैसे बगल और छाती के नीचे के भाग में सफलता से दिया जा सकता है। इसका प्रयोग आघात Shock, अवसाद Collapse जो कि रक्तस्राव, भयंकर अतिसार इत्यादि से होता है, शरीर से जो जलीयांश निकल गया है पूरा करने के लिए देते हैं। तथा कुछ विषमयता और प्रसवोपरांत विषमयता मस्तिष्कगत शोथ तथा अत्यंत दुर्बलता में इसका प्रयोग करते हैं।

अधिक मात्रा में प्रयोग कर देने से हृदय का प्रसार होकर मृत्यु तक होसकती है। अतः मस्तिष्कगत विकारों, शोथ, चोटों में यह २० सी. सी. की मात्रा में २०-३०% के घोल को शिरान्तर्गत इंजेक्शन द्वारा देते हैं।

विषमयता Toxaemia में यह विष को घोलकर पतला कर देता है, यद्यपि यह विष को बाहर नहीं निकालता है।

साधारणतया एक चम्मच लवण को एक पाईन्ट साधारण उबले जल में मिलाकर देने की भी व्यवस्था है, क्योंकि साधारण जल में कुछ भाग चूने Calcium का तो होता ही है। यदि परिस्रुत जल में बनाकर फिर शिरा द्वारा इन्जेक्शन दिया जाए तो शुद्ध लवण विषैला प्रभाव उत्पन्न करके घातक सिद्ध हो सकता है। इसी से ०.५% सोडाबाई कार्ब भी मिला देने से वह अम्लत्व Acidosis का विनाश करके रक्त से समबल रहता है।

यदि शरीर में से रक्त या जलीयांश नहीं निकला है तो लवणोदक देने से शोथ उत्पन्न हो जाएगा, कालरा (विशूचिका) Cholera में हाईपर टॉनिक का प्रयोग इसी लिये किया जाता है कि रक्त में अन्य अङ्गों से भी जलीयांश खिंचना आरम्भ हो जाय इसकी साधारण विधि यह है कि

सोडियम क्लोराईड	१२० ग्रेन
पोटाशियम क्लोराइड	६ ग्रेन
केल्शियम क्लोराईड	४ ग्रेन
जल	१ पाईन्ट (२० औंस)

इसमें—

सोडाबाई कार्ब	४० ग्रेन
ग्लूकोज	१४ ग्रेन

मिला लेते हैं। इससे सोडाबाई कार्ब के होने से रक्त की अम्लता का नाश होता है और यदि दशा अधिक शोचनीय और आघात गहरा है तो इसी त्रिलियन में थोड़ी मात्रा में एड्रानेलिन मिला देने से रक्तचाप Blood pressure स्थिर रहता है। यह भी शिरा द्वारा, गुदा द्वारा और अधस्त्वगीय ढीले तन्तुओं में दिया जाता है (जैसे कि भयंकर अतिसार में)

"लवणोदक को किसी भी प्रकार की शोथ युक्त दशा में और विशेषकर फुफ्फुसीय शोथ में कभी भी नहीं देना चाहिये"

उपरोक्त अतिबल लवणोदक को ३ पाइण्ट तक दिया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयोग विधि—

१–शिरामार्ग द्वारा Intravenously

२–अधस्त्वगीय Subcutaneously

३–उदरगह्वरान्तक Intraperitonially,

४–गुदाद्वारा Rectally—

१–शिरान्तर्गत–यह दो प्रकारसे किया जाता है। बन्द closed method तथा खुली विधि open method द्वारा। बन्द विधि से तो यही है कि य दि शिरा उभरी हुई हो तब तो साधारण शिरान्तर्गत विधि से शिरा में सुई प्रविष्ट करके बड़ी आसानी से किया जाता है, परन्तु जब विशूचिका जैसे रोग में जब रक्त का जलीयांश अधिक निकल जाता है और शिरा उभरती नहीं है, यहां त ककि वह दिखाई भी नहीं देती तब खुली विधि से देते हैं। खुली विधि में यही विशेषता है कि प्रथमतः त्वचा को चीरकर शिरा को उठा लेते हैं। तब एक विशेष नलिका canula और यन्त्र द्वारा उस शिरा में नलिका या सुई प्रविष्ट करके तब लवणोदक दिया जाता है।

हैजे में इस प्रकार लवणोदक देने को विधि का डा० राजर्स महोदय ने आविष्कार करके लगभग ६० प्रतिशत रोगियों के प्राणों को बचाने का उपाय खोज निकाला है। तब से विशूचिका में लवणोदक को किसी भी विधि से दे देने पर रोगी को अत्यधिक तसल्ली और आराम केसाथ–साथ रोग से मुक्ति और लाभ भी मिलता है। खुली विधि से इन्जेक्शन लगाने के लिए निम्न सामान की आवश्यकता पड़ती है।

(१) scalpel चाकू, (२) कैंची, (३) चिमटी (४) सीनेकी सुई suture Needle, (५) रेशम का तागा (६) लवणोदकयन्त्र, (७) अन्य शोधक सामग्री जैसे साबुन, तौलिया, स्टोव, रेक्टीफाईड स्प्रिट इत्यादि

डाक्टर राजर्स महोदय ने कए साधारण यन्त्र का आविष्कार किया जिससे बड़ी सुगमता से लवणोदक दिया जा सकता है। इसमें एक कीफ्नुमा शीशेक ा पात्र होता है जिसमें १·१ औंस के २० निशान होते हे ऊपर से लवणोदक डालने के लिए खुला मुख होता है, तथा नीचे के संकुचित भाग में रबड़ की नलिका लगी रहती है, उस रबड़ की नलिका के अग्रिम भाग पर एक अन्तर्शिरीय केनुला Intavenous Canula लगा रहता है। यह एक टोंटी या चाबी वाला केनुला होता है जिसके घुमाने से ऊपर के पात्र में भरा हुआ रबड़ की नलिका में होता हुआ लवणोदक केनुला में को जाता हुआ रोका और खोला जा सकता है। अतः इस यन्त्र की विशेष शुद्धि होनी प्रथम आवश्यक है, इसके लिए पहले ४० भाग शुद्ध जल में १ भाग कार्बोलिकाम्ल डाल कर उसमें यह यंत्र ½ घण्टे तक पड़ा रहने दें, फिर निकाल कर गरम पानी से खूब धोकर साफ कर लेना चाहिए। अब पुनः यन्त्र को अत्यन्त गरम पानी में डालकर छोड़ देना चाहिए और उसे १५-२० मिनट उबाल लें। फिर निकाल कर यन्त्र का जल निकाल कर उसमें लवणोदक भर दें और नीचे की टोंटी बन्द कर दें।

अब जहां की शिरा में लवणोदक चढ़ाना हो (प्रायः बाहु की ही शिरा में ही प्रविष्ट करते हैं) वहां से ऊपर की ओर एक रबड़ का बन्ध Tourniquet लगाने से पूर्व साबुन से चर्म शुद्ध करके रेक्टीफाईड लगाकर तब बन्ध बांधना चाहिए। बन्ध के बांधने से शिरा कुछ उभर आएगी और उस शिरा के ही ऊपर चाकू (नश्तर) से एक ऐसा हल्का चीरा लगाएं कि चर्म के कटने के साथ-साथ शिरा कटे। अब त्वचा को इधर-उधर फैला कर उस शिरा से लगे अन्य तन्तुओं को अलग करके शिरा को अलग सी कर देना चाहिए। लगभग १ या १॥ इञ्च शिरा खोल लेनी चाहिए। शिरा के ऊपर और नीचे के भाग में दो बन्ध केटगट या रेशम के लगा दें।

अब बांए हाथ में चिमटी पकड़ कर शिरा को बीच से पकड़कर लें, ऐसी कि आधी शिरा चिमटी में पकड़ी जा सके, और दाहिने हाथ में कैंची लेकर उस शिरा के उठे हुए भाग को ऐसा काटना चाहिए कि सम्पूर्ण शिरा बीच से न कट जाए बल्कि अंग्रेजी के 'v' अक्षर की तरह कट जाए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब लवणोदक यन्त्र में लवणोदक भरकर केनुला खोल कर रबड़ की नलिका में अटकी वायु को निकाल देना चाहिए और टोंटी को इतना बन्द करें कि बूंद बूंद लवणोदक केनुला के सिरे से टपकता रहे। इस टपकते केनुला को 'वी' के आधार के कटी शिरा में ऊपर की ओर को प्रविष्ट करें, ऊपर का बन्ध अब ढीला करके केनुला को बन्ध से आगे को सरका दें। आगे केनुला का मुख सरक जाने पर केटगट के बन्ध को इस प्रकार बांध दें कि शिरा उस केनुला पर बन्ध के कारण बिल्कुल मिल जाए। अब केनुला की टोंटी को खोल दें, और आवश्यक गति से लवणोदक को बहने दें, जब लवणोदक सब प्रविष्ट हो जाए और पात्र में थोड़ा विलियन रह जाए तब केनुला को बन्द कर दें, ताकि शिरा में वायु प्रविष्ट न कर जाए।

इतना हो जाने पर ऊपर का बन्ध ढीला कर के केनुला को निकाल लें और पुनः बन्ध बांध दें, अब उस कटे स्थान की सिलाई केटगट से कर दें, और शिरा के नीचे ऊपर के दोनों बन्ध खोल दें। व्रण पर शुद्ध रूई किसी व्रण रोपक औषधि में तर करके बांध दें। इस विधि से दिए गए लवणोदक का प्रभाव विशूचिका की उस अवस्था में जब कि नाड़ी लुप्त होगई हो, रोगी अत्यन्त बेचैन हो, शीतांग होगया हो, तथा शरीर का जलीयांश अधिक मात्रा में निकल गया हो, अत्यन्त उपकारी सिद्ध हुआ है। मरता हुआ रोगी भी थोड़ी देर में ही शान्त और बहुत कुछ अच्छा हो जाता है।

अधस्त्वगीय (subcutaneously)

यह विधि शिरा द्वारा देने की विधि से आसान है और इसके लिए विशेष अनुभव की भी आवश्यकता नहीं, यद्यपि शिरा द्वारा इन्जेक्शन देने की ही विधि को अधिक महत्व दिया जाता है। परन्तु इस अधस्त्वगीय विधि से सेलाईन देने से लवणोदक का प्रभाव अधिक देर तक बना रहता है। और न किसी प्रकार की अनिष्ट प्रतिक्रिया Reaction होने की सम्भावना ही रहती है। यदि कोई हानि या कमी इस प्रकार सेलाईन देने में है तो यही है कि यदि रोगी को अधिक मात्रा में लवणोदक देना आवश्यक हो तब भी १ पाईन्ट से अधिक नहीं दिया जासकता है; दूसरे जहां बहुत जल्दी शरीर पर लवणोदक की प्रतिक्रिया को और लाभ को देखना अभीष्ट हो वहां इस विधि से जल्दी लवणोदक शरीर में न व्याप्त हो सकने के कारण विलम्ब हो जाता है। यही कारण है जो इस विधि का अवलम्बन अब कम होता है और जहां भी देखा गया है लवणोदक को शिरा मार्ग द्वारा अधिक देते हैं। फिर भी यदि इस विधि से देना अभीष्ट हो तो उसके लिए एक विशेष प्रकार के यन्त्र से काम लिया जाता है, जिसको एडमसन्स सेलाईन यन्त्र Adamsons saline Apparatus कहते हैं, इसमें एक गिलास की तरह का पात्र होता है जिसके निचले भाग में से लगभग ४-६ फीट लम्बी रबड़ की नलिका जुड़ी रहती है, उस नलिका के अन्तिम सिरे पर १ सुई जो त्वगध सुई subcutaneous Needle होती है, लगी रहती है। इस तमाम यन्त्र को प्रयोग करने से पूर्व भली प्रकार शुद्ध sterilige कर लेना चाहिए। जिसकी विधि यही है कि पहले यन्त्र के समस्त भागों को प्रथक करके कार्बोलिक लोशन से धोकर और फिर खौलते पानी से प्रक्षालन करके सुई को या तो ५-१० मिनट उबाल लें या रेक्टीफाइड स्प्रिट में ५ मिनट डुबाए रखें। अब अपने हाथों और रोगी की त्वचा को जहां इन्जेक्शन लगाना है, विधवत पूतिकृत करलें और प्रयोग के समय यन्त्र के सब भागों को मिलाकर जोड़ लेना चाहिए।

एक बोतल, जिसको पहिले से पूतिकृत कर लिया गया हो, लवणोदक बनाने के लिए लेलें, और शुद्ध रीति से उसमें लवणोदक बना कर रखलें। उस शीशे के पात्र में जिसमें रबड़ की नलिका जुड़ी हुई है, सेलाईन से भर देना चाहिए, और नीचे की टोंटी वाला भाग खोलकर रबड़ के अन्दर की तमाम वायु निकाल दें। अब सूई को विधिवत जैसे अधस्त्वगीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विधि से इन्जेक्शन लगाते हैं इन्जेक्शन लगादें, और पात्र को ऊपर उठाने के लिये अपने सहायक से कहें। लवणोदक शनैः-शनैः अन्दर प्रविष्ट होने लगेगा। एक पाईन्ट तक लवणोदक अन्दर प्रविष्ट करें, और उक्त पात्र में जिसे Barrel कहते हैं, जब थोड़ा लवणोदक रह जाय, सूई को निकाल लेनी चाहिए। और वहां पर कोलोडियन लगा देनी चाहिये।

इस विधि का विशेष लाभ तब होता है जब रोगी की त्वचा रूक्ष और वर्ण नीलिमा लिए हुए हो, और शरीर में दाह और पीड़ायें हों, नाड़ी लुप्त होने का भय हो और कुछ-कुछ शीतांग का आरम्भ हो गया हो, अंग मर्द, हाथ पांव में ऐंठन, हो, रही हो। सारांश यह कि रोगी के शरीर में जलीयांश के अभाव के चिन्ह उपस्थित हो गए हों।

इन्ट्रापेरीटोनियल (उदर गह्वरीय विधि से)

(Intraperitonial Saline infusion)

इस विधि की चर्चा हम पहले अध्यायों में कर आए हैं, अब पुनः संक्षेप से वर्णन कर स्पष्ट किये देते हैं। इस विधि द्वारा तब ही इन्जेक्शन लगाया जाता है जब शिरा मार्ग द्वारा इन्जेक्शन लगाने में असुविधा हो रही है।

इस विधि और शिरान्तर्गत विधि से दिये जाने वाले लवणोदक के गुणों में कुछ भी अन्तर नहीं है, अन्तर केवल यही है कि मार्ग परिवर्तन करना होता है। यंत्र वही है, केवल केनुला के स्थान पर एक ट्रोकार केनुला का प्रायः प्रयोग किया जाता है। इसके लिए ऐसा करना होता है कि रोगी को ऐसे आसन से लिटाना होता है कि उसका शिर वाला भाग पांवों वाले भाग की अपेक्षा ऊंचा रहे ताकि लवणोदक विलियन ढलक कर वक्ष की ओर उदर कलाच्छद के मध्य में दोनों आवरणों के मध्य खूब फैल सके।

अब नाभि से १-१½ इन्च नीचे कुछ बाईं ओर एक चीरासा लगा कर मांस भाग को प्रथक करके, या बिना चीरा लगाये ही (केवल अनुभव सिद्ध चिकित्सक के लिये, ट्रोकार केनुला (जिसके एक छोर पर रबड़ की नलिका और सेलाईन का पात्र लगाया जाता है) को अन्दर तक घुसेड़ देना चाहिए। जब वह अन्दर जाकर निर्विरोध सा प्रतीत होने लगे तब ट्रोकार निकाल लें और केनुला लगा रहने दें। और उसके साथ रबड़ जोड़ दें और सेलाईन अन्दर जाने दें। यदि कुछ अड़ांस या अवरोध दिखाई दे तो केनुला को जरासा ऊपर की ओर मरोड़ा देने से वह ठीक स्थिति में आ जाती है, और लवणोदक एक रफ्तार से अन्दर जाने लगता है।

जब सब लवणोदक अन्दर चला जाये और थोड़ा सा ऊपर के पात्र में शेष रहे तो उसको रोक दें और सावधानी से केनुला निकाल कर उस स्थान पर कोलोडियम का फाया रख दें। ताकि स्राव न हो और व्रण दूषित न हो जाये।

Collodion की विधि—

१–Flexible collodion–२४० मिली० ६० प्रतिशत अलकोहल में २० ग्राम प्रोक्सीलिन डुबोदो, इसमें ५० ग्राम कोलोफनी और २० ग्राम केष्ट्रायल मिला दें, अब इसमें इतनी ईथर मिलावें कि सब १००० मिलीग्राम होजाय। अलकोहाल की जगह मैथीलेटिड स्प्रिट भी मिलाई जा सकती है।

२–Colloidium Stypticum या styptic Colloid—Benzoin बेन्ज़ोइन १·५ ग्राम, टेनिक एसिड १५.० ग्राम, अलकोहाल (९० प्रतिशत) १५.० मिलीग्राम कोलोडियम इतना मिलाओ कि १०० मिलीग्राम हो जाये।

गुण—दोनों के गुण यही हैं कि कटे-काटे, छिदे व्रण इत्यादि स्थान पर लगाने में वहां का रक्त तुरन्त बन्द कर देता है और तुरन्त ईथर, अलकोहाल के उड़ जाने पर एक पतला पर्त अपना ही फैला कर हवा के प्रवेश, वाह्य संक्रमण से व्रण की रक्षा करता है।

गुदामार्ग द्वारा लवणोदक का प्रयोग—यद्यपि यह विधि वस्ति प्रकरण की विधि है, फिर भी यहां इसका उल्लेख इसी कारण करना पड़ा है कि उपरोक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीनों विधियों के साधन उपलब्ध न होने पर यह विधि अपनानी पड़ती है, पाठकों को यह विधि भी अपनाने में संकोच नहीं करना चाहिये। यह मार्ग, साधारण Simple Injection की विधि का मार्ग है।

इसमें वस्ति-यंत्र या उसी यंत्र द्वारा गुदा के अन्दर केनुला प्रविष्ट करके बहुत ही धीरे धीरे लवणोदक को अन्दर जाने देना चाहिए ताकि जो भी लवणोदक अन्दर जाये उसका साथ के साथ शोषण भी होता रहे। यदि यह विधि अन्य तीनों विधियों के साथ अपनाई जाय तो रोगी को अत्यन्त लाभ होने की सम्भावना रहती है, और पुनः लवणोदक देने की आवश्यकता नहीं रहती।

रोगी को बांए करवट लिटा दें, और उसकी गुदा में केनुला प्रविष्ट करके लवणोदक के पात्र को किसी ऊंचे स्थान पर लटका दें, और उसकी टोंटी इतनी खोलें कि जो बहुत धीमी धार गुदा के अन्दर जाती रहे और साथ-साथ शोषित भी होती रहे। इस विधि से भी एक पाईन्ट तक लवणोदक प्रविष्ट करना चाहिए।

विशेष बातें—

लवणोदक को देने के लिए यह आवश्यक है कि रोगी की गुदा का ताप (Temperature) ले लेना चाहिये, उसी के हिसाब से लवणोदक को गरम या ठण्डा करके दिया जाना चाहिये। यदि गुदा का ताप अधिक है तो लवणोदक शीतल दें, यदि गुदा का ताप कम है तो लवणोदक को गरम करके .१०५° डिग्री के ताप तक दे सकते हैं।

मात्रा के विचार से पूर्णवयस्क को ४ पाईन्ट तक लवणोदक दे सकते हैं, वैसे १ पाईन्ट तभी देते हैं जब नाड़ी गिर रही हो, अधिक शोचनीय दशा में ४ पाईन्ट तक दे दें। बच्चों को १।२ या १ पाईन्ट दें, आवश्यकता पड़ने पर अधिक भी दे सकते हैं।

साधारणतया शिरा द्वारा लवणोदक प्रविष्ट करने के लिए ४० बूंद-४५ बूंद प्रति मिनट की गति ठीक होती है, परन्तु अधिक जल्दी और शोचनीय अवस्था में यह गति प्रति मिनट १ से २ औंस तक भी की जा सकती हैं।

औषधियां—

बरोज़ वेलकम कम्पनी ने अपने यहां लवणोदक बनाने के लिए चार प्रकार की टिकियां बनाई है। जिनके द्वारा केवल जल में मिला देने पर इच्छित परिमाण और शक्ति का लवणोदक बन जाता है।

(१) सोलाइड सोडियम क्लोराईड—०.२३ ग्राम। इसकी १ टिकिया २५ सी. सी. परिस्रुत (उष्ण) जल में मिलाने पर लवणोदक तैयार हो जाता है।

(२) सोलाइड सोडियम क्लोराईड १'१५ ग्राम। यह २५० सी. सी. में घोली जाती है।

(३) सोलाइड सोडियम क्लोराईड २.५६२ ग्राम। यह १ पाइन्ट जल में घोली जाती है। इसमें ४० ग्रेन नमक होता है। इसके द्वारा बना विलियन समवल होगा।

(४) सोलाइड सोडियम क्लोराइड ५'१४८ ग्राम इसमें ८० ग्रेन लवण होता है, और यह एक पाईन्ट जल में घोली जाती है। इसके द्वारा बना विलियन अतिवल वाला होगा।

विविध कम्पनियों, निर्माणशालाओं द्वारा भी ऐसी टिकियां आईसो—टॉनिक, हाईपर टॉनिक इत्यादि के नामोंसे और घोल बनाने के लिए आती हैं. उनके साथ उनकी प्रयोग, मात्रा विधि, शक्ति के विलियन बनाने के लिए उनका परिमाण इत्यादि का उल्लेख भी आता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रन्थियों के इन्जेक्शन

Gland Products (Injectable)

ग्रंथियों के द्वारा बनने वाले इन्जेक्शनों का विवेचन हमने अपने पिछले अध्यायों में विस्तृत रूप से कर दिया है, वहीं हमने उनका प्रयोजन, प्रयोग के लाभ और आवश्यकताओं पर विस्तार से लिख दिया है, अब इन पृष्ठों में ग्रंथियों द्वारा बनने वाले इन्जेक्शनों की चर्चा हम करेंगे। एक बात पाठक और समझ लें कि एकही ग्रंथि के इन्जेक्शनों के विविध प्रकार के नाम विविध निर्माणशालाओं ने रखे हैं, उनके गुणों में विशेष भेद केवल शक्ति, सौम्यता, उग्रता, आकार-प्रकार के अतिरिक्त कुछ विशेष नहीं होता है, अतः जब एक ग्रंथि के इन्जेक्शन एक नाम के प्राप्त न हो सके तो उस ग्रंथि के दूसरे इन्जेक्शनों से भी काम लिया जा सकता है।

इसीलिये यहां केवल थोड़े से नामों का संकेत देकर हम पाठकों को केवल यही संकेत करने का प्रयत्न करेंगे कि अमुक ग्रंथियों के इन्जेक्शन किन-किन अवस्थाओं, रोगों में लाभ करते हैं, उसी के आधार पर ही अन्य समस्त उन द्रवों के इन्जेक्शनों के गुणों को जानना चाहिए।

अण्डकोष Testicles– पुरुष के शरीर में जननेन्द्रिय सम्बन्धी यह एक विशेष अङ्ग है जिसके न होने पर पुरुष नपुंसक होता है, इसके स्वस्थ होने पर ही प्रचुर कामवासना और जननेन्द्रिय के कर्म सामर्थ्य सबल होते हैं, अनेकों उत्पात करने पर भी उनके अण्डकोष यदि स्वस्थ हैं तो कोई विशेष हानि नहीं होती, और इनमें विकार आने पर शनैः-शनैः जननेन्द्रिय सम्बन्धी असमर्थता बढ़नी आरम्भ हो जाती है।

अण्डकोष शरीर में दो होते हैं और इनसे दो प्रकार का सार निकलता है, एक हाइड्रोसोलूबिल जल में घुलनशील, दूसरा लिपोसोलूबल वसा या तैल में घुलनशील, इन दोनों की उत्पत्ति अण्डकोष के तन्तु करते हैं, और दोनों सार निकल कर रक्त में मिल जाते हैं। कुछ अल्पांश अण्डकोष द्वारा बने हुए पुं• बीज spermatogoa के साथ सहवास, अथवा वीर्यपात के समय बाहर आजाता है। इन्हीं दोनों सारों के प्रथक-प्रथक गुण संक्षेप में वर्णन करते हैं।

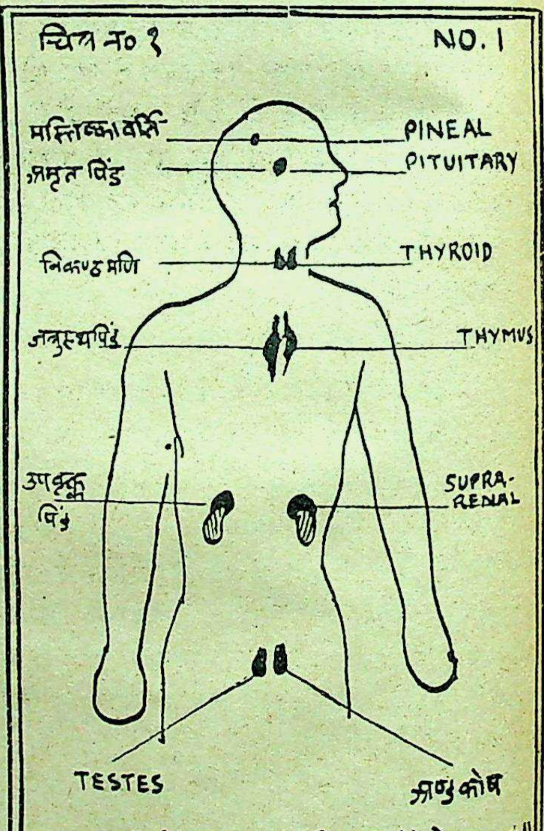

॥पुरुष शरीर में अन्तः स्रावी ग्रंथियों के स्थान॥

वसा में घुलनशील अंश लिपोसीलूबिल —

यही क्रियाशील सार Active Harmone माना गया है, और इसकी अनुपस्थिति में दूसरे प्रकार के पौरुष एवं जननेन्द्रिय चिन्हों तथा अङ्गों का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकास रुक जाता है, मूंछे-दाढ़ी देर से जमते हैं लिंग नहीं बढ़ पाता है, अतः जिन पशुओं को वधिया कर दिया गया हो और उनके अङ्गों का विकास नष्ट होगया हो तो इस सार के इन्जेक्शन देने से उनकी वृद्धि पुनः चालू हो जाती है। यह पुरुषसार (मेल हारमोन) कहलाता है।

जल में घुलनशील अंश (हाईड्रोसोलुबिल Hydrosoluble)-यह अपनी प्रतिक्रिया में योहिम्बीन की तरह गुणकारी है, जिसके कारण बारम्बार जननेन्द्रिय के आसपास रक्तभार और परिभ्रमण Blood Pressure & circulation बढ़ता है, फलतः अण्डकोष को अपने में से प्रथम प्रकार के वसा में घुलनशील मद निकालने को पर्याप्त रक्त मिल जाता है दूसरे इसका प्रभाव अमृतपिण्ड पर कुछ इस प्रकार का पड़ता है कि वह अपना कार्य और भी अधिक मात्रा में करने लगती है।

अतः अण्डकोषों से जो इन्जेक्शन निर्माण किए गए हैं वे प्रायः निम्न हैं—

एन्ड्रास्टिन Androstin- यह दो प्रकार के सारों का बना हुआ होता है, और दो प्रकार की एम्पुल में आता है। 'A' तथा 'B' एन्ड्रास्टिन। इनमें से 'A' प्रकार वाला तो ऊपर वर्णित जल में घुलनशील अंश का योग है, और 'B' वाला वसा में

जैसी रोगी की दशा को आवश्यकता हो, ए या बी वाला प्रयोग किया जासकता है।

गुण- नपुंसकता, अधिक आयु का भी होकर पुरुषत्वहीन रहना (Infantilism), वीर्य में पुंबीज Spermatozoa की अनुपस्थिति, पुरुषत्व की न्यूनता पौरुषग्रंथि (मेढ़ भूमि) Prostrate gland के विविध रोग। कामोत्तेजना का अभाव, कामोत्तेजक नाड़ियों का सुस्त रहना जननेन्द्रिय का विकासहीन होना इत्यादि रोगों में इसका प्रयोग किया जाता है।

मात्रा- प्रतिदिन १ सी. सी. की एक एम्पुल मांसान्तर्गत विधि से प्रयुक्त करनी चाहिए।

स्पर्मिन Spermin-गुण-यह सूअर के अण्डकोषों से बनाया जाता है। इसके प्रयोग से वीर्य का निर्माण बढ़ जाता है। वीर्योत्पादक अङ्गों को इससे उत्तेजना मिलती है। नपुंसकता, प्रमेह, जननेन्द्रिय की विकास-हीन दशा, ध्वजाभंग, रक्तहीनता (एनीमा), कुटेव के कारण काम शक्ति का नष्ट हो जाना, रति-शक्ति का ह्रास, वीर्य का पतला होजाना, बहुमूत्र, स्वप्नदोष अधिक होना, मूत्र के साथ वीर्य का आना, सन्तानोत्पत्ति की शक्ति का नष्ट होजाना, कामवासना के न्यून होजाने पर इसका प्रयोग फलप्रद होता है।

मात्रा मार्ग-सप्ताह में दो बार नितम्ब मांस में गहरा १ सी. सी. की मात्रा में प्रयोग करना चाहिए। तथा यह सावधानी रखनी चाहिए कि इसके प्रयोग के ४८ घण्टे तक सहवास इत्यादि को बिलकुल त्याग देना चाहिए, अन्यथा परिणाम उलटे होजाते हैं।

टेस्टोस्टेरोन प्रोपिओनेट (Testosterone Propionate) गुणः—यह अण्डकोषों के सार का योग है जो जब मांसपेशीगत प्रयुक्त किया जाता है तो चिर-कालिक तथा अत्यन्त व्यापक प्रभाव जननेन्द्रिय पर करता है। तथा साधारण अण्डकोष सार की अपेक्षा अधिक गुणकारी है। इसका प्रयोग पूर्ण नामर्दी, हीजड़ेपन, पुरुषों के जननेन्द्रिय सम्बन्धी अभाव के साथ-साथ अन्य मानसिक लक्षणों को भी लाभ करता है। जननेन्द्रिय का विकासहीन होना, जीर्ण पयोधर शोथ, स्तनपीड़ा, गर्भाशयिक असमय रक्त-स्राव, अवस्था से पूर्व कामेच्छा नष्ट होना, मेढ़ग्रंथि की अतिवृद्धि, हृदय का शूल इत्यादि।

मात्रा—मांसान्तर्गत विधि से १ सी. सी. की मात्रा जिसमें ५ मि. ग्राम प्रति सी. सी. होता है देनी चाहिए।

वीरोजन सिम्पल (Virojen Simple)-

इसी के समान विरीलीजन तथा सेक्स-विगर भी हैं। इसमें प्रायः १ सी. सी. में १ ग्रेन तक अण्डकोषों का शुष्कसार मिला हुआ होता है।

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह दुर्बलता, स्नायुविक आघात अथवा स्नायुविक परिश्रम जनित थकान, नामर्दी, कामशक्ति की स्नायुविक दुर्बलता इत्यादि रोगों में प्रयुक्त होता है।

मात्रा—जिसकी एक सी. सी. की मात्रा प्रति तीसरे दिन अधस्त्वगीय या मांसान्तर्गत विधि से प्रयुक्त करनी चाहिए।

विरोजन कम्पाऊंड (Virogen compound)— गुण-इसमें अमृत ग्रंथिका पूर्व भाग, उपवृक्क, लसीका मस्तिष्क अंश, सुषुम्ना का भाग, अण्डकोष तथा चुल्लिका ग्रंथि का सार सम्मलित है। इसका प्रयोग नष्ट कामेच्छा (गिरी हुई रतिशक्ति) नामर्दी, सामान्य गिरा हुआ स्वास्थ इत्यादि दशाओं में प्रयोग होता है।

मात्रा—सप्ताह में दो बार मांसान्तर्गत या अधस्त्वगीय विधि से प्रयोग करना चाहिए।

इसी प्रकार वायोग्लेन नाम के योग जो ग्रंथियों के मिश्रण होते हैं, विभिन्न मिश्रण और विभिन्न वायोग्लेन के नाम से प्राप्त होते हैं, इनका प्रयोग भी इन्हीं-इन्हीं ग्रंथियों के गुणों को करता है।

आर्कीडिन या टेस्टीकुलीन Orchidin या Testiculin— यह भी अण्डकोषों का योग है और १५-३० बूंद तक अधस्त्वगीय विधि से प्रयुक्त होती हैं, इसका विशेषगुण, कामोत्तेजक, कुछ स्नायुविक दुर्बलतायें, घेघा और वातज रोगों को नाश करने का है।

इसके अतिरिक्त और जितने भी अण्डकोषों के योग अन्य निर्माणशालाओं के हैं, उनके सबों के लगभग ये ही गुण होंगे, केवल नाम और मात्राओं का ही अन्तर होगा।

डिम्बग्रंथियां Ovaries— जिस प्रकार पुरुषों में अण्डकोष अनेकों जननेंद्रिय सम्बन्धी परिवर्तनों और शरीर के अन्य जातिसूचक (पुरुष) चिन्हों के लिए उत्तरदाई हैं, उसी प्रकार स्त्रियों में भी डिम्बग्रंथियां अनेकों लक्षणों और शारीरिक दशाओं के लिए उत्तरदाई हैं। ये शरीर में कई विशेष उल्लेखनीय कर्म करती है यथा, ये स्त्रियों में अन्य यौवन पूर्व, पश्चात काम सम्बन्धी लक्षणों की उत्पत्ति ह्रास के लिए उत्तरदाई हैं, मासिकस्राव इन्हीं ग्रथियों के नियमित रूप से क्रियाशील रहने पर होता रहता है, क्योंकि इनको शरीर से निकाल देने पर रजःस्राव पुनः नहीं होता है। प्राणियों में डिम्बग्रंथियों की अनुपस्थित में कामेच्छा होकर कामातुरी नहीं होती, इस कामातुरी को Oestrus भाव भी कहते हैं इसीके कारण गर्भाशय में भ्रूण चिपका भी रहता है और पूर्ण होकर जन्म लेने के समय तक चिपका रहता है। अतः कहने का तात्पर्य यह है कि डिम्बग्रंथियों में से तीन प्रकार के सारों को पाया गया है।

(१) ओइस्ट्रीन, इसको थीलिन या फालीकुलिन भी कहते हैं।

(२) कार्पस ल्यूटियम हार्मोन, या प्रोजेस्टीन, इससे डिम्बनिर्माण का सम्बन्ध है।

(३) इन्टरस्टीशियल हार्मोन-इसके कारण पाश्चात् अमृतपिण्ड के सार का स्राव होता है।

ओइस्ट्रीन Oestrin— यह उस सार या मद के लिए कहा गया है जो कि डिम्बग्रंथियों, अपरा, भ्रूणाजकला, अम्लोदक तथा गर्भिणी स्त्रियों के मूत्र में पाया जाता है। यह पुरुषों के अण्डकोषों में भी मिलता है, और स्वच्छ कण रूप में भी प्रथक किया गया है।

यौवन पूर्व स्त्री-शरीर में इसके इंजेक्शन देने से अनेकों स्पष्ट लक्षण उदय होने लगते हैं, यथा कामातुर होजाना, गर्भाशय तथा योनि की वृद्धि होने लगना, गर्भाशय अन्तःकला की उत्तेजना बढ़ जाती है, तथा प्रसव के समय पाश्चात अमृतपिण्ड के स्राव को उद्दीचित करके प्रसवकारक शक्ति को उत्पन्न करने में सहायक होता है, इसके अतिरिक्त यों समझना चाहिये कि यह सभी उन कर्मों को करता है जिसमें डिम्ब का परिपाक पूर्ण हो।

प्रायः देखा जाता है कि कृत्रिम या वास्तविक प्राकृतिक रूप में होने वाली रजोनिवृत्यावस्था के समय कुछ विचित्र स्नायुविक और मानसिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं, तब ऐसी अवस्था में डिम्ब-ग्रन्थि का ऐसा सार जिसमें ओईस्ट्रिन नामक मद अवश्य हो, प्रयोग करने से इन लक्षणों में काफी कमी आजाती है। जैसे मासिक धर्म की बेकायदगी (अनियमितता) इत्यादि। इसको सफलतापूर्वक गम्भीर परमवामकता (Hyperemesis Gravidum) नष्ट कामवासना, तथा डिम्बग्रंथियों का कम काम करने की अवस्था, जैसे नष्ट रज: (रजोलोप) गुप्तांगों का अपूर्ण विकास आदि में विशेष रूप से प्रयुक्त होता है। इस हेतु इसे मुख द्वारा भी देते हैं, इन्जेक्शन द्वारा यह थीलिन या ओइस्ट्रीन के रूप में दिया जाता है। प्रति दिन या तीसरे दिन मांसान्तर्गत विधि से इसे ६ से आठ तक इन्जेक्शन लगाने चाहिये। इसके अन्य मिलने वाले साधारण एवं योगिक इन्जेक्शन प्राय: निम्न हैं।

ओइस्ट्रोफार्म Oestroform— स्त्रियों के रोगों पर, विशेषकर उन रोगों पर जिनका सम्बन्ध खासकर उनकी जननेन्द्रिय से है, इसका प्रभाव चमत्कारिक होता है, जैसे नष्टार्तव जिसमें इसको सप्ताह में दो बार ५०००० यूनिट प्रति बार की मात्रा में दो सप्ताह तक देना चाहिए। ग्रन्थि जन्य संधिशोथ, रक्तचापाधिक्य, रजोनिवृत्ति के समय उत्पन्न होने वाले उपद्रवों के लिए, योनिशोथ, कष्टार्तव (इसमें मासिक धर्म होने से दो सप्ताह पूर्व इसको देना चाहिए।) इस प्रकार पहले ही प्रयोग चालू कर देने से मासिकधर्म होते समय कष्ट नहीं होता और खुलकर स्राव हो जाता है, यदि कुछ गर्भी रह जाय तो अगले मास पुन: ऐसा ही करना चाहिए। बांझपन में सदैव मासिक धर्म से तीन सप्ताह पूर्व इसे देना आरम्भ करदें। गर्भिणी की वमन में, इसका प्रयोग लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

इसके अतिरिक्त जब बच्चों को दूध पिलाने की अवस्था में स्तनों में दूध कम उतरता है तो इसका एक ५०००० यूनिट का इन्जेक्शन लगा देना चाहिए। यदि दूध में वृद्धि न हो तो २४ घण्टे से ४० घंटे के बाद पुन: दूसरा इन्जेक्शन लगाना चाहिए।

प्रयोग—इसको सदैव अधस्त्वगीय या मांसान्तर्गत विधि से १ सी. सी. की मात्रा में ५०००० यूनिट तक प्राय: लगाते हैं। नित्य अथवा सप्ताह में २-३ बार।

ओवोसाईक्लीन Ovocycline—उपरोक्त की तरह गुणकारी है और उसी तरह प्रयुक्त भी होती है। डिम्बग्रन्थि के ओस्ट्रीन नामक द्रव्य का यह इन्जेक्शन है। इसके प्रयोग से स्त्रियों में गुप्तांगों की वृद्धि होने लगती है और उनके अन्दर कामशक्ति प्रबल होजाती है। उन अङ्गों से होने वाले स्वाभाविक स्रावों की वृद्धि होजाती है। जिन स्त्रियों को बड़ी होने पर भी अवस्था पर मासिक धर्म नहीं होता, बांझपन, अल्प रज:, रजावरोध, रजोनिवृति के समय पर होने वाले विशेष उपद्रव, योनि की खुजली, योनिशोथ, प्रदर, स्त्रियों के गुप्ताङ्गों के अनेकों रोगों तथा सुजाक संक्रमण से शिशुओं की योनि शोथ में यह लाभकारी है।

मात्रा—१ मि० ग्राम, २ मि० ग्राम, ५ मि० ग्राम तथा १० मि० ग्राम तक है, अवस्थानुसार इसे सप्ताह में १-२ या ३ बार तक देते हैं, जहां कम जरूरत हो वहां प्रति दूसरे सप्ताह मांसपेशीगत देना चाहिए।

थीलिन Theelin—पार्केडेविस कम्पनी का यह योग है और इसके प्रति सी.सी. के एम्पुल में २०० इण्टरनेशनल यूनिट होते हैं। कण रूप में डिम्ब का सार है, जोकि रजोनिवृत्ति पर होने वाले उपद्रवों, रजोलोप, जो डिम्ब ग्रन्थियों के नष्ट कर्म के कारण हो, विवर्णरज:स्राव, डिम्बग्रन्थि के नष्ट कर्म से बांझपन, मासिक धर्म होने से पूर्व ही स्नायुविक लक्षणों का होना जैसे शिर:शूल, सुजाक जन्य योनि शोथ आदि।

मात्रा—१-२ सी. सी. प्रतिदिन या हर तीसरे दिन अधस्त्वगीय या मांसान्तर्गत विधि से दें।

थीलिन इन आयल Theelin in oil—इसके प्रति सी. सी. में २००० इण्ट. यूनिट सार होता है।

इसको भी उपरोक्त रोगों में दिया जाता है, और विशेषकर वहां देते हैं जहां अधिक मात्रा में डिम्ब-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रन्थि को प्रयोग करना अभीष्ट होता है। मात्रा एक सी. सी. ही है।

ओईस्ट्रीन नामक पदार्थ का प्रयोग सारांश में निम्न दशाओं में होता है—

गर्भावस्था सम्बन्धी दशाएं— प्रसवोत्पत्ति हेतु, दूध को रोकने लिए, दूध कम करने के लिए, गर्भस्राव पर, प्रसवकालीन गर्भाशय संकोचक्रिया का नष्ट होजाना (Uterine Inertia) गर्भिणी की वमन इत्यादि।

योनि तथा भग सम्बन्धी विकार-- Kraurosis Vulvac, भग शोथ, भग पाक, योनि शोथ, योनिसंकीर्णता, बच्चों में योनि तथा भग की शोथ इत्यादि।

नारी जनेन्द्रिय विकास सम्बन्धी लक्षण-देर में जवानी आने पर, अन्य जाति सूचक चिन्हों का विलम्ब से प्रकट होना, काम सम्बन्धी बांझपन या अनिच्छा, विकास की कमी के कारण अथवा डिम्बग्रन्थि के अपूर्ण विकास के कारण मासिक धर्म का न होना।

मासिक धर्म सम्बन्धी विकार-नष्टार्त्तव, कष्टार्त्तव जो कि अपूर्ण डिम्बग्रंथि के कारण हों विवर्णस्राव, न्यून स्राव।

कृत्रिम या प्राकृतिक रजोनिवृत्ति के समय के उपद्रव— डिम्बग्रन्थि के विकार, स्नायुविक विकार दूध की कमी इत्यादि।

सिस्टोमनसिन (Sistomensin)-थीलिन इन आयल की तरह यह भी डिम्बग्रंथि के सार का योग है जो तैल में घुला हुआ होता है। इसको भी जब स्त्रियों के यौवन सम्बन्धी तथा गुप्तांग सम्बन्धी अन्य लक्षणों की उत्पत्ति में विलम्ब हो रहा हो, या उत्पन्न होने पर पुनः इनका विकास रुक गया हो, कष्टार्त्तव अत्यार्त्तव, मासिक स्राव की उपरोक्त गड़बड़ी में इसका प्रयोग होता है।

मात्रा प्रयोग—१ सी. सी. में .०५ ग्राम एक एम्पुल का दिन में एक या दो बार मांस पेशीगत विधि से आवश्यकतानुसार प्रयोग करना चाहिए। क्योंकि तैल का प्रयोग होने से यह शीत काल में गाढ़ा सा हो जाता है अतः पिचकारी और एम्पुल को कुछ गरम (१००° F) कर लेना चाहिए। इन्जेक्शन के साथ साथ मुख द्वारा भी इसका प्रयोग टिकियों के रूप में किया जाने से विशेष लाभ होत है।

स्टिलबिस्ट्राल (Stilboestrol) तथा हेक्सीस्ट्राल (Hexoestrol)-कृत्रिम इस्ट्रोजन का योग है। जिसको नष्टार्तव, कष्टार्तव, बड़ी होने पर भी बालकों जैसा लगना, काम सम्बन्धी नष्टेच्छा, गर्भाशय तथा स्तन सम्बन्धी अपूर्ण विकास, बांझपन, दूध या न आना, रजो निवृत्ति के समय के उपद्रव, भग पाक, प्रसव के समय गर्भाशय का संकोचन, शक्तिहीन हो जाना तथा मेढ़्भूमि जन्य दुष्ट व्रण (Prostatic Carcinoma,) इत्यादि में इसका प्रयोग होता है।

बी. आई. ओवेरेक्स (B. I. Ovarex)- यह डिम्ब ग्रंथि का योग है, प्रति सी. सी. में १ ग्रेन शुष्क ग्रंथि सार है, इसी के समान निम्न योग हैं—

ईस्टरनम, अनडन, प्रोजेस्टिन, प्रागीनान, थीलिस्ट्रिन, ओवोस्टेब, ईस्ट्रोफार्म।

गुण—पीछे वर्णित डिम्बग्रन्थि के प्रयोग की तरह, मासिक धर्म की गड़बड़ी, कष्टार्तव, नष्टार्तव, अतिरजः, रजोनिवृत्ति के उपद्रव, गर्भिणी के उपद्रव नष्ट काम वासना इत्यादि।

मात्रा प्रयोग—मांसान्तर्गत विधि से प्रति तीसरे दिन १ सी. सी. जब तक लाभ न हो लगायें।

ईस्ट्रोजन (Oestrogen) का अन्य प्रयोग-(लेखक की अप्रकाशित पुस्तक का एक संक्षिप्त अंश) प्रायः पुरुषों में उनकी मेढ़्भूमि की दुष्ट घातक अर्बुद (Corcinima of the Prostrate) हो जाता है, जो शनैः शनैः बढ़ता हुआ बाद में जब कुछ कष्टप्रद लक्षणों को जन्म देने लगता है तब उसकी चिकित्सा की ओर रोगी का ध्यान जाता है, पेशाब आने में रुकावट, पेड़ू में भारीपन, कमर में असह्य पीड़ा इत्यादि दुर्बलता के लक्षण पैदा हो जाते हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब केवल यही मार्ग रह जाता है कि उसका आप्रेशन करके बढ़ा हुआ भाग निकाल डाला जाय और यदि उसे निकालना अभीष्ट न हो या रोगी इस योग्य न हो तो इस्ट्रोजन का प्रयोग लगभग उतना ही गुणकारी होता है जितना आप्रेशन चिकित्सा।

इस्ट्रोजन का यह गुण जो विशेष है कि वह केन्सर या घातक अर्बुद के तन्तुओं का नाश करना आरम्भ कर देता है, क्योंकि ईस्ट्रोजन की उपस्थिति में अण्डकोष द्वारा एण्ड्रोजन का मेढ़ू को आना बंद हो जाता है। यह प्रभाव बधिया कर देने पर भी प्राप्त हो सकता है, जिससे एन्ड्रोजन की उत्पत्ति ही नष्ट हो जाती है, या फिर ईस्ट्रोजन का प्रयोग यही प्रभाव पैदा कर सकता है।

यह एन्ड्रोजन का बनना इस कारण बंद हो जाता है कि ईस्ट्रोजन के प्रयोग से अमृतपिण्ड द्वारा, अण्डकोषों को काम रस की प्राप्ति नहीं हो पाती।

यद्यपि मेढ़ू के घातकार्बुद के लिए यह चिकित्सा आरोग्यप्रदान करने वाली नहीं है, फिर भी इससे रोगी के जीवन में शांति आ जाती है, और उसके कष्टों में थोड़ी बहुत कमी हो जाती है। जिनमें यह चिकित्सा सात्म्य पड़ती है, कुछ सप्ताहों में अर्बुद के उभार नष्ट होजाते हैं, गृध्रसी के समान और कटिशूल का अन्त हो जाता है, और रोगी में नई जान सी आजाती है। जिन रोगियों में पेशाब की बहुत ज्यादा रुकावट हो जाती है, उनमें यह चिकित्सा विशेष लाभ (पेशाब उतरने की दुविधा दूर न करके) नहीं करती। ऐसे रोगियों में आप्रेशन ही एक इलाज है।

अतः जब अण्डकोषों को निकाल डाला जाय तो इसके देने का आवश्यकता ही नहीं रह जाती। और मूत्रावरोध की अनुपस्थिति में इसी चिकित्सा पर अवलंबित हो जाना चाहिए, इसके लिए प्रथम नित्य ५-५ मिलीग्राम तीन-चार बार दें, जब आराम होने लगे तो प्रतिदिन ३ मिलीग्राम की मात्रा चालू रखना चाहिये। इसके लिए—

स्टिलवीस्ट्राल (बैंगाल कैमीकल) इस्ट्रोफार्म इत्यादि योग भरोसे के योग प्रयुक्त करने चाहिए।

इसी प्रकार से छाती का दुष्ट व्रण के बारे में एक दृष्टान्त को देखने से यह भी ज्ञात हुआ है कि एक रोगी को जिसे अण्डकोष का दुष्टव्रण हो गया था, उसको प्रतिदिन १ मिलीग्राम डियाईल-स्टीलवीस्ट्रोल दिया गया, वह चंगा होगया, कुछ मास के बाद उसकी छाती में दुष्ट व्रण निकल आया और उसका प्रभाव बगल तक फैला। अंत में वह मर ही गया। सारांश यह निकाला गया कि पुरुषों में (स्त्रियों में नहीं) मेढ़ू के दुष्टव्रण की चिकित्सा करते समय छाती में यदि कोई परिवर्तन होने लगें तो अत्यन्त सावधानी से आगे से चिकित्सा करें, क्योंकि मेढ़ू के दुष्टव्रण का छाती के दुष्टव्रण से घनिष्ट सम्बन्ध है।

सारांश में इस्ट्रोजन की प्रयोग मात्रा के प्रभाव—श्री. हावेल महोदय ने अपने रोगियों पर इस्ट्रोजन के प्रयोग पर अपनी सम्मति दी है कि अधिक मात्रा में व्यवहार करने पर निम्न उपद्रव उत्पन्न हो सकते हैं।

(१) अत्यधिक रक्तस्राव, एवं अधिक दिनों तक इसका सेवन अधिक दिनों तक मासिक स्राव को जारी रखता है।

(२) किसी-किसी रोगी में इसकी मात्रा इसी लिए बढ़ा देनी पड़ती है, क्योंकि वे चाहती हैं कि मासिकधर्म होता रहे।

ये अनावश्यक उपद्रव कम किये जा सकते हैं, यदि रोगियों को विटामिन ब, तथा ई और पुरुषीय-मद को ईस्ट्रोजन की बजाय प्रयुक्त करके देख सकते हैं। और थोड़े समय तक इस्ट्रोजन की थोड़ी-थोड़ी मात्रा देनी ही अच्छी रहती है।

कार्पस ल्यूटियम Corpus Luteum—इसका सार प्रोजेस्टिन नाम का होता है जिसको कौमार्यावस्था में यदि जीवों को दिया जाय तो उनकी स्तन ग्रंथियों की वृद्धि हो जायगी, तथा यह भी कुछ ऐसा प्रयत्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता है जिससे गर्भाशय में कुछ ऐसी शक्ति आ जाती है जो वह भ्रूण को ग्रहण कर लेता है, और गर्भावस्था में स्तनों की वृद्धि होती रहती है। यह गर्भाशय के पीतांग का ही स्राव है। और यह भी माना गया है कि इसकी उपस्थिति गर्भाशय की संकोचन शक्ति पर नियंत्रण करती है। इसकी उत्पत्ति बहुत कुछ पूर्व अमृत पिण्ड द्वारा निकलने वाले स्राव प्रोलान 'ए' पर निर्भर है। और जब इसका निकलना बंद हो जाता है जैसा कि गर्भावस्था के अंतिम दिनों में होता है, तब एक और पदार्थ आक्सीटासिन नाम का स्रवित होने लगता है जिसके प्रभाव से गर्भावस्था का अंत हो जाता है। उधर यदि प्रोलान बी' का यदि इन्जेक्शन लगाते रहें तो गर्भावस्था की अवधि बढ़ जाती है। मुख द्वारा दिये जाने पर कोई विश्वसनीय प्रभाव नहीं होता है, कभी-कभी इसको गर्भपातावस्था में दिया जाता है। इसके योग निम्न हैं।

प्रोजेस्टिन (projestin)–इसका प्रभाव गर्भाशय पर विशेषकर होता है। पीतपिण्ड का तैलीय योग है।

गुण–यदि गर्भस्राव होने का डर हो,तो इसके इन्जेक्शन से गर्भ और पुष्ट होजाता है। गर्भाशय से अनियमित रूप से अधिक मात्रा में रक्तस्राव होता हो,प्रसव के उपरांत की पीड़ा,कष्टार्तव,आघात,डर,चोट,थकान, गर्भाशय की शक्ति कम होने से गर्भपात होने का भय हो,तब इसका प्रयोग करना चाहिए। प्रसवोपरान्त होने वाला मक्कलशूल, आक्षेपिक कष्टार्तव, अतिरजः,रक्तप्रदर, अत्यार्तव, गर्भाशय से अति रक्तस्राव में यह प्रयोग होता है। गर्भ की दशा में बारम्बार होने वाले गर्भस्राव गर्भग्रहण का गर्भाशय में शक्ति न होना, गर्भाशय अतिसंकोच आदि दशाओं में यह १ से १० यूनिट तक प्रतिदिन मांसपेशी द्वारा प्रयुक्त होता है।

इसी के समान गुणकारी और इसी सार से निर्मित अन्य योग के केवल नाम हम नीचे देरहे हैं।

१–ल्यूटो साइक्लीन (Lutocycline)–मासिकस्राव का अवरोध, अल्परजःस्राव,बारम्बार मास में थोड़ा थोड़ा रक्तस्राव होजाना आदि।

मात्रा—२ से ५ मिलीग्राम आवश्यकतानुसार, सप्ताह में १-२-३ बार मांस पेशी द्वारा दें।

२–प्रोजेस्ट्रोन (Progestrone)–यह भी उपरोक्त का ही परिवर्तित नाम है, गुण प्रयोगादि सब वही हैं।

३–कार्पोरा ल्यूटिया सालूबिल (carpora Lutea soluble) यह भी उपरोक्त के समान है।

४–लिपोल्यूटिन (Lipo-lutin)-यह पार्केडेविस कम्पनी की उपरोक्त के समान औषधि है जो २-५-१० यूनिट प्रति सी.सी. के एम्पुल में आती है।

५- corpus luteum ext. (B. I.) कार्पस ल्यूटियम एक्सट्रेक्ट (बेंगाल इम्यूनिटी)

आदि-आदि अनेकों नामों से यह सार बाजार में मिलते हैं, उनके प्रायः एक से ही गुण होते हैं।

पिट्यूट्री Pituitary—शरीर में यह ग्रन्थि इतने महत्व की मानी गई है कि इतनी और नहीं है, समस्त शरीर में अन्य ग्रन्थियों पर इसी का नियंत्रण होता है। इसके दो भाग माने गए हैं, एक पूर्व दूसरा पश्चात्, दोनों से भिन्न प्रकार के स्राव निकलते हैं, जो शरीर की एक प्रकार से प्रत्येक संस्थान पर अपना नियन्त्रण रखते हैं। यहां जिन-जिन इन्जेक्शनों का प्रयोग इस ग्रन्थि का होता है उन-उन के नाम और गुणों को देते हैं।

अमृत पाश्चात खण्ड Posterior Lobe pituitary के द्वारा बने इन्जेक्शनों को प्रथम लेते हैं।

पिट्यूट्रीन Pituitarin–पाश्चात् खण्ड द्वारा बना यह इन्जेक्शन प्रायः इसी नाम से मिलता है और यह एड्रीनलिन की अपेक्षा अधिक व्यापक गुण प्रकट करता है। यह मूत्रल है, हृदय को बलप्रदान करता है, इसका मुख्य प्रभाव गर्भाशय की मांसपेशियों को संकुचित करता है, रक्त केशिकाओं को संकुचित करके गर्भाशय के प्रत्येक प्रकार के रक्तस्राव को रोकने के लिए नित्य प्रायः व्यवहार में आने वाली औषधि है। साथ-साथ हृदय को यथेष्ठ बल भी देती है। विशूचिका में जब रोगी की अवस्था अत्यन्त शोचनीय होजाती है, नाड़ी लुप्त होकर शरीर शीतल हो जाता है तब इसको सेलाईन में मिलाकर प्रयुक्त करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। किसी भी कारण से जब हृदय पर बलदायक प्रभाव डालना हो तब इसे प्रयोग करें। जब प्रसव के समय गर्भिणी में इतनी शक्ति न हो कि उसका गर्भाशय संकुचित होकर प्रसव हो सके तब इसका प्रयोग करने से उसे अत्यन्त सहायता मिलती है। बच्चा ३-४ मिनट में बाहर आजाता है और अधिक समय नष्ट नहीं होता है।

अगर गर्भाशय मुख खुला हुआ न हो, हृदय के रोगों में, वृक्क के रोगों में (जैसे शोथ, विषमयता इत्यादि में) गर्भाशय का मुख जब तक खुला हुआ न हो तथा वृद्ध रोगी पर इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

मात्रा—५ से १० यूनिट अर्थात आधी से १ सी.सी. तक इसका प्रयोग मांसांतर्गत विधि से शिरामार्ग या अधस्त्वगीय विधि से जैसी अवस्था हो देना चाहिए।

इसका एक मुख्य प्रयोग यह है कि जब प्रसव के उपरांत रक्तस्राव अधिक होने लगे तो उसको यह रोक देता है। इससे आंतों और मूत्राशय की मांसपेशियों की गति बढ़ जाती है। इससे कुछ-कुछ मलावरोध भी दूर होता है। इसी के अन्य योग जो व्यवहृत होते रहते हैं निम्न हैं।

पिटोसिन (Pitocin)—यह भी पाश्चात खण्ड का योग है, और इसका विशेष प्रयोग अन्य गुणों के अतिरिक्त प्रसवोपरांत होने वाले रक्त स्राव को रोकने के लिए, तथा जब गर्भाशय का मुख खुल जाए तब बिना कष्ट के प्रसव हो जाता है। इसका प्रभाव गर्भाशय संकोचन का है।

मात्रा—अधस्त्वगीय तथा आवश्यकता पड़ने पर शिरा द्वारा भी इसको ०·२५ से ०·५ ग्राम तक १ सी. सी. की या ½ सी. सी. की मात्रा में दिया जाता है।

पिट्रेसिन Pitressin—

गुण-यह उपरोक्त की तरह है परन्तु सौम्य है। इसका प्रयोग वैसे तो उपरोक्त की तरह होता है परन्तु विशेष गुण इसका यह है कि यह मूत्राशय और आमाशय की मांसपेशियों की गति को उत्तेजित करती है, जिसके कारण रुका हुआ मूत्र एवं विष्टम्भ, आध्मान, गेस इत्यादि निकल जाती है। जब किसी आघात के या मूर्च्छावस्था में हृदय अपना कार्य नहीं करता है तो इसे प्रयोग करते हैं और हृदय को बल मिल जाता है।

मात्रा मार्ग—अधस्त्वगीय विधि से ०·५ से १ सी. सी. तक दिया जाता है।

पीच्यूट्री (पोस्टीरियरलोब) एक्ट्रेक्ट (Pituitary posterior lobe Ext.)—यह मांसगत, शिरागत, अधस्त्वगीय जैसी भी आवश्यकता हो २ से १० यूनट तक अर्थात १।५ से १ सी. सी. तक प्रसवोपरांत रक्तस्राव तथा गर्भाशय की संकोचन शक्ति की कमी होने पर किया जाता है, वैसे अन्य गुण उपरोक्त हैं। उसी प्रकार इस खण्ड के अन्य इन्जेक्शनों के गुण जानने चाहिए।

एण्टीरियर पिच्यूट्री (Anterior Pituitary)—यह कई प्रकार के ऐसे स्रावों को निकालता है जिनसे विविध कर्मों को उत्तेजनाएं मिलती हैं और जैसे—(१) वृद्धिकारक मद Growth Promoting Harmone, (२) स्त्री एवं पुरुष जाति सम्बन्धी sex Harmone मद, इसमें प्रोलान A, और प्रोलान B, आजाते हैं (३) चुल्लिका उत्तेजक मद Thyrotropic Harmone, इसकी अनुपस्थिति में चुल्लिका ग्रंथि सूख जाती है, (४) उपवृक्क उत्तेजक मद Adrenotropic Har. इसकी अनुपस्थिति से उपवृक्क की न्यूनता होजाती है। (५) उपचुल्लिका उत्तेजकमद इसकी अनुपस्थिति में प्रायः अस्थिभग्न इत्यादि होते रहते हैं। इत्यादि

डाक्टर जान्डेक और अश्चीम ने यह भी सिद्ध करके दिखाया है कि गर्भिणी स्त्रियों एवं प्राणियों के मूत्र में प्रोलान 'ए' और 'बी' दोनों उपस्थित रहते हैं। और ये प्रोलान गर्भावस्था के आरम्भ होते ही मूत्र में पाए जाते हैं तथा गर्भावस्था की समाप्ति पर और पुरुषों के मूत्र में नहीं रहते। तथा जो दशा डिम्ब ग्रंथियों की पूर्व खण्ड के सार को इन्जेक्शन द्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देने पर पैदा हो जाती है वही दशा गर्भिणी के मूत्र या रक्त को इन्जेक्शन द्वारा देने पर होजाती है।

Prolan 'A'–यह क्षम्लीयसार पूर्व खण्ड का होता है, और डिम्ब छोरों Ovarian Follicles को उत्ते-जित करता है, तथा इसी के कारण डिम्ब परिपक्व होकर गर्भाशय को गर्भ ग्रहण करने योग्य शक्ति प्राप्त होती है।

Prolan 'B'–यह क्षारीय सार है, जिसका प्रभाव पीतपिण्ड के निर्माण और गर्भधारण, डिम्ब निर्माण का रोधक है, तथा इसकी उपस्थिति में गर्भा-शय तथा दुग्ध की अति वृद्धि नहीं हो पाती। इत्यादि।

एन्टीट्यूट्रिन (Antituitrin)–यह गर्भिणी के मूत्र से ही बनता है, और इसमें दोनों प्रकार के प्रोलान पाए जाते हैं। १ सी. सी. में १०० यूनिट होते हैं। आवश्यकतानुसार प्रतिदिन १०-१२ इन्जे-क्शन अधस्त्वगीय विधि से १-२ सी.सी. तक लगावें।

गुण-अल्प मात्रा में–कामसम्बन्धी अल्प विकास, नष्टार्तव, विलम्बित यौवनावस्था, कामसम्बन्धी अस-मर्थताएं, कष्टार्तव, विलम्बित रजोदर्शन जो कि पीत-पिण्ड के अभाव के कारण प्रायः हों। इसको अधिक मात्रा का प्रयोग रक्तप्रदर, अतिरजः रक्तस्राव, तथा गर्भस्राव की आशंका में प्रयुक्त होता है।

एन्टीरियर लोब एक्ट्रैक्ट (Anterior Lobe ext.)–इसके प्रयोग से लगभग सभी प्रकार के गुण जो पूर्व खण्ड के प्रयोग से हो सकते हैं, और जिनका वर्णन ऊपर दिया जा चुका है, होते हैं। सप्ताह में २ बार मांसान्तर्गत विधि से १ सी. सी. की मात्रा में प्रयोग करना चाहिए, आवश्यकता पड़ने पर अधिक भी प्रयोग कर सकते हैं।

गोनान (Gonan)-गुण– यह गर्भिणी के मूत्र में उपस्थित पीतपिण्ड उत्तेजक, कामवासना उत्तेजक अंश का इन्जेक्शन है, जो स्त्रियों तथा पुरुषों दोनों के ऊपर व्यवहृत होता है।

पुरुषों में– जननेन्द्रिय की अपूर्ण वृद्धि, विलम्बित यौवन, मेद वृद्धि के साथ-साथ जननेन्द्रिय की अपूर्णता (Frohlichs' Syndrome) अण्ड-कोषों का फोतों में न उतरना इत्यादि।

स्त्रियों में– असाधारण गर्भाशय रक्तस्राव, बारम्बार होने वाला गर्भपात, गर्भपात तथा बांझपन की कुछ अवस्थायें ऐसी हैं जिनमें इसका प्रयोग किया जाता है।

मात्रा विधि-यह शुष्क रूप में प्रति एम्पुल में १०० यूनिट तथा ५०० यूनिट के दो प्रकार में आता है। साथ में द्विवार परिस्रुत जल की भी एम्पुल आती है, जिनमें उसको घोलकर सप्ताह में २-३ बार तक अथवा आवश्यकता पड़ने पर नित्य १००-५०० यूनिट तक मांसान्तर्गत विधि से प्रयोग किया जा सकता है। इसका विलियन सदैव ताजा बनाकर व्यवहार में लाना चाहिये।

सीरोजन (Serogen)– यह बजाय मूत्र द्वारा तय्यार होने के गर्भिणी घोड़ी के रक्त तरल (Serum) से बनाई जाती है, और यह भी स्त्रियों तथा पुरुषों में प्रयुक्त होती है।

पुरुषों में- नामर्दी तथा वीर्य का बीज रहित होने की दशा, वीर्य में बीज सम्बन्धी विकार।

स्त्रियों में– विलम्ब से जवानी आना, डिम्ब का निर्माण न होना, विवर्ण रूप में आर्त्तव आना, एक बार रजोदर्शन हो जाना, सम्भोग की अनिच्छा इत्यादि।

मात्रा विधि—यह भी शुष्क रूप में २०० यूनिट तथा १०० यूनिट दो रूप में आती है, साथ में द्विवार परिस्रुत जल की एम्पुल भी आती है। सप्ताह में दो बार तक, सरांश यह कि प्रति सप्ताह २०० से २००० यूनिट तक प्रयुक्त किया जासकता है। इसका इन्जेक्शन मांसान्तर्गत विधि से दिया जाता है।

साइना पोडीन (Synapodin)– यह अमृत ग्रन्थि का पीतपिण्ड एवं जननेन्द्रिय सम्बन्धी उत्तेजना उत्पादक अंशों द्वारा बनाया हुआ योग है, यह भी स्त्रियों के बहुविध रोगों में सफलता-पूर्वक प्रयुक्त होता है, प्रायः नष्टार्तव, अथवा गर्भाशय के कार्या-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विक्य से रक्तस्राव होना, बांझपन, अतिरजः अत्यार्तव इत्यादि तथा उपरोक्त वर्णित पुरुष रोगों में इसका प्रयोग सफलता से होता है।

सप्ताह में १-२ बार अधस्त्वगीय विधि से परीक्षा हेतु, तथा मांसान्तर्गत विधि से चिकित्सा हेतु इसका प्रयोग किया जाता है।

टेस्टोस्टेरोन (Testoseron) के असाधारण प्रयोग-हम पीछे टेस्टोस्टेरोन का उल्लेख कर आए है, यहां उसके असाधारण प्रयोगों का भी वर्णन देते हैं।

(१) विशूचिका जन्य मूत्रमयता (Uraemia)-इसमें २५ से ५० मिलिग्राम तक प्रतिदिन देते हैं, इसके प्रयोग के कुछ घण्टों के बाद मूत्र का उत्पादन आरम्भ होकर मूत्र आने लगता है और रक्त में मूत्र वस्तु का अभाव होने लगता है।

(२) नवजात शिशुओं में जिनका शरीर-भार अपेक्षा कृत कम होता है, उनको यह देकर अनुभव कर लिया गया है कि उनका शरीर-भार बहुत जल्दी स्वाभाविक दशा पर आ जाता है, उनको या तो ५ मि० ग्राम (Methyl Teststoerone) मुख द्वारा या ४ मि० ग्राम ही मांसान्तर्गत विधि से नित्य दिया गया था।

(३) छाती के दुष्टव्रण (Cancer) में यद्यपि यह पूर्ण निरोगिता प्रदान नहीं करता, फिर भी लक्षणों में बहुत कुछ न्यूनता हो जाती है।

(४) स्त्रियों में इसका अधिक काल तक प्रयोग करने पर उनकी कुछ चेष्टायें पुरुषों जैसी हो जाती हैं।

(५) कम बढ़े हुए बच्चों को यह देने से उनके भार में, उनकी जननेन्द्रिय के विकास में और उनकी शरीर की लम्बाई में, आशातीत परिवर्तन १ वर्ष तक चिकित्सा करने पर प्रगट होजाते हैं; इसके लिए नई आयु में ही चिकित्सा आरम्भ कर देनी चाहिए।

चुल्लिका या निकण्ठमणि ग्रन्थि Thyroid- गले के पास यह ग्रंथि होती है और जीवन की गति के साथ अपना विशेष सम्बन्ध रखती है। इसका उत्तेजित हो जाना, अथवा क्रियाहीन होजाना अनेकों अशुभ लक्षणों को जन्म देता है, इसमें आयोडीन Iodine नामक रसायन निर्मित होकर शरीर में मिलती रहती है, इसके अभाव में आयोडीन का भी प्रयोग किया जाता है, जब यह अत्यधिक क्रियाशील हो जाती है तो इसको कभी-कभी निकलवा देने की भी आवश्यकता पड़ जाती है। इसके निम्न योग अधिक प्रचलित हैं।

थायराक्सीन सोडियम (Thyroxine sodium)-यह उसी हेतु प्रयोग किया जाता है जिस लिए थायरायड (चुल्लिका) का प्रयोग होता है। और जब थायराक्सीन को प्रयोग करना हो तब उसका सोडियम वाला योग ही प्रयुक्त करना चाहिए। यद्यपि यह मुख द्वारा भी लाभ कर सकता है परन्तु इसको प्रयोग करने की साधारण विधि शिरा द्वारा ही है। प्रत्येक रोगी में एक अलग मात्रा निर्धारित करनी होती है। साधारण व्यक्ति में १।३० ग्रेन प्रतिदिन अपना प्रभाव शीघ्र व्यक्त कर देगी, माईक्साक्सीडीमा (एक प्रकार का शोथ जो श्लेष्मा सदृश्य दिखाई देता है) के रोगियों को प्रतिदिन १।४० से १।३० ग्रेन की आवश्यकता पड़ती है। इसका प्रयोग बौनेपन Critinism माईक्साक्सीडीमा (शोथ) तथा गले के घेघड की प्रारम्भिक दशाओं में इसका प्रयोग होता है।

मात्रा-१।६४० से १।४४ ग्रेन तक की मात्रा प्रति दूसरे-तीसरे सप्ताह एक बार देनी पर्याप्त होती है। और यह शिरा द्वारा प्रयुक्त करनी चाहिए।

इसे कभी कभी गर्भपात की आशंकाओं में, दूध बढ़ाने के लिए, शोथ दूर करने के लिए इसके मूत्र प्रभाव को काम में लाते हैं, तीव्र, एवं जीर्ण प्रदाह, तीव्र कण्ठ शालूक, बी. कोलाई का संक्रमण रजोनिवृत्ति के अवसर पर होने वाली मस्तिष्क सम्बन्धी उन्माद जैसी अवस्था में, उसी समय के शिर-शूल में, घेघड़, खाज, खुजली, लाल-लाल चकत्ते पड़ना एक्जीमा, तथा कभी-कभी गंज के स्थान पर घने बाल भी इसके प्रयोग से पैदा हो जाते हैं। मोटापे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को दूर करने के लिए इसका अत्यधिक प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी इस ग्रंथि के कम स्राव होने की दशा में Hypothyroidism में जीर्ण कब्ज रहा करता है तब इसकी अल्प मात्रा देने से आश्चर्यजनक लाभ हो जाता है।

इसको उन बच्चों में प्रयोग करके देखना चाहिए जो बढ़ने में पीछे रह जाते हैं, रात को पेशाब चारपाई पर कर बैठते हैं, या डरते हैं, इत्यादि।

सदैव इसको प्रयोग करने से पूर्व निम्न दशायें देख लेनी चाहिए अन्यथा इसका प्रयोग हानिकर प्रमाणित होगा।

(१) जब चुल्लिका ग्रंथि का स्रावाधिक्य हो, या जब अधिक मात्रा में यह ग्रंथि के इन्जेक्शन देने पर विषैले लक्षण प्रगट होगए हों।

(२) निद्रानाश, बकवास, मस्तिष्क सम्बन्धी उत्तेजनाएँ हो रही हों।

(३) जब हृदय की गति तीव्र हो तथा उत्तेजित हो।

(४) त्वचा की तीव्र शोथ युक्त दशा हो और शरीर का भार कम हो रहा हो।

ऐसी दशाओं में इसको प्रयोग करने से संकट पूर्ण दशायें उपस्थित होजाती हैं।

थायराक्सीन Thyroxine (B. D. H.)– यह थायराक्सीन सोडियम के समान गुणकारी औषधि है जिसका प्रयोग मीक्सीडिमा (शोथ), बौनापन और चुल्लिका के स्राव की कमी में प्रयुक्त होता है।

प्रयोग– मुख के अतिरिक्त शिरा द्वारा और अवस्त्वगीय विधि से भी इसका व्यवहार ०·१ से १ मिलिग्राम तक प्रयोग होता है।

थायरोप्रोटीन Thyro-Protein– यह थायराईड ग्रन्थि (चुल्लिका) में से निकाली गई प्रोटीन का शुद्ध-रूप है, और वर्णित थायराक्सीन की तरह गुणकारी है। और उन्हीं रोगों में प्रयोग की जाती है जिनमें चुल्लिकासार का प्रयोग होता है। इसको अधस्त्वगीय विधि से दिया जाता है।

चुल्लिका रहित भेड़ का रक्तरस (Serum of thyroidectomised sheep)– भेड़ों के बच्चों की चुल्लिका ग्रंथियां निकलने के ६ सप्ताह बाद इनका रक्तरस लेलेते हैं, और उसमें ०.५ प्रतिशत फीनाल मिला देते हैं ताकि वह खराब न हो. इसको प्रयोग करने से रोगी को नींद आने लगती है, शांति हो जाता है, और शरीर भार बढ़ने लगता है घेघे की शोथ भी कम होने लग जाती है। प्रत्येक रोगी में इसकी मात्रा अलग-अलग होती है। अधिक प्रयोग करने से चुल्लिका में हीनावस्था Athyroidism के लक्षण पैदा हो जाते हैं जैसे हलकी शोथ, शिरःशूल, भोंदूपन इत्यादि।

प्रयोग— यह मुख द्वारा दिया जाता था, अब मांसगत इन्जेक्शन से अधिक लाभ होते देख इसे मांसगत विधि से ही देने का विधान है। इसके लिए लगभग १ सी. सी. के २० इन्जेक्शन देते हैं। तीव्रावस्था में ३० इन्जेक्शन तक दिए जाते हैं। पहले पन्द्रह दिन तक रोजाना १ सी. सी. का एक इंजेक्शन, फिर प्रति तीसरे दिन १-१ सी.सी. देते हैं।

थायरोलीटिक सीरम Thyrolytic serum– (चुल्लिका के सार को निष्क्रिय करने वाला सीरम) यह घेघे के रोगियों की चुल्लिका ग्रन्थि से निर्माण किया जाता है और अधिक तीव्र होता है, अतः बहुत सावधानी से मनुष्य को देना चाहिए। इसकी मात्रा देने से चुल्लिका ग्रन्थि से निकलने वाला स्राव निष्क्रिय होजाता है। निष्क्रिय करने वाली औषधि साइटोटाक्सिन इसमें होती है।

मात्रा—अत्यल्प १ सी. सी. तक कभी-कभी मांसगत विधि से।

इस ग्रंथि के अन्य योग भी इन्हीं गुणों से युक्त होते हैं, उनके नाम निर्माताओं ने अवश्य ही भिन्न-भिन्न रखे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेराथायरायड उपचुल्लिका ग्रंथि (Parathyroid) यह चुल्लिका ग्रंथि के ऊपर होती है और इसका गुण विशेष कर शरीर में रक्तस्थ चूने के परिमाण और मात्रा का नियन्त्रण करता है। इस ग्रन्थि का सार पेराथोमोन का शरीर में इन्जेक्शन देने से रक्त का कैलशियम (चूना) बढ़ जाता है यह चूना रक्त में अन्य अवयवों जैसे अस्थि इत्यादि से खिंचकर आजाता है अतः अस्थियां कोमल होजाती हैं।

यदि इस ग्रंथि को निकाल डाला जाय तो टीटेनी (बच्चों का रोग जिसमें हाथ-पैर में कम्प होने लगता है इत्यादि) और स्नायुविक उत्तेजना अधिक बढ़ जाती है। रक्त तरल चूने का परिमाण १० से ८ या ६ तक गिर जाता है।

इसके अतिरिक्त यह मूत्र में फास्फोरस का निकास बढ़ाती है. इसके अधिक प्रयोग से चूने की मात्रा रक्त तरल की प्रति १०० सी. सी. में १० से १२ या २० मिलीग्राम तक बढ़ जाती है, तब वमन, भूख की कमी, अतिसार, रक्तभ्रमण में अनियमितता, भारीपन, सन्यास, मांसपेशी का ढीला होना, तथा स्नायु नितान्त सुप्त होजाते हैं। हृदयगति सुस्त होकर, उदरस्थ अंगों का रक्तपरिभ्रमण बढ़ जाता है। आंतों की गति भी बढ़ जाती है इस कारण मूत्र अधिक आता है। अतः इसको कभी-कभी मूत्रावरोध में देते हैं।

इसका प्रयोग पक्षाघात, प्रसवोपरान्त विषमयता मृगी, शिर.शूल इत्यादि में १.१० ग्रेन तक होता है। चूने के प्रयोग के साथ साथ इसे प्रयोग करने से अतिसार में विशेष लाभ होता है।

इसको जब भी दिया जाय हमेशा रक्त में चूने की मात्रा की नाप करते रहना चाहिये। इसके प्रयोग निम्न हैं—

पेराथ्रोमोन (Parathromone)-यह उपचुल्लिका ग्रंथि का सत्व है और अम्लीय प्रतिक्रिया वाला होता है, इसको उपरोक्त रोगों में देना चाहिए, विशेष कर tetany रोग में यह सफलता पूर्वक दिया गया है।

मात्रा— २० से ४० यूनिट तक मांसगत विधि से देना चाहिये। प्रायः १ सी.सी. २० यूनिट के बराबर होती है। आवश्यकता पड़ने पर २४ घण्टे बाद पुनः एक बार और दे सकते हैं।

पेरायडीन Paroidine— यह भी उपरोक्त की तरह है, और २० यूनिट तक प्रयोग की जाती है। प्रयोग विधि गुण सब उपरोक्त की तरह हैं।

अन्य उपचुल्लिका के योग भी हैं जो विभिन्न नामों से मिलते हैं, इनके गुण समान रूप से उपरोक्त की तरह ही हैं।

सुप्रारीनल (Suprarenal) (उपवृक्क ग्रंथि)— इसकी कमी प्रायः उन सभी लक्षणों को जन्म देती है जिसमें एड्रीनलीन व्यवहार की जाती है, अतः इसके निम्न प्रयोग प्रायः प्रचलित हैं।

(१) पर्कोर्टिन Parcortin—यह उन सभी लक्षणों में जो उपवृक्क के स्राव की कमी के कारण होजाते हैं सफलता के साथ व्यवहार में लाया जाता है। जिसके लक्षण ये हैं। शरीर का भार कम होना, भूख की कमी, अत्यन्त दुर्बलता होजाने पर, रक्तचाप कम हो जाने पर, मुक्त शर्करा, कार्बो-हाईड्रेट के न पचा सकने पर, रक्त में लवणता अधिक होजाने पर, गर्भिणी के द्वितीय या तृतीय मास के मानसिक विकारों में, अग्नि दग्ध अथवा आप्रेशन के बाद आघात में तथा अन्य ऐसे रोगों में इसका प्रयोग अत्यन्त सफलतापूर्वक होता है।

मात्रा— यह तैल में बनाया हुआ योग होता है अतः जाड़ों के दिनों में इसको प्रयोग पूर्व कुछ गरम करके पतला कर लेना चाहिए, मात्रा उसकी ५ मिलीग्राम तक है, जो मांसपेशी में गहरा इन्जेक्शन लगा कर प्रयोग करना चाहिए।

सुप्रारीनल कार्टेक्स (Suprarenel Cortex)—

गुण—यह इस ग्रंथि के कार्टेक्स भाग का सार है जो प्रति सी. सी. में लगभग ७५ ग्राम कार्टेक्स की शक्ति के हिसाब से होता है। तथा इसमें एड्रिनेलीन या किसी प्रकार का प्रोटीन नहीं होता। इसका व्यव•

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हार एडीसनस रोग (जिसमें अत्यन्त दुर्बलता, वमन, स्नायुबिक दुर्बलता, शिथिलता इत्यादि लक्षण होते हैं) नपुंसकत्व, मांसक्षय, विषमयता, हृदयावसाद Collapse, जल जाने पर बिषमयता उत्पन्न होने पर इसका प्रयोग सफलता से किया जाता है।

मात्रा–प्रतिदिन १ से २० सी. सी. तक मांसान्तर्गत, शिरान्तर्गत तथा अधस्त्वगीय विधि से इसका प्रयोग करना चाहिए।

इसचेटिन (उपवृक्कसार) Eschatin (Sup. Renal Cortex ext.)-यह भी उपरोक्त वर्णित Suprarenal Cortex के सार की तरह गुणयुक्त और प्रयुक्त होता है, अन्तर केवल यही है कि यह पार्केडेविस कंपनी का बना हुआ है, और वह B. D. H. कम्पनी का। तात्पर्य यह कि किसी भी निर्माणशाला का हो गुण सभी के लगभग एक से होंगे।

लिवर एक्सट्रेक्ट (यकृतसार) Liver Extr ct–

यह शरीर में सबसे बड़ी ग्रंथि है, इसका प्रयोग आजकल अत्यधिक हो रहा है, सबसे अधिक गुण इसका रक्तहीनता में होता है, जब रक्त में रक्तकणों की कमी हो जाती है। इसका प्रयोग इन्जेक्शन द्वारा तभी प्रायः किया जाता है जब मुख द्वारा दिए जाने वाले यकृतसार को आंतें गृहण नहीं कर पातीं, या उनके अन्दर अन्य जीवाणुओं की उपस्थिति हो जिससे आंतें यकृतसार को चूसने में असमर्थ हों। ऐसी दशा में यकृतसार इन्जेक्शन द्वारा प्रयोग करने पर विशेष लाभप्रद सिद्ध होता है।

रक्तहीनता की दशा के अतिरिक्त इसका उपयोग विविध प्रकार मल्ल तथा विस्मथ के योगों से उत्पन्न विषैले लक्षणों को नष्ट करने के लिए, तथा इन योगों के उपरांत उत्पन्न त्वगसम्बन्धी पिडक ओं को शान्त करने के लिए होता है। जब रक्त में जमने की शक्ति अधिक हो जाती है तब भी इसका प्रयोग करते हैं) यकृत शोथ Cirrhosis of Liver में भी यह प्रयुक्त होता है, और यह धारणा है कि इसके प्रयोग से रक्तस्राव रुक जाता है, तथा अर्शांकुर और जलोदर नष्ट हो जाते हैं।

इसके प्रयोग से चूंकि रक्तचाप न्यून हो जाता है, यकृतसार का प्रयोग धमनी काठिन्य Arterio-Sclerosis की चिकित्सा के लिए किया जाता है। यकृतसार में विटामिन बी विशेषकर अधिक होता है, कुछ मात्रा लौह की भी इसमें पाई जाती है।

वैसे इसको मुख द्वारा देते हैं, परन्तु जब दशा शोचनीय हो तब उसको मांसगत या अति तीव्रावस्था में शिरान्तर्गत विधि से दिया जाता है। पर शिरा द्वारा देने पर कभी-कभी अनिष्ट लक्षण प्रगट हो जाते हैं अतः सावधानी की आवश्यकता है। कभी-कभी इसके प्रयोग से निम्न उपद्रव हो जाते हैं, जो प्रतिक्रिया रूप से माने जाते हैं।

पीड़ा, जहां इन्जेक्शन लगाया जाय वहां पर स्थानीय शोथ, रक्तचाप का अत्यधिक गिर जाना, शीतपित्त, अवसाद, श्वासावरोध, एवं सर्वाङ्ग त्वग्प्रदाह Erythema (त्वगारुण्य) यदि एड्रिनलिन का उपयोग तभी अल्प मात्रा में कर दिया जाय तो ये सभी लक्षण नष्ट हो जाते हैं।

यकृत के निम्न योग अधिक प्रचलित हैं—

हीपारिन Heparin– यह केवल रक्त को न जमने देने वाला यकृतसार है और रक्तादान प्रदान Blood Transfusion के समय जब किसी कारण दाता के रक्त की प्रतिक्रिया रक्त जमाने वाली होती है तो इसका १०० इन्ट. यूनिट प्रति किलोग्राम शरीर भार (दाता के) देना चाहिए। तथा रक्त को जमने Thrombosis से रोकने के लिए ७५०० से १५००० यूनिट प्रतिदिन में ३-४ बार के हिसाब से देते हैं।

लिवाडेक्स (Livadex)–यह यकृत का सार है जो रक्तवर्धक माना गया है, और इसकी २ सी.सी. ५०० ग्राम ताजे यकृत के बराबर गुणकारी होती हैं, अत्यन्त रक्तवर्धक है।

इसको प्रतिदिन २ सी. सी. की मात्रा में अभीष्ट परिवर्तन होने तक व्यवहार करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एनाहिमिन (Anahimin)—यह यकृतसार है परन्तु विशेषता यह है कि रोज-रोज इन्जेक्शन लगवाने के झंझटों से रोगी बच जाता है। इसका प्रयोग विविध प्रकार की रक्तहीनताओं और सौषुम्ननाश Degeneration of the cord (Combined) में लाभ करता है।

प्रयोग—मांसगत प्रथम २ सी. सी. लगाकर फिर प्रति चौदहवें दिन लगाते रहें, जब तक कि अभीष्ट रक्त परिवर्तन और रक्त वृद्धि न हो जाय।

४-प्रोथेरीन Protherin—यकृत जन्य रक्तहीनता पाण्डु रोग पर गुणकारी है।

५-लिवोसान फोर्ट Livosan Fort-इस में यकृत और लौह का मिश्रण है। मात्रा १ सी.सी. मांसगत लिवर एक्स्ट्रेक्ट (टी. सी.एफ) अधिकतर व्यवहृत होता है, रक्तहीनता इत्यादि में मात्रा २ सी. सी. प्रतिबार प्रतिदिन की है।

६-पैनलिवरेक्स Panliverex-

७-Zandus Liver Extract, झण्डू द्वारा बनाया हुआ लिवर एक्स्ट्रेक्ट (यकृतसार)

८-Liverex (B. I.) एक सी.सी. इसकी एक पौण्ड यकृतसार के बराबर है। अधस्त्वगीय या मांसान्तर्गत प्रति तीसरे दिन,या आवश्यकतानुसार।

९-क्रिन हीपर Crin Heper

१०-हीपेटेक्स Hepatex (Evans)

११-हीपॉल Hepol

१२-आक्साईड लिवर एक्स्ट्रेक्ट Oxide Liver Extract-२ सी.सी. से ४ सी.सी. तक यकृत जन्य पाण्डु रोग रक्त हीनता में अपूर्व गुणकारी है।

१३-निओ हीपाटोक्स Neo Hepatax मात्रा २ सी.सी. प्रति दिन।

१४-हीपाट्रेट Hepatrat

१५-हिपास्टेब एवं हिपास्टेबफोर्ट Hepastab Fort

१६-सीट्रोट Citroat-मात्रा दो सी.सी.

१७-निओ लिवोकोन Neo-Livacon-इत्यादि

इनका प्रयोग प्रायः मांस पेशीगत ही होता है। जब कभी भी यकृत के रूप का प्रयोग करना अभीष्ट हो तब सदैव अच्छी निर्माणशाला का निर्मित सार व्यवहार करना चाहिये, और जब विशेष कर शिरा द्वारा प्रयोग करना हो तब तो इस बात का विशेष ध्यान रखें।

मांस (मसल एक्स्ट्रेक्ट) सार
(Muscle Extract)

इसके नाम कई हैं। यथा माईयोसिन, लेकार्नोल, सार्कोलान, इत्यादि।

गुण—इसका प्रयोग रक्त परिभ्रमण तथा हृदय जन्य विकारों में किया जाता है। Lacarnol नामक औषधि हृदय के मांस का सार है और यह धमनी को सारित कर देता है, अतः इसका प्रयोग हृदयावरोध Heart Failure हृत्शूल, रक्तचाप, धमनी काठिन्य, इसके अतिरिक्त यह हृदय को बल देता है और लगभग कुछ अंशों में डिजिटेलिस की तरह गुणकारी है। कभी-कभी इन दोनों को मिलाकर भी प्रयोग किया जाता है। इसको चाहे मुख द्वारा दें, चाहे अधस्त्वगीय विधि से।

मात्रा—अधस्त्वगीय विधि से देने पर १ सी.सी. की मात्रा प्रति दिन।

("बृटिश मेडीकल जर्नल" में जुलाई १९३२ में यह प्रमाणित किया गया था कि मांस पेशी से एक प्रकार का सत्व कण रूप में "एडेनोसीन" नाम का प्राप्त किया गया है जो अत्यधिक धमनीप्रसारक गुण युक्त होता है।)

डिहाईड्रोकोलिन (Dehydrocholin)

यह पित्ताशय से निकले पित्त का एक लवण है जिसको ऐसी विधि से बनाया गया है कि इसको यदि मांसगत या शिरागत दिया जाय तो भी हानि रहित है।

[शेषांश पृष्ठ ८०५ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन के इंजेक्शन

(Injection of Vitamins)

आधुनिक विज्ञान ने पोषक तत्वों (Vitamins) जिन्हें जीवनीय तिक्त भी कहा जाता है, असंख्य प्रकार के खोज निकाले हैं, सर्वप्रथम मजब उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में डा० आईकमेन ने यह सिद्ध कर दिया कि मशीन से कुटे चावलों के जीवन तत्व विटामिन नष्ट होजाता, और घातक रोग बेरीबेरी पैदा हो जाता है, यदि वह तत्व इनको दिया जाए तो वह रोग नहीं होने पाता, तब से अब तक निरंतर प्रयत्नों के फल स्वरूप लगभग सत्रह (१७) प्रमुख विटामिन जाने गए हैं, जिनको चिकित्सा के लिए विविध प्रकार से मुख एवं इन्जेक्शन द्वारा प्रयोग किया जाता है। उनको दो भागों में सामान्यतया विभक्त कर दिया गया है। एक श्रेणी विटामिन की जल में घुलनशील है, और दूसरी श्रेणी वसा में घुलनशील है। अतः यह उपयुक्त हो जाता है कि जल में घुलनशील जो भी जीवन तत्व है उनके इन्जेक्शन जल में ही बनाये जांय और वसा में घुलनशील के तैल इत्यादि। अस्तु निम्न विटामिन-सूची हम देते हैं।

श्रेणी 'अ' वसा में घुलन शील
(Fat-Soluble Vitamins)

विटामिन 'ए' या एक्सेरोफथाल
" 'डी' या केल्सीफेराल
" 'ई' या टोकोफेराल
" 'एफ' या लिनोलिक अम्ल की तरह
" वसाम्ल 'के' या फीटोकीनोन

श्रेणी 'ब' जल में घुलनशील
(Water Soluble Vitamins)

विटामिन बी १ या एन्यूरीन या थीयामीन।
" बी २ या लेक्टोफ्लेवीन या रिबोफ्लेवीन।
विटामिन बी ६ या एड्र्मीन या पाइरीडाक्सीन।
निकोटिनिक एसिड या निआसीन, पेन्टोथेनिक एसिड, बीओटीन, मीसो-इनोसिटाल, पेरा-अमीनो-बेन्जोइक एसिड, कोलीन।
विटामिन 'सी' या एस्कार्बिक एसिड
विटामिन 'पी'

इनके प्रथक-प्रथक गुण हैं, जिनके आधार पर इन्हें प्रयोग किया जाता है, इनका विशद वर्णन हमने अपने पूर्वार्द्ध में किया है, यहां केवल गुण, मात्रा प्रयोग विधि ही देंगे, और उन्हीं विटामिन की चर्चा करेंगे जो अधिकतर प्रयोग में आते हैं।

ऐविटा विटामिन ए (Avita Vitamin A)- शरीर में इसका अभाव होने पर संक्रामक रोगों के विरुद्ध शरीर की शक्ति जाती रहती है,तथा इन भागों की अशक्ति के कारण रोगों का संक्रमण हो जाता है, नेत्र तथा कर्ण की श्लैष्मिक-कला, नलिका कण्ठ (Tonsils) लसीका, लाला ग्रन्थियां, मध्य कर्ण एवं शरीर के नासूर, पाचन प्रणाली, मूत्र प्रणाली, जिसमें वृक्क, मूत्र-नलिकायें तथा मूत्राशय सम्मिलित हैं। इनकी शक्ति जाती रहने पर निम्न रोग हो सकते हैं,बेकायदा दांतों का जमना, त्वग्प्रदाह, डिम्ब निर्माण का अनियमित होने से बांझपन,बढ़वार का रुक जाना, अतिसार, अनियमित भूख, पाचन-विकार, रतौंध, नेत्रविकार, त्वचा का शुष्क और सुकड़ा हुआ रहना, मुंहासे, कार्बंकल, जुकाम, इन्फ्लुएञ्जा, कण्ठ प्रदाह, गर्भावस्था के विकार, क्षय, आमाशय का क्षय और व्रण, हेय ज्वर, (Hay fever) प्रसूति ज्वर, मोतिया।

प्रयोग मात्रा- मुख द्वारा एवोलियम के रूप में ४५०० से १३५००इ.यूनिट तक इन्जेक्शन द्वारा एविटा के रूप में १००,००० यूनिट तक मांसगत विधि से। इसकी आवश्यकता युवकों को प्रतिदिन ३००० से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६००० यूनिट तक, गर्भवती स्त्रियों को तथा दूध पिलाने वाली स्त्रियों को ६००० से ८००० यूनिट तक होती है, जो यदि भोजन और दूध से प्राप्त न होसके तो इन्जेक्शन या मुख द्वारा पूरी करनी चाहिए।

विटामिन ए (Vitamin A)

इसके १ सी.सी.के इन्जेक्शन आते हैं, इनका प्रयोग उपरोक्त रोगों पर मांसान्तर्गत विधि से किया जाता है। प्रथम २ इन्जेक्शन देकर ३-७ दिन के अन्तर से दूसरा इन्जेक्शन लगाना चाहिये, फिर साप्ताहिक तीव्र रोग में ६-१० सप्ताह तक चिकित्सा करें।

रेडियोस्टोलियम (कन्सन्ट्रेटेड इन्जेक्शन के लिये) Radiostoleum (concentrated for Injection) गुण इसमें प्रतिग्राम विलियन में विटामिन'ए'७५०००, तथा विटामिन 'डी' ७५००० इन्ट०यूनिट की शक्ति में होते हैं। इसका प्रयोग जुकाम (छाती या नाक का) साधारण जुकाम, इन्फ्लूएंजा, पोषण की कमी, फोड़े फुन्सियां, उदर रोग, दन्त क्षय, अस्थि क्षय, शरीर की अस्थियों का बेढंग बढ़ना, निमोनियां, काली खांसी, प्रसवोपरान्त होने वाली विषमयता, आमवात, फुफ्फुस-राग, रक्त ज्वर, कण्ठ प्रदाह, गर्भिणी की रक्त विषमयता, तपेदिक, स्थाई हल्का ज्वर, आक्षेपक ज्वर, एवं विटामिन ए और डी के अभाव से होने वाले रोग में यह सफलता के साथ व्यवहृत होता है।

चूंकि दोनों विटामिन तैल में घुलने वाले हैं, अतः इनका विलियन स्वाद रहित तैल के माध्यम पर बनाया गया है।

प्रयोग मात्रा—इसी का एक प्रकार मुख द्वारा भी प्रयुक्त होता है, और यह प्रकार जो इन्जेक्शन के लिए है मांसान्तरगत विधि से १-२ सी. सी. की मात्रा में प्रतिदिन प्रयोग किया जा सकता है।

रेडियोस्टेरिन Radiosterin (B. I.)- यह उन्हीं गुणों के लिए प्रयुक्त होता है जिनके लिए अन्य विटामिन 'ए' और 'डी' के योग प्रयुक्त होते हैं। इनको मुख अथवा इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त करते हैं, पर इन्जेक्शन द्वारा देने के लिए केवल जिनको इन्जेक्शन देने की आज्ञा हो, वे ही प्रयोग में लें।

यह प्रति तीसरे पांचवे दिन अन्तस्त्वगीय या मांसान्तर्गत विधि से देते रहें।

अन्य योग—

रेडियोस्टाल, एवीडाल, विगान्टोल, ईराडाल इत्यादि के समान गुणकारी योग उपरोक्त हैं। इसी प्रकार 'ए' विटामिन के अन्य योग भी विविध निर्माणशालाओं के आते हैं उनके गुण भी उपरोक्त की तरह हैं।

अन्य योग—

ऐडविम Advim (Hering kent)- यह भी विटामिन 'ए' और 'डी' का मिश्रित योग है और इसकी प्रत्येक एम्पुल में विटामिन 'ए' ६००००, तथा विटामिन 'डी' १०००० यूनिट तक होते हैं। प्रयोग एवं मात्रा उपरोक्त योगों के समान—

ओस्टेलिन (Glaxo), (१००००० यूनिट प्रति सी. सी. कीएम्पुल में आता है)।

डीकाडेक्सोलीन, एडेक्सोलीन, एल्फालिन, एवीमिन, इत्यादि सब विटामिन ए, तथा ए और डी के योग हैं, गुण पीछे वर्णित की तरह, प्रयोग भी लगभग उसी तरह।

बायोबीटा (विटामिन बी.) Biobita (vitamin B)- यह अकेला प्रयोग करने पर भी अनेकों महत्वपूर्ण गुणों को करता है। आंतों के कार्य को ठीक

[पृष्ठ ८७३ का शेषांश]

इसके प्रयोग से पित्ताशय से पाचक पित्त का स्राव होने लगता है। यकृत जन्य पित्ताशय सम्बन्धी रोग, जैसे यकृत शोथ, पित्ताशय शोथ, रक्त में पित्त की उपस्थिति होना, पित्ताश्मरी यकृत एवं पित्ताशय शोथ जन्य कामला।

इसके प्रयोग आवश्यकतानुसार मांस-पेशी या या शिरागत विधि से करना चाहिये।

इसी के समान एक योग अन्य भी है जिसे डिकोलीन कहते हैं, गुण प्रयोग लगभग सभी एक से हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करके मल बद्धता निवारण करता है, भूख लगती है और शरीर का पोषण ठीक होता है। बच्चों की बढ़वार होती है, आमाशय एवं आंतों के व्रण ठीक होते हैं, रक्त में जल को कमी दूर होती है, हृदय रोग, बेरी-बेरी रोग के लिए तो यह रामबाण है। स्नायुविक विकार, स्नायु शोथ, शाखागत पक्षाघात, शक्तिहीनता, दुर्बलता, कृशता, शरीर भार की कमी, मांसक्षय, थकान सो रहना, बल का घटना, मधुमेह के विकार, संधि शोथ, आमवात, स्नायुशोथ, गर्भावस्था जन्य वातव्याधि, सामान्य वातव्याधि में अमृत तुल्य है, बेरी-बेरी जन्य बधिरता, शरीरपोषण में न्यूनता, मधुमेह की चिकित्सा का विशेष स्तम्भ यह विटामिन है। राजयक्ष्मा, किसी भी रोग के उपरान्त होने वाली दुर्बलता में, बच्चों के न बढ़ने पर, स्वविषमयता, बच्चों के दस्त, प्रसूति दशा में शरीर पोषणहेतु, गर्भिणी की वमन, गर्भपात, गर्भस्राव की आशंका में, दुग्ध की कमी, रोहिणी जन्य पक्षाघात में, अतिपरिश्रम जन्य थकान में, शल्यकर्मोपरान्त आघात में इसका प्रयोग होता है।

इस विटामिन की शरीर में कमी होने पर कोई विशेष लक्षण उत्पन्न न होकर भी रोगी सा रहता है, वास्तव में रोग कुछ नहीं होता मगर फिर भी भूख नहीं लगती, दस्त होते हैं, हाथ पावों में, कमर में दर्द, कानों में गुंजार सी रहती है, स्नायुशूल, हर समय एक वहम सा रहता है, कब्ज, दुर्बलता आंखों के आगे अंधेरा, चक्कर सा आना, नींद न आने इत्यादि दशाओं में विटामिन बी १ का और 'बी' मिश्रित' का प्रयोग अमृततुल्य लाभ देता है। इसकी साधारण मात्रा ३ मिलीग्राम से ५० मि. ग्राम या अधिक की भी प्रतिदिन रहती है। मुख द्वारा जब यह लाभ न करे तब इसका इन्जेक्शन प्रयोग करना चाहिए।

प्रयोग—इसको अधस्त्वगीय, मांसान्तर्गत, शिरान्तर्गत विधि से जैसी आवश्यकता हो प्रयोग कर सकते हैं।

अन्य योग—

प्लेनाविट बी १ (Planavit B 1) (May & Baker) विटाविन, (Vitabin) वाईविटन, (Viliton) बेरिन, (Berin) (Glaxo), बिनर्वा, (Benerva) (Roche) वाईवेक्स, (vibex) विटालिन एस,(Bitalin S) (Lilly), बीवीमिन, (Bivimin) (C. D. C.), इत्यादि इनके गुण और प्रयोग लगभग एक से ही हैं, थोड़ा बहुत मात्रा का अन्तर है।

विटामिन बी२ (vitamin B.2) इसको रिबोफ्लेविन भी कहते हैं और इसका गुण स्प्रू, अतिसार, संग्रहणी, रक्तहीनता, वृद्धि में विलम्ब होना, शरीर भार का बच्चों में कम होना, संग्रहणी, त्वग्रोगों में, कारण रहित प्रदर रोग में, गर्भिणी के रोगों में, दूध पिलाने वाली माताओं को उस समय के रोगों में, शरीर भार की कमी, वमन, थकान, बालों का गिरना आदि, संक्रामक रोग, आमाशय और आंतों के विकार, तथा शरीर को संक्रामक व्याधियों के विपरीत तैयार करता है। रक्ताल्पता स्नायुविक गड़बड़, विषैली धातुओं इत्यादि जैसे Thallium और थायरोक्सीन आदि के विषों में यह विशेष लाभ करता है, मोतियाबिन्दु, बेढंगी शरीर-वृद्धि, आदि रोगों में इसका प्रयोग सफलता से किया जाता है। होठ के सूजने में भी यह अति उपयोगी है।

इस विटामिन का दूसरा नाम लेक्टोफ्लेविन भी है।

इसको अर्थात् विटामिन बी२ का प्रयोग नेत्र के विविध रोगों में सफलता से होता है।

प्रयोग—२ से १० मिलिग्राम तक (मुख द्वारा) अधस्त्वगीय तथा मांसान्तर्गत विधि से दें।

अन्य योग -

रिबोफ्लेवीन तथा निकोटीना माइड

(Ribofiavine & nicotinamide)

विटामिन बी कम्प्लेक्स

(vitamine B complex)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजकल विटामिन बी के साथ और भी विटामिन को मिलाकर अत्यधिक सफलता के साथ प्रयोग किया जाता है और उस मिश्रण का नाम विटामिन बी कम्प्लेक्स रखा गया है। इसमें निम्न विटामिन का योग सम्मिलित होता है।

विटामिन बी१ थायमीन १० से १५ मि० ग्राम
विटामिन बी. २ रिवोफ्लेबिन ३ से ५ ,, ,,
विटामिन बी. ६ पाइरीडाक्सीन १ से ५ ,, ,,
निकोटीनिक ऐसिड अमाईड ५ से ५० मि० ग्रा०
केल्शियम पेण्टोथिनेट २ से १० मि० ग्रा० तक

इन मात्राओं में कमी और वृद्धि भी होजाती है। इसके साथ साथ कोई निर्माता यकृतसार भी मिला देते हैं ऐसा कोई योग होता होगा जिसमें यकृतसार न हो, नहीं तो सभी में प्रायः होता है। इसका उपयोग आजकल अत्यधिक होता है और निम्न रोगों में विशेषतः व्यवहृत होती है।

बेरीबेरी, साम्रा, स्प्रू, भोजन के पोषक तत्वों के अभाव जन्य रक्तहीनता तथा स्नायुविक उपद्रव जैसे थकान, भूख की कमी, बदहजमी, घबड़ा जाना, मानसिक असमर्थता, दिमागी कमजोरी, ज्वर, मांसपेशी की उत्तेजना जन्य थकान, चुल्लिका कर्माधिक्य Hyperthyroidism, जीर्ण अनिसार, संग्रहणी, अधिक वमन, यकृत रोग, शोथ या सल्फाश्रेणी के औषधि के सेवनकाल में यकृत पर भार पड़ने से विकार आजाना या कुनीन, मल्ल आदि के योग देने से शरीर के तन्तुओं का नाश होना, दूध पिलाते समय की कमजोरी, स्नायुविक शोथ (चाहे मदिरा जन्य हो चाहे गर्भिणी की दशा के कारण हो) शरीर का ढीला पड़ जाना, बाधिरता, कम्प, मांस तथा स्नायु दोनों की अशक्ति के कारण, मांस-पेशियों में ऐंठन होना, होठ का शोथ, मुखपाक, मुंह और कण्ठ में छाले, अफारा, दस्त, त्वचा की शोथ, एकजीमा, प्रदर (श्वेत), गर्भिणी का कलेजा जलना, प्रसवकालीन विषमयता, प्रसवोपरान्त, प्रसवकालीन गर्भाशय की शक्ति बनाने के लिए, बच्चों में हृदय वृद्धि, अनियमित वृद्धि, गंज, बालों का भूरे होजाना, मधुमेह इसके प्रयोग से इन्सुलिन की मात्रा भी कम देनी पड़ती है, कभी-कभी इन्सुलीन की बिल्कुल जरूरत नहीं पड़ती।

प्रयोग मार्ग—इसको सदैव गहरे मांस में (नितम्ब के) २ सी. सी. की मात्रा में प्रतिदिन देना चाहिए, लाभ होने पर प्रति तीसरे, फिर प्रति सप्ताह देना चाहिऐ। कभी-कभी निकोटीनिक के कारण त्वचा में चिंगारियां, चेहरे का शुष्क होजाना हो जाता है तब मात्रा को ठीक करना चाहिए। थोड़ी मात्रा कम कर देने से ये लक्षण नष्ट होजाते हैं।

इसी योग के और भी असंख्य नाम हैं जो नीचे दिए जाते हैं।

बीकोजाईम Becozym (Lilly) विटामिन बी कम्प्लेक्स (Vitamin B Complex (T. F. C.)

कम्प्लेक्स पेरेन्टीरल (P. D.) CombexParenteral, बाईप्लेक्स, बीटाप्लेक्स, बीप्लेक्स इत्यादि।

इन सब की विधि एक है और लगभग एक से ही है। इनके अतिरिक्त अनेकों नाम से यह बाजार में मिलता है। सदैव विश्वस्त निर्माणशाला का प्रयोग करना चाहिए।

विटामिन बी. ६ Vitamin B. 6–इसको पाईरोडाक्सीन भी कहते हैं। बृटिश ड्रग हाऊस इसको पाईरीडाक्सीन के नाम से ही देते हैं। इसके अन्य नाम भी बाजार में मिलते हैं जैसे हेक्साबीटालीन तथा थायाडाक्सीन इत्यादि।

विशेष गुण यह हैं– घबड़ाना Nervousness, निद्रानाश, Acrodynia, मांसपेशियों में ऐंठन, तथा मांस का शुष्क हो जाना; गम्भीर मांसक्षय. तथा Parkin Sonism रोग, इसका विटामिन का विशेष कर्म प्रोटीन और वसा को विश्लिष्ट करके शरीर में खपाना है; यह मांसपेशियों की शक्ति की वृद्धि करता है। गर्भिणी की प्रातःकाल की वमन, जी खराब होना, मांस शैथिल्य तथा क्रियाहीनता में विचित्र लाभ देखा गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयोग- इसका प्रयोग शिरान्तर्गत एवं अधस्त्वगीय विधि से १०-५० मिलिग्राम तक अथवा १०० मिलिग्राम तक होता है। मांसज विकारों में इसको अधस्त्वगीय देने से लाभ शीघ्र होता है।

इस विटामिन के अन्य योगों को भिन्न नामों से बेचा जाता है। गुण सभी के समान हैं।

निकोटिनिक एसिड Nicotinic Acid- निकोटिनिक एसिड अमाईड—निकोटिना माईड विटामिन बी २ की श्रेणी का जीवन तत्व है और विशेषकर पलाग्रा की अमोघ औषधि है। साग्रा के लक्षण हैं-पाचन प्रणाली का विकार, मुखपाक, कण्ठपाक, जिह्वापाक, छाले इत्यादि जिह्वा पर होना, जिह्वा की नोंक लाल और पीड़ायुक्त तथा शोथयुक्त होती है; यही दशा अन्न प्रणाली Oesophagus की भी हो जाती है, त्वचा पर फुंसिया इत्यादि हो जाता हैं, और मानसिक एवं स्नायुविक लक्षण पैदा हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त यह नष्ट कामवासना, मन मरा हुआ रहना, कमजोरी, क्षुधा नाश, मदिरा का मात्य, मस्तिष्क का कुंद रहना; एवं मधुमेह के रोग में भी सफलता से व्यवहृत होती है।

निकोटिनिक एसिड- यह भी उपरोक्त की तरह गुण करती है, और साग्रा, हृत्शूल, श्वास, त्वग्रोग बुद्धिनाश, सल्फा श्रेणी की औषधियों के प्रभाव को नष्ट करने की इसमें अद्भुत शक्ति है, तथा Radiation रोग में प्रयुक्त होती है।

मात्रा- निकोटिनामाईड की शिरा द्वारा ५० से ५०० मिलिग्राम तक प्रतिदिन, तथा निकोटिनिक एसिड की ५० से ५०० मि० ग्राम प्रतिदिन नार्मल सेलाईन या परिस्नुत जल में मिलाकर किया जाता है।

वृकशूल पर प्रयोग- निकोटिनिक एसिड ५० मि० ग्राम लेकर १० सी. सी. परिस्नुत जल में घोल लें और उसको किंचित ऊष्ण करलें, शिरा द्वारा प्रति मिनट १ सी. सी. के हिसाब से लगाते रहें, इन्जेक्शन लगाते ही शूल बन्द हो जाता है। पर यह वृकशूल के कारण की कोई चिकित्सा नहीं मानी गई है, केवल शूल को दूर कर देता है। दुबारा फिर लगा सकते हैं शर्त यह है कि चेहरे की सुर्खी जलन इत्यादि उपद्रव न होने पावें।

अन्य नामों से मिलने वाले योगों के नाम—

निकोटिनिक एसिड, पेलोनिन (Glaxo), निकोटिनामाईड (Lilly), विलाक्सान (Bayer), बिटालिन्स (Eli Lilly), विटोपल (Opil), अधिकतर यह विटामिन गोलियों के रूप में मिलती है—और परिस्नुत जल, या नार्मल सेलाईन में घोलकर प्रयोग की जाती है। वैसे इसको मांसगत विधि एवं अधस्त्वगीय विधि से प्रयोग किया जा सकता है।

सोडियम या कैल्शियम पेन्टोथिनेट- Sodium या Calcium pantothenate- यह भी विटामिन बी श्रेणी में लिया गया है, और इसका विशेष गुण रक्तहीनता, जब रक्त की कमी के साथ-साथ हाथ पैरों में दाह होती हो तब यह अपना कार्य विशेष करता है। अन्य संक्रमण विनाशक तथा, रक्त के श्वेत कणों को बल प्रदान करता है। इसके प्रयोग करते रहने से बाल जल्दी सफेद नहीं होते।

मात्रा प्रयोग—प्रतिदिन १ मिलिग्राम का ८%. का घोल बनाकर नितम्ब की मांसपेशियों में गहरा इन्जेक्शन प्रातः सायं लगभग एक सप्ताह तक करें।

विटामिन सी. Vitamin c.

इसका एस्कार्बिक एसिड एन्टी स्कार्व्यूटिक एसिड, एन्टी स्कार्व्यूटिक फेक्टर भी कहते हैं, इसे सी. विटामिनिक एसिड भी कोई कोई कहते हैं। इसकी प्रति दिन की आवश्यकता बच्चों को ६०० से २००० यूनिट, बड़ों को १००० से ३००० यूनिट तक होती है। इसका १ मिलिग्राम २० यूनिट का माना गया है।

इसका प्रयोग शरीर भार की कमी, शरीर पीला पड़ जाना, दुर्बलता, सांस फूलना, हृदय का अधिक स्पन्दन, मसूड़ों का फूलना सूजना, हड्डियों में दर्द, शारदगत शोथ Extrometics का शोथ; दिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घबड़ाना और अधोत्वक रक्तपित्त होकर लाल लाल धब्बे से हो जाना, हृदय बढ़ जाता है और बढ़ने के अनिष्ट लक्षण व्यक्त होने लगते हैं, उन रोगियों में जिनको नाग का विष Lead Poisioning के लक्षण हों, तथा श्वेत कणों (W. B. C.) की न्यूनता हो जाए, मूत्र में रक्त आना, रीढ़ की हड्डी का शोथ, इत्यादि लक्षण हो गए हों।

यह रक्त को शुद्ध करती है, स्नायुशक्ति वर्धक है, आंतों की गति ठीक करती है, रक्तहीनता, मसूड़ों से खून आना, निमोनियां, काली खांसी, क्षय में इसे दिया जाता है। इसका विशेष और आश्चर्यजनक गुण स्कर्वी रोग में होता है जब मसूड़ों में व्रण होजाए, खून आए और रोगी दुर्बल, और हीन हो जाए, मंथर ज्वर में जब आंतें विषमय Septic हो जाती हैं. इसको प्रयोग कर सफलता प्राप्त की जा सकती है। बारम्बार होने वाले गर्भपात, शरीर में अभ्यान्तरिक शोथ कहीं भी हो, इसके प्रयोग से अधिक लाभ होता है, आप्रेशन के बाद इसे देने से व्रण अति शीघ्र ठीक हो जाते हैं। श्वास, आंत्रिक व्रण, शीत पित्त, चर्म-रोगों में, मल्ल एवं सल्फा श्रेणी की औषधियों के विष में इसका प्रभाव विषमयता निवारक होता है।

इसको अनेकों नामों से अकेला एवं अन्य विटामिनों के साथ मिला हुआ बाजार से लिया जासकता है। कुछ नाम नीचे देते हैं इनके गुण प्रायः एक से ही हैं।

सीविटा (Hering) सीवीमिन (C. D. C.), सीलिन (Glaxo) रीडाक्सीन (Roche) सेनोविटसी (M. B.) सिवालिन (Roche), इत्यादि विटामिन सी के योग हैं।

प्रयोग विधि—मांसगत या शिरागत इसका प्रयोग ५० मि० ग्राम से ५०० मिलिग्राम तक प्रति दिन कर सकते हैं। इसको अधिक प्रयोग कर देने से कोई हानि नहीं होती।

विटामिन डी. Vitamin D.

यह आरम्भ से अंत तक जब तक जीवन चलता है, एक ऐसा उपयोगी विटामिन है जिसका प्रभाव शरीर के दो प्रमुख रसायनिक द्रव्यों पर पड़ता है। इसकी अनुपस्थिति में चूना और फास्फोरस Calcium Phosphorus का आत्मीकरण असम्भव एवं अनियमित हो जाता है। जिनको विटामिन डी युक्त भोजन खाने को नहीं मिलते उनको इसका प्रयोग करना चाहिये। इसकी कमी हो जाने पर समस्त शरीर क्षय की ओर चल पड़ता है, अस्थियों के रोग बहुविधि दुर्बल बनाने वाली व्याधियां आ घेरती हैं।

इसके चार भेद माने गए हैं,डी१,डी२,डी३,डी४, लगभग सभी के गुण समान रूप से एक से ही हैं।

इसका मुख्य प्रयोग फक्क रोग Reckets, आक्षेपक रोग, अस्थि मज्जा प्रदाह, विकार युक्त अस्थिवृद्धि,दंतक्षय Dental Caries, Marasmus मसान, सूखा रोग, चूने की कमी Calcium Dificiency संधि प्रदाह, अस्थि शोथ, आंतों के रोग, बालकों के दांत निकलते समय के रोग, अस्थि भग्न होकर जब उनके मिलने में विलम्ब होरहा हो, रक्तरोग, जब गर्भावस्था हो और उसके उपरान्त शिशु को दूध पिलाना पड़े तब चूने की कमी हो जाती है, ऐसे समय में चूने की मात्रा का नियन्त्रण करना अत्यावश्यक है। क्षय रोग में इसका अत्यन्त व्यवहार चूने के योग के साथ होता है इसकी कमी के कारण बच्चों का विकास रुक जाता है, शरीर में गया हुआ चूना आत्मीकृत नहीं होता।

इसकी दैनिक आवश्यकता बच्चों को ४०० से १००० यूनिट तक,बड़ों को ३०० से ६०० यूनिट तक। इसका पर्याय केल्सिफेराल है।

प्रयोग—अधस्त्वगीय विधि से देते हैं।

इसका प्रयोग उपरोक्त रोगों के अतिरिक्त चूने और फास्फोरस के आत्मीकरण के लिए,चूने Colloid

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Calcium के साथ इसका व्यवहार आजकल बढ़ चला है, इसका आश्चर्यजनक प्रभाव दमा श्वास, रक्तस्राव, क्षय, शिरःशूल, नाक से अधिक पानी आना, जुकाम, खांसी, शीतपित्त (इसमें तो यह जादू की तरह काम करता है) हृदय का स्नायुविक शोथ, अनेकों त्वचा के रोगों में तथा सामान्यरूप से यह शारीरिक बल प्रदान करता है और क्षय की चिकित्सा का प्रमुख साधन है।

विटामिन डी के अन्य योग जिनके गुण और प्रयोग विधि मात्रा इत्यादि समान से ही हैं। डिल्टालिन (Lilly) आस्टेलिन (Glaxo) डिविटा (Hering), डोबिमिन (c. d. c.) विटामिन डी, इत्यादि और भी अनेकों नामों से विटामिन डी बाजार में मिलता है। सभी के गुण लगभग उपरोक्त की तरह हैं।

विटामिन ई Vitamin E-

यह विटामिन वास्तव में डी·ए·टोको· फेराल एसीटेट है और इसका प्रभाव तीन बातों पर विशेष होता है, जिनमें मांस निर्माण, स्त्री एवं पुरुष के जनन-सम्बन्धी समस्या पर और अमृतपिण्ड के ऊपर भी इसका कुछ प्रभाव पड़ता है। इसकी कमी होजाने पर शरीर में निम्न लक्षण पैदा होजाते हैं-मांसशैथिल्य, मांस का अपूर्ण विकास, गर्भपात की आशंका होना, स्नायुविक एवं मांसजन्य विकार, मस्तिष्क भेजे का मुलायम हो जाना, त्वचा द्वारा रक्त तरल अधिक स्रवित होना, साथ में त्वगधस्थ वसा भी बाहर आती रहती है, इस विटामिन की कमी के कारण डिम्बग्रंथियां और चुल्लिका ग्रंथि अपना काम बहुत कमी से करने लगती हैं, पुरुषों में रति शक्ति की कमी हो जाती है, बांझपन को यह दूर करता है।

इसकी दैनिक आवश्यकता बच्चों को १·३ मिलीग्राम, बड़ों को ३·६ मिलीग्राम, गर्भिणी को ६ से २५ मिलिग्राम तक की जरूरत होती है।

इसके योग पेरामिन (Hering), इफीनाल, (Roche), जोलसील्स (Lilly) ईविमिन (C. D. C.) इत्यादि।

विटामिन के Vitamin 'K'-

इसके दो प्रकार हैं के१, तथा के२। दोनों के गुण लगभग एक से हैं। विशेष गुण रक्तस्थापक, रक्तस्राव रोधक, तथा रक्त· जमने की अवधि और गुण बढ़ने वाले हैं, इस विटामिन को शरीर में खपाने के लिए आमाशय में पाचक पित्त का होना नितान्त आवश्यक है। जिन व्यक्तियों को पित्ताशय एवं पाचकपित्त सम्बन्धी रोग होते हैं उनके शरीर में इस विटामिन की कमी रहती है, इसका विशेष उपयोग शरीर में प्रोथ्रोम्बीन की कमी हो जाने के कारण रक्तस्राव में होता है, यह कामला की मुख्य औषधि है। यकृत शोथ, यकृत क्षय, पाचक पित्त मार्ग अवरोध होने के कारण होने वाले कामला पर यह विशेष प्रभाव करता है। नवजात के अन्दर इस विटामिन की कमी पर भी इसका प्रयोग किया जाता है, अतिसार संग्रहणी में यह लाभ करता है।

विधि एवं मात्रा-प्रतिदिन ५ से १० मिलीग्राम मांसान्तर्गत विधि से प्रयुक्त होता है।

इसके योग-प्रोकेविट (B. D. H.) सिंकाविट (Reche) सिन्कामिन (P. D.), मेनाडिओन (Lilly) इत्यादि गुण इनके समान हैं।

विटामिन पी Vitamin P.-

यह विटामिन सी की तरह गुणकारी होते हुए विटामिन के की तरह भी गुण करता है। इसके प्रयोग से रक्तस्राव शीघ्र बंद होजाता है। इसका प्रयोग स्नायुविक दुर्बलता एवं मांस का शैथिल्य दूर करता है।

मात्रा प्रयोग-इसका प्रयोग शिरामार्ग द्वारा होता है, मात्रा १ ग्राम प्रतिदिन।

(शेषांश पृष्ठ ८८२ पर देखिये)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोलायडल इंजेक्शन

(Colloidal Injection)

कोलायड रूप में दिये जाने वाले इंजेक्शनों का वर्णन हमने पीछे कर दिया है। इस विधि में एक शुष्क धातु को लेकर बिजली द्वारा उसके इतने सूक्ष्मतम भाग किए जाते हैं कि फिर वह भाग जब पानी में घोला जाता है (यद्यपि वह पानी में घुलता नहीं) तब भी उसके कण एक विशेष सिद्धान्त के अनुसार प्रथक-प्रथक रहते हैं और घुले रूप में वे एक विलियन सा प्रतीत होते हैं। इस विधि द्वारा अनेकों धातुओं के इन्जेक्शन बनाए गए हैं जिनका विवरण हम नीचे देते हैं।

कोलायड आर्सेनिक (मल्ल-संखिया के कोलायड)

यह संखिए का शुद्ध घोल होता है जिसमें संखिया ०·१ प्रतिशत शक्ति या १:१००० शक्ति में घुला होता है। इसका विशेष प्रयोग उपदंश तथा उन अवस्थाओं में और रोगों में किया जाता है जहां मल्ल को देने का विधान है। मल्ल पर लिखा पिछला विवेचन पाठक देखें।

मात्रा—१/२ से २ सी. सी. तक मांस पेशीगत, प्रति ४-५ दिन या सप्ताह में १ बार दें। इसके अन्य नामों से भी यह मिलता है। गुण सबों के ये ही होते हैं।

कोलायड आर्जेण्टम (रजत, चांदी का घोल)
(Colloid Argentum)

यह चांदी का घोल है और ०·०५ प्रतिशत की शक्ति में बनाया जाता है, इसका मुख्य प्रयोग जीवाणु विषमयता प्रसूतिज्वर, जब ज्वर अन्य औषधियों से न छूटे, तब इसको दें। संक्रमण को नष्ट करने के लिए यह एक उत्तम प्रयोग है। यह जीवाणु विनाशक भी माना गया है।

पिछले अध्यायों में आयुर्वेदीय रस, भस्मों के प्रकरण में हमने यह संकेत किया था कि धातुओं की भस्मों के स्थान पर इन कोलायड (अणुवत धातु-पिष्टि के घोल) का व्यवहार कुछ अंशों में किया जा सकता है। यद्यपि (सिलवर ओक्साइड) रजत भस्म के समस्त गुण तो इनमें शुद्ध चांदी का विलियन होने के कारण नहीं आ सकते, परन्तु अधिकांश में उसका अधिक प्रयोग चांदी के स्थान पर करने में मैं समझता हूं कोई आपत्ति वाली बात नहीं है।

रजत के गुण आयुर्वेद में इस प्रकार वर्णित है—

रूप्यं शीतं कषायाम्लं स्वादु पाक रसं सरम्।
वयसः स्थपनं स्निग्धं लेखनं वातपित्तजित्॥
प्रमेहादिक रोगांश्च नाशयत्य चिराद्ध्रुवम्।
गुटिकाऽस्य धृता वक्रे तृष्णाशोष विनाशनी॥
—आ० प्र० अध्याय ३ श्लो० ८३-८४

इसको १ या २ सी. सी. की मात्रा में अधस्त्वगीय या शिरामार्ग द्वारा व्यवहार किया जासकता है।

इनके अन्य योग कोलोसल अर्जेण्टीकम के नाम से भी मिलते हैं।

कोलायड ओरम (स्वर्ण हेम) Colloid aurum-

यह स्वर्ण का घोल है और प्रायः ०·०५ से ०·०१ प्रतिशक्ति अथवा १:२००० से १·१०००० की शक्ति में बनाया जाता है। यह क्षय, तपेदिक, स्नायुबिक दुर्बलताओं, क्लैब्यरोग, दुर्बलता, संक्रामक रोगों, संधिगत, आमवात जन्य शोथ, मृगी, मदिराजन्य स्नायुविक दुर्बलता और नपुंसकता, तथा उपदंश की कुछ अवस्थाओं में इसका प्रयोग होता है। इसके अतिरिक्त निमोनिया, फुफ्फुसीयकला प्रदाह, फक-रोग, बच्चों की कमजोरी, तथा कमेड़े रोग में यह प्रयुक्त होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद में स्वर्ण के गुण

स्वर्णं स्निग्धकषाय तिक्त मधुरं दोषत्रय ध्वंसनं।
शीतंस्वादु रसायनं च रुचिकृच्चक्षुष्य मायुष्प्रदम्।
प्रज्ञावीर्य बलस्मृतिस्वर करं कान्ति विधत्ते ततोः।
संवत्ते दुरितक्षयं श्रियमिदं धत्ते नृणां धारणात्॥
स्वर्णं शीतलं वृष्यं बल्यं गुरुरसायनम्।
तुवरं स्वादु तिक्तं च पाके तुस्वादु पिच्छलम्॥
पवित्रं बृंहणं नेत्र्यं मेधास्मृति मतिप्रदम्।
हृद्यमायुष्करं कान्ति वाग्विशुद्धिस्थिरत्वकृत॥
विष द्वयक्षयोन्माद त्रिदोष ज्वर शोकजित्।
अपक्वमेव संशुद्धं. पक्वं तत्तु रसायनम्॥

यहां हम एक और सिद्धांत और विशेष बात का उल्लेख करते हैं। आयुर्वेद में भस्म (पक्व स्वर्ण) एवं कच्चे सोने (अपक्व स्वर्ण) को सेवन करने का विधान एवं उनके गुणों का उल्लेख दिया गया है। साथ साथ अन्य धातुओं की ओर भी इशारा किया गया है।

पक्वं हेम रसायनं विदुरथा पक्वं तु सद्योविष-
प्रध्वंसिच्चपि बृंहणं कृमिहरं वर्ण्यं ज्वरिभ्यो हितम्।
रूप्याद्येषु विमृश्यवादिमिरूपाद्दोऽस्य पक्वे गुण-
स्ताम्रं चापि विषार्ति हृन्निगदितं वैद्यैरपक्वं ध्रुवम्॥.
—रस पद्धति।

यह विधान मुख द्वारा सेवन करने का है। सभी नहीं तो थोड़े बहुत गुण अवश्य ही इन्जेक्शन द्वारा अपक्व स्वर्ण विलियन के हो सकते हैं।

मात्रा एवं प्रयोग– इसे प्रायः शिरा द्वारा ही अधिक देते हैं, अधस्त्वग देने पर कुछ दाह कर सकता है, मात्रा थोड़ी-थोड़ी करके १ सी. सी. तक ले आवें।

कोलायड ओरो-केल्शियम (Colloid Auro-Calcium)- (खटिक स्वर्ण का मिश्रित योग) इसमें चूने का योग ०.०५% तथा स्वर्ण का योग ०.०१% शक्ति में होता है। यह भी क्षय, फक्क रोग (Rickets) नासारोग, नपुंसकत्व, तथा जहां चूने और स्वर्ण के योग की आवश्यकता हो वहां प्रयोग किया जाता है। शरीर में इसकी प्रतिक्रिया बल कारक होती है।

मात्रा–½ सी. सी. तक, आवश्यकता पड़ने पर अधिक भी देते हैं। शिरागत अथवा गहरे मांस में मांसगत विधि से सप्ताह में दो-तीन बार प्रतिक्रिया के अनुसार।

कोलायड केल्शियम (colloid Calcium)- (चूना खटिक) केल्शियम का वर्णन हमने पीछे कर दिया है, जहां चूने की निराधार रूप में आवश्यकता हो वहां इसको व्यवहार करें। निमोनिया फुफ्फुसीय आवरण में शोथ, फक्क रोग, दुर्बलता, बालकों के दांत निकलने के रोग, स्त्रियों के गर्भिणी तथा

(पृष्ठ ८८० का शेषांश)

अन्य योग इस विटामिन 'पी' के जो विभिन्न नामों से मिलते हैं, समान गुण वाले हैं, नाम निम्न हैं। हेस्परिडिन (Glaxo) विटामिन 'पी' (Crook) विटामिन 'पी' (Prince) विटामिन पी. सी. (Crooks) इत्यादि।

अन्य प्रयोग– विटामिन बी, का प्रयोग मधुमेह की चिकित्सा के साथ करने पर आश्चर्य जनक लाभ करता है, मात्रा ५० मिलीग्राम प्रतिदिन, मांसपेशीगत। विटामिन सी का प्रयोग मंथर में आंत्रिक व्रणों और नेत्र के व्रण, तथा प्रतिश्याय पर सफलता पूर्वक किया जाता है। मात्रा १०० से १००० मिलीग्राम प्रतिदिन। विटामिन डी और Calcium का मिश्रित प्रयोग सूखा, हृदयदौर्बल्य, श्वास, शीतपित्त पर अत्यन्त सफलता पूर्वक, मात्रा २ सी. सी. प्रतिदिन मांसगत विधि से दें। विटामिन के का प्रयोग रक्तस्राव, अत्यार्तव में अत्यन्त सफलता से १० मिलीग्राम तक मांसगत विधि से कर सकते हैं, बच्चों की बढ़वार सम्बन्धी समस्या पर ए तथा डी का मिश्रित प्रयोग मांसगत त्वचागत विधि से करना लाभ देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूध पिलाने की दशा में होने वाली कमजोरी, हृदय का शोथ, श्वास, शीतपित्त, क्षय, रोग पश्चात् दुर्बलता में, गर्भाशय से रक्तस्राव होने में, फुफ्फुस, गुदांकुर, आंत्रिक व्रणों से होने वाले रक्तस्राव में इसका प्रयोग अधिक होता है। यदि इसका प्रयोग और भी आशु गुणकारी बनाना हो तो इसका एक योग विटामिन डी मिला हुआ भी प्रयुक्त होता है।

कोलायड केल्शियम विद विटामिन डी. (Colloid Calcim with Vit. D)- इसके भी उपरोक्त जैसे गुण हैं, पर यह आशुफलप्रद है।

अकेले चूने का योग ०.१% या १:१००० शक्ति से लेकर ०.०५% या १:२००० शक्ति का होता है, उसी में १:२००० शक्ति वाले में विटामिन डी. की प्रचुर मात्रा (५००० यूनिट प्रति सी. सी.) मिश्रण कर दी जाती है, जिसका विशेष गुण इस चूने को समस्त रूप से आत्मीकृत कर देने का होता है।

मात्रा—१-२ सी.सी. मांसपेशीगत अथवा अधस्त्वगीय दिया जाता है। इसके अन्य योगों की नामावली हम पीछे चूने के बयान में दे चुके हैं।

कोलायड केल्शियम विद आयोडीन (Colloid Calcium with Iodine)- इसमें ०.०५% केल्शियम और ०.०५% शक्ति में आयोडीन (Colloid calcium oleate) तथा (Iodo-oleate) के रूप में मिला हुआ होता है।

यह विशेषकर निमोनिया, प्रसूत ज्वर और अनेकों संक्रामक रोगों पर सफलता के साथ प्रयुक्त किया जाता है, इसमें चूना और आयोडीन दोनों के मिश्रित गुण होते हैं। साथ साथ संक्रामक रोग, संधिगत रोग, संधि प्रदाह, आमवात जन्य तथा जीवाणुजन्य संधि प्रदाह, गठिया Gout वातरक्त, चुल्लिका-ग्रंथि की अति कार्याधिक्यता, मोटापा (जो कि चुल्लिका ग्रन्थि के अभाव या क्रिया-हीनता के कारण हो जाय) क्षय तपैदिक, बिगड़े जुकाम की खांसी, (Pleurisy) नासार्बुद एवं गले और हलक के रोगों में, बढ़े हुए टॉन्सिल, कण्ठ शालूक इत्यादि रोगों में सफलता पूर्वक व्यवहृत होती है।

मात्रा-शिरान्तर्गत विधि से, मांसगत ½ सी. सी. तक आवश्यकतानुसार।

कोलायड कुपरम (ताम्बा, ताम्र) (Colloid Cuprum Copper)-यह ताम्र का योग है। इसमें ०.०५% अथवा १:२००० शक्ति में ताम्र होता है। इसका अभ्यान्तरिक प्रयोग तभी करते हैं, जब इसकी प्रतिक्रिया की आवश्यकता रक्त वर्धन हेतु अभीष्ट होती है, ताम्र को रोगी की अन्तिम अवस्था में जब प्राणान्त समय शीत, अवसाद, कास, नपुंसकता, रक्त दोष जन्य रोगों में ताम्र का प्रयोग अभीष्ट हो, शोथ यकृत दशा, कुछ नपुंसकता की दशाओं में प्रयोग होता है।

आयुर्वेद में ताम्र के गुणों का विशद वर्णन मिलता है इसके विशेष गुण संक्षेप में इस प्रकार हैं-

साधारण ताम्र के गुण—

ताम्रं कषायं मधुरं च तिक्तमम्लं च,
पाके कटु सारकं च।
पित्तापहं श्लेष्म हरं च शीतं,
तद्रोपणं स्याछ्लघु लेखनं च॥
पाण्डु दराशों गर कुष्ठ कास श्वास क्षयान्,
पीनस मम्ल पित्तम्।
शोफं कृमिं शूल मयाकरोति प्राहुः,
परे बृंहण मल्प मेतत्॥

सोमनाथी ताम्र के गुण—

तत्तद्रोग हरानुपान सहितं ताम्रं द्विवल्लोन्मितं,
संलीढं परिणाम शूलमुदरं शूलं च पाण्डुंज्वरम्।
गुल्मप्लीह यकृत्क्षयाग्निसदनं मेहं च मूलामयं,
दुष्टांच ग्रहणी हरेद्ध्रुवमिदं श्री सोमनाथाभिधम्॥

कोलायडफेरम् (लौह) Colloid Ferrum- लौह का यह योग है जिसमें लौह १:२००० या ०.०५% शक्ति में रहता है। इसका प्रयोग विशेष कर लौह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अभाव के कारण होने वाली रक्तहीनता की दशा में होता है। यह हरेक प्रकार की रक्तहीनता, चाहे संक्रमण जन्य हो, चाहे आप्रेशन इत्यादि के उपरांत हुई हो, दूर कर देता है। शक्ति हीनता, स्नायुविक क्लैव्यता, योषापस्मार, एवं अनेकों वात-विकारों में दिया जाता है।

साधारण लौह—

लौहं साराह्वयं हन्याद्ग्रहणीमतिसारकम् ।
अर्धं सर्वांगजं वातं शूलं च परिणामजम् ॥
छर्दिं च पीनसं पित्त श्वास माशु क्षयो हति ॥

कान्त लौह—

कान्तायः कामलाशोथ कुष्ठानि क्षय गुल्मकौ ।
अर्शः शूलोदर प्लीहमामवात भवन्दरम् ॥
अम्ल पित्तं यकृत्ताप शिरोरोग हरेद्ध्रुवम् ।
बलं वीर्यं वपुः पुष्टिं कुरुतेऽग्निं विवर्धयेत ॥
गदान् विजयते सर्वान्, कान्त लौहं न संशयः ।

सामान्य गुणाः—

लौहं शीतंसदं तिक्तं मधुरं तुवंर गुरु ।
रूक्षं वयस्य चक्षुष्यं लेखनं वातलं जयेत ॥
कफं पित्तं गरं शूलं शोफार्शः प्लीहापाण्डु ताः ॥
मेदो मेहक्रमीन् कुष्ठं तरिकहं तद्गुणं सहतम् ।
—आ० प्र० ३॥ २०८।

लगभग वही लक्षण हैं। कोलायड फेरम की मात्रा प्रायः १-२ सी. सी. मांसपेशीगत देना चाहिए, कभी शिरा द्वारा न दें। प्रतिदिन या सप्ताह में ३ बार।

कोलायड फेरोमेन्गनीज Colloid ferro Manganese-इसमें लौह ०.०२५ प्रतिशत तथा मेन्गनीज ०. १ प्रतिशत होता है। इसका प्रयोग कार्वन्कल (गूभीर व्रण) पूयोत्पादक जीवाणु (Coccal) एवं शोथोत्पादक जीवाणुओं के संक्रमण को नाश करने के लिए किया जाता है। शरीर में जगह जगह जैसे शिर, कमर, मुंह, हाथ, पांव पर निकलने वाली फुन्सियां, फोड़े, चर्म रोग, प्रमेह, पिडिका तथा नष्टेच्छा, दुर्बलता इत्यादि में विशेष उल्लेखनीय होता है। इसके साथ-साथ रक्तबर्धन गुणयुक्त होने से लौह भी मिश्रित किया जाता है।

कोलायड फेरोक्रूपरम (लौह ताम्र)
(Colloid ferro-cuprum-)

इसमें ताम्र ०.०५ प्रतिशत, लोह ०.२५ प्रतिशत होता है। ताम्र के योग से लौह का आत्मीकरण अधिक होता है,यह विशेष रूप से रक्त हीनता, शोथ, जलोदर, यकृत रोग, पाण्डु कामला, अतिसार इत्यादि जहां लौह और ताम्र के गुणों की मिश्रित रूप में आवश्यकता होती है वहां प्रयुक्त होता है।

मात्रा—१।२ से १ सी. सी. तक मांसपेशीगत (गंभीर) देना चाहिए।

कोलायड आयोडीन Colloid iodine-यह आयोडीन का योग है जिसमें १ प्रतिशत या १:१०० शक्ति में या १:५०००.२ प्रतिशत शक्ति में आयोडीन होता है। यह विशेषकर संक्रामक रोगों, चुल्लिका के कर्महीन अवस्था में, निमोनिया से उत्पन्न कास और प्रसूतिज्वर, प्रसवोपरान्त होने वाले रोगों और उपद्रवों में प्रयुक्त होता है। जहां-जहां आयोडीन का उपयोग हितकर होता है, उन-उन अवस्थाओं में इसे दिया जाता है।

मात्रा—१ सी. सी. से ५-१० सी-सी. तक शिरान्तर्गत विधि से दें।

सावधानी यह रखें कि जब आयोडीन के विषैले लक्षणों का उदय होने लगे तब इसका प्रयोग बंद कर देना चाहिये। जहां-जहां आयोडीन देना हानिकर है वहां वहां इसे कभी नहीं देना चाहिए।

कोलायड मेन्गनीज (Colloid Manganese)-इसमें ०.२५%. अथवा १:४०० शक्ति के रूप में मेन्गनीज होता है, इसका विशेष गुण रक्तरोगों पर पड़ता है, जब कि शरीर पर फुंसियां, फोड़े हो गए हों, प्रमेह पिडिकाओं कार्बन्कल से लगाकर मामूली पाक तक के लिए भी इसका प्रयोग होता है। यह परोक्ष रूप में शरीर को बल भी प्रदान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...रता है। शरीर के अन्दर प्रविष्ट हो जाने के उपरांत इसका प्रभाव अत्यधिक प्रतिरोधक द्रव्यों को निर्मित करने का हो जाता है, जिसके कारण, शरीर अन्य संक्रमणों से सुरक्षित रहता है। व्रणमेह,मुंहासे जैसे रोगों में भी इससे लाभ होता है।

मात्रा—१।२ सी. सी. से २ सी. सी. तक, इसको मांस पेशी में गहरा (नितम्ब प्रदेश में) देना चाहिए।

कोलायड स्टनो मेन्गनीज (Colloid Stenno-Manganese)- यह भी रक्त को शुद्ध करने और उपरोक्त गुणों से युक्त औषधि है, उपरोक्त की तरह युक्त भी होता है, इसमें टीन १:१०००, मेन्गनीज १:४०० की शक्ति में होता है।

मात्रा—१।२ सी. सी. से २ सी. सी. तक मांसपेशीगत।

कोलायड मर्करी सल्फाईड (Colloid Mercury Sulphide) (पारद गंधक युक्त)- यह रस पर्पटी या रस सिंदूर के समान गुणकारी है, इसमें ०.५५. शक्ति में पारद-गन्धक का योग है। आयुर्वेद में जिस प्रकार रससिंदूर अथवा रस कज्जलि का प्रयोग होता है उसी प्रकार इसे भी प्रयुक्त कर सकते हैं उपदंश, उपदंश जनित अन्य विकारों पर इसका प्रयोग होता है, इसको प्रयोग करने पर मूत्र अधिक आता है, अतः शोथ,चाहे वह हृदय जनित हो चाहे किसी भी प्रकार से हो. जल भाग मूत्र द्वारा निकल जाने पर शान्त हो जाता है। बच्चों के दांतों, हरे-पीले दस्तों, हिचकी, शोथ युक्त दशाओं, जलोदर,शोथ, यकृतरोग, तथा उपदंश की प्रत्येक अवस्थाओं में इससे लाभ होता है। बल वर्धक और अनेकों त्वग्रोगों में देते हैं।

मात्रा—२ सी. सी. मांसगत दें, (इसके साथ आयोडाइड कभी न दें) चाहे मुख द्वारा या मिक्चर के रूप में, कभी नहीं देना चाहिए। अन्यथा दाहक प्रमाद उत्पन्न होने का भय रहता है।

पारद की महिमा प्रत्येक वैद्य जानते हैं। पर्पटी जो पारद गन्धक का योग होता है, प्रत्येक रोगी को कल्प कराते समय सेवन कराई जाती है, रस सिन्दूर योगवाही और अनेकों रोगों में प्रचलित हैं।

कोलायड सल्फर (गन्धक) (Colloid Sulphur)- यह गन्धक का योग है और ०.१'/. अथवा १:१००० की शक्ति का होता है। इसका विशेष प्रयोग रक्त-दोष, चर्म रोग, संधि शोथ, वातज विकार आमवात, वातरक्त पर विशेष होता है। जहां जहां गन्धक के सेवन का विधान है वहां वहां इसको देते हैं। वाह्य प्रयोगार्थ इसको चर्म-रोगों पर लगाते हैं और ऐसे रोगों में पानी में डालकर भी स्नान कराते हैं।

मात्रा—१-२ सी. सी. मांसपेशीगत।

आयुर्वेद में गन्धक के गुण इस प्रकार वर्णित हैं—

गन्धाश्माऽतिरसायनः समधुरो ह्युष्णो विपाके कटुः,
कण्डू कुष्ठ विसर्प दद्रु दलनः संदीपनः पाचनः।
आमोन्मोचन शोषणो विषहरः सूतेन्द्र वीर्य प्रदो,
गौरी पुष्पभव स्तथा कृमिहरः सत्वात्मकः सूतजित्॥

तथा— —आ. प्र. २-१३.

गन्धः कटुकस्तिक्तो वीर्योष्ण स्तुवरः सरः।
पित्तलः कटुकः पाके कण्डु वीसर्प जन्तुजित्॥
हन्तिकुष्ठं क्षयं प्लीह कफ वातान् रसायनः॥
—आ. प्र. १-२ १४.

शुद्ध गन्धक गुणाः—

शुद्धोगन्धो हरेद्रोगान् कुष्ठ मृत्यु जरादिकान्।
अग्निकारी महा तुष्णो वीर्य वृद्धि करोतिहि॥
—आ. प्र. २-१५.

इसके अतिरिक्त अन्य भी धातुओं के कोलायड रूप में विलियन मिलते हैं, जैसे विस्मथ और नाग Lead के कोलायड।

कोलायड लेड (नाग) (Colloid Lead)- विशेष गुण-केन्सर की चिकित्सा के लिए होता है। उसका विवरण अधिक यों नहीं दिया गया कि इनका प्रयोग अब, नहीं के बराबर रह गया है। नवीन औषधियों ने इनका स्थान ले लिया है।

लगभग सभी प्रकार के कोलायड के प्रयोग अपनी हल्की प्रतिक्रिया करते हैं, जिसके कारण ज्वर इत्यादि हो सकता है। यदि सावधानी रक्खी जाय और मात्रा का नियन्त्रण ठीक हो तो ये उपद्रव प्रायः नहीं हो पाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेदिक इन्जेक्शन

इस विशेषांक के प्रकाशित होने से पूर्व पाठकों के सन्मुख आयुर्वेद के पत्र-पत्रिकाओं, विशेषकर धन्वन्तरि, विजयगढ़ (अलीगढ़) में आयुर्वेदिक इन्जेक्शनों के प्रति, क्षारों के बने इन्जेक्शनों की अनुपयुक्तता, क्षारों द्वारा इन्जेक्शन बनाए जाने पर गणमान्य विद्वानों के विचारों का आदान-प्रदान हो चुका है, और इस ओर हमारा जो दृष्टिकोण रहा है, वह भी पाठकों के सन्मुख, स्पष्ट रूप से आयुर्वेद शास्त्रों के प्रमाणों सहित, आचुका है। क्षारों के द्वारा बने इन्जेक्शन, यद्यपि बनाने में सरल हैं, परन्तु गुणों में क्षारों के गुण व्यक्तकर्त्ता और हानिप्रद ही माने गये हैं। इस बीच में कोई भी विद्वान क्षारों की उपादेयता इन्जेक्शन रूप में आयुर्वेदीय मतानुसार समझाने में पूर्ण रूप से सफल नहीं हुआ है; क्षारों का वर्णन आयुर्वेद ग्रंथों में जहां भी मिलता है, वहां पर, इसके साधारण गुण दहन, पचन, छेदन, भेदन कर्त्ता इत्यादि आए हैं, और निम्न गुण युक्त क्षार का सेवन माना गया है—

(१) छेदन, (२) भेदन, (३) लेखन, (४) दाहक, (५) पाचक, (६) अत्युष्ण, (७) सर, (८) नपुंसक कर्त्ता, (९) शुक्रनाशक, (१०) दृष्टिनाशक, इत्यादि।

इनका (क्षारों का) प्रयोग भी अन्य मर्मों की तरह शिरा और मांस प्रदेश में वर्जित है।

कुछ ही रोगों में इनका (क्षारों का) प्रयोग प्रशस्त है, अन्यथा बहुत सी दशाओं और रोगों में प्रयोग भी बर्ज्य है।

क्षारों (Alkalies) को कुछ निर्माता अभी तक क्षारोद Alkaloid ही माने हुए थे, और बराबर इसी भ्रम में रहे कि औषधियों के गुण क्षारों में होते हैं, क्योंकि क्षार और क्षारोद उनके लिए एक समान थे, पर क्षार और क्षारोद दो भिन्न द्रव्य हैं।

क्षारों में मूल द्रव्य, जिसका क्षार बनाया जाता है, उसका कोई भी गुण नहीं रह जाता, क्षारों में वनस्पति गुण नहीं होते, यव और यवक्षार के गुणों की तुलना करके देखा जा सकता है, जल जाने के बाद वनस्पति का रस, गुण वीर्य, विपाक नष्ट होजाता (जल जाता) है।

इन उपरोक्त सिद्धान्तों के बल पर यह निर्विवाद, रूप से कहा जासकता है कि क्षारों के बने इन्जेक्शन नितान्त हानिप्रद हैं, और उनसे लाभ की कोई भी आशा नहीं की जा सकती, विस्तृत विवरण क्षारों के सम्बन्ध में आयुर्वेदीय शास्त्रों का मनन करके देखा जा सकता है।

अब स्वरस, क्वाथ, घन सत्व, सुरा सार, Alcoholic ext. एवं Tinctures, अर्थ का व्यवहार आयुर्वेदीय इन्जेक्शनों के निर्माण में होता है, इनके ऊपर पूर्व खण्ड में विवेचना हो चुकी है, यहां पुनः यही कहा जा सकता है कि अभी इनका उपयोग पूर्ण रूप से संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि इनका उपयोग, इन्जेक्शन द्वारा होने पर, हानि-रहित परिणामों का ब्यौरा कम मिल पाया है, फिर भी जो प्रगति इस ओर क्षारों को छोड़ कर अन्य विधियों द्वारा इन्जेक्शन बनाने में की गई है, उसको देख कर हम यही निर्णय कर सकते हैं कि आयुर्वेदिक इन्जेक्शनों का भविष्य उज्ज्वल और आशाप्रद है। इस खण्ड में हमने जो-जो चुने हुए आयुर्वेदिक इन्जेक्शनों के नाम उनका संक्षिप्त विवरण दिया है, वह केवल उतना ही दिया गया है जितना कि पर्याप्त और आवश्यक था, बेकार का निघण्टुओं से लिया हुआ विवरण अनावश्यक प्रतीत होता है। जो-जो नवीन नामों से युक्त इन्जेक्शन निर्माताओं के बनाए हैं उनका भी अन्त में समावेश कर दिया है।

आयुर्वेदिक इन्जेक्शनों के विषय में विविध निर्माताओं से हमारे विचारों का आदान प्रदान हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हा है और हुआ है, कुछ निर्माताओं ने अत्यन्त सौजन्यता से हमारी कतिपय शंकाओं को स्वीकार किया और कुछ ऐसे भी निर्माता हैं जिनकी शंकाओं का समाधान, इन पत्रपत्रिकाओं द्वारा प्रश्न प्रश्नोत्तरी, आक्षेप, एवं उत्तर, आलोचना सम्वाद, समस्या, सिद्धान्तों का विवेचन, लेखों द्वारा होरहा है। इनसे वास्तविकता पर पड़ा हुआ पर्दा धीरे धीरे हटता जा रहा है और जिज्ञासुओं को उपयोगी एवं अनुपयोगी इन्जेक्शन को परखने का अवसर और ढंग प्राप्त हो रहा है। निर्माता भी अब आगे बढ़ रहे हैं, कुछ प्रगतिशीलता अपनाना अपना ध्येय समझते हैं, कुछ केवल इन्जेक्शनों का व्यापार अपना लक्ष्य मान रहे हैं। नीचे हम एक पत्र की नकल देते हैं. पाठकों को इन निर्माताओं की लगन का पता लग जायगा।

"आपका पत्र मिला, एतदर्थ धन्यवाद। आपकी सेवा में सूचीपत्र भेजा जारहा है, साथ-साथ साहित्य भी है। हमने कुल १४ इंजेक्शन आज तक तैयार किये हैं जो पूर्णतया गुणकर हैं और उनका साहित्य भी पूर्ण है, हमने पहले सब औषधियों के तत्वमूल तैयार करके उनकी विविध प्रकार से मात्रा निर्धारित की है, इस कारण हमारे इंजेक्शन कभी भी नहीं बिगड़ते और उनका प्रभाव भी अङ्गरेजी इंजेक्शनों की तरह होता है।"

"हमारा ध्येय गुड़, गोबर, सोंठ, मिर्च के इंजेक्शन बनाकर केवल पानी मात्र एम्पुल में बन्द करके दुनिया को ठगना नहीं है, बल्कि हमारे सामने एक कार्य क्रम है, उद्देश्य है, उसी के अनुसार हम ठीक २ अपना रिसर्च का कार्य कर रहे हैं, हमें पूरी आशा है कि अगले ५ वर्षों में हमारा कार्य दुनिया में चमक उठेगा।"

यह मार्तण्ड फार्मेस्युटिकल्स से आए एक पत्र की नकल है। यदि वास्तव में इनका ध्येय ऊंचा है तो यह कुछ कर भी पांएगे। ऐसी प्रगतियां पारस्परिक सहयोग चाहती हैं, गम्भीरता पूर्वक विचारों का आदान प्रदान ही इनमें वास्तविकता और उन्नति प्रदान करता है। उदाहरणार्थ—

एक लेख लहसुन के इन्जेक्शन पर सन् १९५१ के धन्वन्तरि के एक अङ्क में अत्यन्त सुन्दर रूप से प्रकाशित हुआ है, उस पर श्रद्धा से विश्वास किया जा सकता है, कारण कि प्रयोगकर्ता का अपना अनुभव स्पष्टतया वर्णित है और उसको अन्य वैद्यों ने भी इसी प्रकार प्रयोग करके लाभ उठाया है, प्रयोग इस प्रकार है। रसोन का स्वरस ५-७ बूंद तक १५-२० बूंद परिस्रुत जल मिलाकर रोगी को मांसगत दिया जाता है, उसी से लवेदम श्वास, निमोनियां, वातव्याधि वाले रोगी को लाभ होता है। इसी प्रकार आगे चलकर स्वरस के स्थान पर रसोन का अन्य क्रियाशील भाग भी ग्रहण किया जा सकता है और रसोन से ही पर्याप्त लाभ उठाया जा सकता है। बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी में रसोन, दुग्ध का मिश्रण प्रयोग किया गया ऐसा दृष्टान्त मिलता है और पर्याप्त गुण उठाए गए। कहने का सारांश यह है कि हमको अभी बहुत कुछ इस ओर बढ़ना है. चारों के ही सिद्धांत पर व्यर्थ में अड़े रहने की नीति तभी ठीक होती जब पाश्चात्य एवं आधुनिक सिद्धांत दोनों में से कोई भी चारों के पक्ष में होता। अतएव हम पुनः अपने पाठकों से यही निवेदन और आशा करते हैं कि अपने अनुभव इन सभी आयुर्वेदिक निर्माताओं को परीक्षा के हेतु दें और सहयोग की भावना से इन्हें आगे बढ़ने में प्रोत्साहित करें तथा जो भी त्रुटियां और सिद्धांत विरुद्ध बातें उनके निर्माण में हों उन्हें अवश्य ही निःसंकोच प्रकट कर देना चाहिए परन्तु इस प्रकार प्रकट करने में भी कोसा कासी का व्यवहार कदापि भी नहीं बरतना चाहिए।

इसके पूर्व कि कुछ आगे लिखा जाये यह आवश्यक प्रतीत होता है कि हम नीचे कुछ मोटी-मोटी बातें और लिखें जैसे कि जब वनौषधि ग्रहण की जाए तो उनको समस्त लेने की अपेक्षा औषधि का विशेष भाग ही ग्रहण करना चाहिए तथा ग्रंथों के आदेशानुसार अथवा अन्य मतानुसार यह उपयुक्त मान लेना ठीक ही लगा है। कुछ औषधियों के विषय में चरकादि ग्रंथों में मिलता है कि इन-इनका मूल, फल, पत्र त्वचा इत्यादि ग्रहण करनी चाहिये, पर वहां यही शंका उठती है कि उनका प्रयोग मुख द्वारा, वा गुदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्यादि द्वारा वस्ति कर्म से होता है, इन्जेक्शनों के लिए नहीं, अतः अन्य आधुनिक पुस्तकों के आधार पर यदि देखा जाए तो निम्न प्रकार से औषधि के अंग ग्रहण करने चाहिए।

मूल—शतावर, कलिहारी, लांगली, असगंध, चित्रक, हल्दी, अतीस, बच, खस, कचूर, दशमूल की औषधियां, नागरमोथा, विदारी कदं, कूठ, रसोन, प्याज, मंजीठ, पोहकरमूल, निशोथ, कंदूरी, इन्द्रायण इत्यादि।

पत्र—बिल्व, बांसा, तुलसी, घृतकुमारी, अपामार्ग, धतूरा, हंसपदी, करंज, आक, गूलर, इत्यादि।

पाञ्चांग—पुनर्नवा, दुद्धी, गूमा, सरफोंका, श्वेत, हरी दूब, भांगरा, यवास, काकजंघा, लज्जालु, ब्राह्मी, मकोय, चिरायता, मुर्वा, ताम्बूली इत्यादि।

पुष्प—धाय के फूल, अर्क पुष्प, नागपुष्प, बांसा पुष्प, कुसुम्भ, आम्र पुष्प, इत्यादि।

बीज—वायबिडंग, गोखरू, इन्द्र जौ, अजवायन, अजमोद, पीपल, कालीमिर्च, इत्यादि।

इसी प्रकार बनस्पति का जो भाग अधिक प्रयोग में आता है उसी को ग्रहण करना चाहिए। जैसे त्वचा यानी छाल को ग्रहण करने में उन्हीं वृक्षों की छाल लें जिनका प्रयोग छाल रूप में होता है जैसे, निम्ब, उदुम्बर, शोभाञ्जन, दशमूल त्वक, बेल, करंज, इत्यादि।

औषधियां

अर्जुन—

अर्जुन वृक्ष की छाल से तैयार करें, या तो क्षारोद बनालें अथवा सत्व बनायें, इसकी परीक्षा करें और जब छोटे-छोटे जानवरों पर इसकी क्रिया हृदय पर देख लें तब इसको मनुष्य पर प्रयोग करें, इसके लिए विशेष कोटि निर्धारण की आवश्यकता है, कारण कि यह हृदय पर अपना प्रभाव करती है, बिना Standardisation किये हुए प्रयोग न करें, तभी मात्रा का निश्चय करें।

गुण—जहां-जहां हृत्पत्री Digitalis का प्रयोग होता है वहां-वहां हृदय को बल देने के लिए हृदयावरोध जन्य हृद्रोगों में इसको बहुधा प्रयुक्त करते हैं। डिजिटेलिस से यह अधिक गुणकारी है और साथ-साथ हानिरहित भी।

विधि—यदि तरल सार को जल द्वारा बनाया गया है तो अधस्त्वगीय और मांसान्तर्गत दें, अन्यथा सुराद्वारा बने योग को गहरे मांस या बहुत धीमी गति से शिरा में दें। शिरा में देने से पूर्व इसका प्रभाव शिरा द्वारा देने का भली प्रकार देख भाल लें। क्षार द्वारा बना इन्जेक्शन व्यर्थ है।

अशोक—

स्त्रियों के मासिक सम्बन्धी विकारों, जहां पर अति रक्तस्राव के लक्षण हों, एवं अन्य ऐसे रोगों में जहां पर रक्त अधिक आने के लक्षण हों जैसे गुदा, मूत्र, मुख, योनि द्वारा रक्त आता हो, रक्त प्रदर, गर्भपात, गर्भस्राव, गर्भाशय सम्बन्धी कुछ ऐसे विकार जो ऐसे लक्षणों को जन्म दें. रक्तातिसार इत्यादि में इसको प्रयोग करना चाहिए।

औषधि का घनसत्व अथवा सुरासाधित करके बनायें ताकि इसके प्रभावकारी अंशों का नाश न हो, यदि किसी प्रकार इसके गुणवान अंश नष्ट हो जाएंगे तो औषधि गुणहीन हो जायगी।

साधारण उपद्रवों में, एवं गर्भाशय जन्य विकारों, मूत्र, गुदा सम्बन्धी रोगों में नितम्ब की मांशपेशियों में इन्जेक्शन लगायें।

अपामार्ग—

इसके क्षार का बना हुआ इन्जेक्शन व्यर्थ है। इसको भारत में विविध नामों से पुकारा जाता है और इसका विशेष प्रभाव, मूत्र-संस्थान पर मूत्रकारक होता है, इसी से विविध प्रकार के शोथ में शोथ कारक जलीयभाग को मूत्र द्वारा शरीर से बाहर निकाल देता है। इसके अतिरिक्त जलोदर फुफ्फुसीय कलान्तर्गत शोथ, अन्य अभ्यान्तरिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोथ, हृदय, यकृत,वृक्क विकार जन्य शोथों में इससे लाभ होता है। इन गुणों से युक्त यह औषधि साथ में कभी-कभी गर्भस्राव कारक भी हो जाती है। दाह शीत पित्त, बिच्छू के विष में भी प्रयोग की गई है। प्रदर में लाभ देती है।

लिखने वालों ने जहां इसकी प्रशंसा में अनेकों पृष्ठ रङ्गे हैं, वहां हमको पढ़ने से यही ज्ञात हुआ है कि अधिकांश गुणों का वर्णन इसका निघण्टुओं से लिया गया है, जो कि एक हद तक कुछ कुछ इन्जेक्शन के हित में ठीक नहीं माना जा सकता. जैसे आध्मान को दूर करने का गुण, सो यह गुण मुख द्वारा सेवन करने से ही होता है, गर्भपात करने या शीघ्र प्रसव कराने के लिए इसकी जड़ को कमर में बांधते हैं, बिच्छू के डङ्क इत्यादि में इसको उस दंश स्थान पर लगाते या रोगी को केवल दिखाते हैं। अतः जिन अवयवों पर इसका प्रभाव शरीर में प्रविष्ट होने पर हो और उसका अनुभव किया गया हो वही दिया जाना चाहिए। इसके क्षार को प्रयोग करने की जैसी आज्ञा आयुर्वेद में है, और जिस कर्म के लिए और उसी मार्ग द्वारा इसे वहां प्रयुक्त करना चाहिए, क्षार की अपेक्षा सिद्ध द्रव अथवा इस की सिद्ध सुरा टिंचर (मदर टिंचर) का प्रयोग करने से अधिक गुण पाया जा सकता है। मात्रा-सिद्ध द्रव की १०-१५ बूंद, तक मदर टिंचर की ३-५ बूंद, शेष भाग १०-१२ बूंद परिस्रुत जल की होनी चाहिए। इसके पहिले इन्जेक्शन का प्रभाव देखने के उपरांत अगले इन्जेक्शन का समय और मात्रा निर्धारित करनी चाहिए। इंजेक्शन मांसगत लगाना ठीक होता है।

शरपुंखा—

सरफोंका—इसको लीहा-खस्त्रु भी कहते हैं। प्लीहारोग में जब प्लीहा बढ़ी हुई हो, मूत्र कम उतरता हो, तभी इसे प्रयोग करते हैं, ऐसी दशा में जब वृक्क शोथ युक्त हों, रोगी दुर्बल हो, हृदय को शोथ हो और कोई हृदय का रोग हो, तो इसे न दें, यदि दें, तो अत्यन्त सावधानी से, औषधि उग्र है और सम्भव है कोई उपद्रव पैदा करे, इसके क्षार की अपेक्षा इसका मदर टिंचर बनाकर अथवा तरल सत्व का प्रयोग करें, शरपुंखा में एक द्रव्य ऐसा होता है जो प्रयोगोपरांत निरन्तर अपनी जलन बनाए रखता है, क्षार निर्माण करने के उपरांत वह द्रव्य जल जाता है और क्षार इन्जेक्शन द्वारा प्रयोग करना व्यर्थ सा ही होता है।

इसका अधस्त्वगीय इन्जेक्शन अधिक दाहकारक होगा, अतः गहरे मांस में इंजेक्शन लगाना चाहिए। इण्ट्रावीनस लगाने का साहस नहीं करना चाहिए यदि इन्जेक्शन स्वरस, या सिद्ध द्रव से निर्मित किया गया है। मात्रा भी अपेक्षाकृत ४-१० बूंद सिद्ध द्रव की होनी चाहिए। जो कि रोगी के बलाबल और रोग दशा पर निर्धारित करके प्रयुक्त होनी चाहिए।

इन्द्रयव—

इन्द्रजौ, कुटज के फूल का बीज है और उन्हीं दशाओं में विशेषकर प्रयुक्त होता है जहां कुटज को देते हैं। यह अत्यन्त कटु लता है, अतः थोड़ी मात्रा और साधारण मांसगत विधि अपनानी चाहिए। एलोपैथी की इमेटीन नामक द्रव्य के स्थान पर कुटज और इसका प्रयोग करके लाभ उठाया जा सकता है। इसका प्रभाव इण्टेमीबा हिस्टालिटिका पर पड़ता है, इसके साथ-साथ यदि आमातिसार, संग्रहणी में रक्त आता हो, रक्तपित्त हो, यकृत शोथ और यकृत विद्रधि परिणाम स्वरूप होगई हो तो भी इसे प्रयोग करके देखना चाहिए, आशा है अवश्य लाभ होगा। इसके इन्जेक्शन दूसरे-तीसरे दिन ही लगाने चाहिए और क्रमशः बढ़ाते हुए मात्रा में जब रोगी को कोई विषैला प्रभाव मालूम होने लगे इसकी मात्रा कम करा देनी चाहिए और अच्छा यह है कि इसका प्रयोग बन्द करके मुख द्वारा इसका क्वाथ या चूर्ण देना आरम्भ कर देना चाहिए वातज्वर, ज्वरात मार. का संक्रमण भी इसके प्रयोग से ठीक होजाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। बीजों से इन्जेक्शन बनाने के लिए इन बीजों की ही पिष्टि बनाकर तब उसके साथ रेक्टीफाईड स्प्रिट मिलाकर या इसके क्वाथ में रे० स्प्रिट मिलाकर तब उससे इन्जेक्शन निर्माण करके और पुनः कोटि-निर्धारण करके, प्रत्येक कैच का परीक्षण करके तब ही मनुष्यों के प्रयोगार्थ उपयुक्त जानना चाहिए। इसके क्षार के इंजेक्शन का प्रयोग बिल्कुल व्यर्थ होगा।

पटोलपत्र—

जङ्गली परवल के पत्रों के स्वरस से बनाना ठीक होता है, पुराने पत्तों द्वारा बनाया योग गुण रहित होजाता है, शुष्क पत्र भी यदि लिए जांय तो वे ताजी हों, उनका क्वाथ बना या हिमफांट या अन्य विधि जो पीछे दी गई है (क्षार को छोड़कर) उससे सुरासार द्वारा इन्जैक्शन बनाकर प्रयोग करना चाहिए। इसका विशेष प्रभाव पैत्तिक विकारों जैसे तीव्रज्वर, दाह, तृष्णा, रक्तदोष, रक्तपित्त, यकृतदोषों, मलेरिया एवं इसी प्रकार के मौसमी बुखारों, सीहा आदि पर अच्छा प्रभाव पड़ता है, पित्त कफज व्याधियों में इसको व्यवहार करना हितकर है। गहरे मांस में अथवा अधस्त्वगीय दिया जा सकता है। मात्रा सिद्ध द्रव की १०-१२ बूंद तक, सुराद्रव की ५ बूंद परिस्नुत जल में मिलाकर प्रयोग करना चाहिए। इन्जेकशन अधस्त्वगीय, मांसान्तर्गत दिया जा सकता है। आयुर्वेदीय योगों में जहां ज्वरों की चिकित्सा प्रसंग में क्वाथ इत्यादि का वर्णन आता है, वहां प्रायः पटोल-पत्र का उल्लेख मिलता है अन्य गुण जो इसके हैं वे इसके तिक्त आदि होने के कारण मुख द्वारा सेवनोपरान्त होते हैं।

अश्वगंधा—

इसका प्रयोग, बलवर्धन और विशेषकर स्नायुविक विकार जन्य दुर्बलता जहां मस्तिष्कगत बुद्धि की कमजोरी होती है, अथवा शोथ इत्यादि के बिकारों को शमन करने के लिए बहुधा मुखद्वारा होता है।

इन गुणों की प्राप्ति के लिए इसका इन्जेक्शन जो क्षार से बना हुआ न हो बनाना चाहिए और अधस्त्वगीय, मांसगत सप्ताह में २-३ बार देना चाहिए। यह भी आशा की जा सकती है कि स्नायु-विकार के कारण यदि कामांगों में शीघ्रपतन, नष्ट हर्ष इत्यादि होगया हो तो उसमें लाभ पहुंच सकता है।

इन्जेक्शन बनाने के लिए स्वस्थ अश्वगंधा जो सड़ी गली न हो लेनी चाहिए।

अपराजिता—

इसको आस्फोता, गिरकरणी, विष्णुकान्ता भी कहते हैं। लिखने वालों ने इसकी बहुत तारीफ की है, और यह लिखा है कि इसके प्रयोग से रक्त में होने वाले विकार, यथा फोड़ाफुन्सी गिल्टियों के रोग जैसे कण्ठमाला, गलगंड, इत्यादि एवं चर्म रोगों जैसे श्वेत कुष्ठ, व्रण, फोड़े कुष्ठ इत्यादि पर विशेष रूप से इसका अच्छा प्रभाव पड़ता है। इससे ठीक होने वाले रोगों में प्रधानतया निम्न रोग लिए गये हैं, व्रण, शोथ, कास, श्वास, प्रतिश्याय, जलोदर, ग्रहणी, यकृत सीहा के रोग, कास इत्यादि फैफड़ों के रोग, नेत्ररोग (शोथ अभिष्यन्द) वृक्क शोथ इत्यादि। अधिकांश की सम्मति है कि यह अपना प्रभाव विशेषकर हृदय उसकी चाल, रक्तपरिभ्रमण चर्म, नेत्र, वृक्क और लसीका ग्रन्थियों पर करता है।

इसके पंचांग की लुगदी से इन्जेक्शन बना कर प्रयोग करना चाहिए। जो सत्व, घनसत्व, सुरा सार के रूप में विशेष गुण कर सकती है, इतने अधिक अवयवों पर अपना प्रभाव करने वाली औषधि का कोट निर्धारण अवश्य होना चाहिए। तभी इसकी मात्रा निश्चित हो सकती है। वैसे इसका स्वरस पीछे वर्णित प्रकार से ५ बूंद तक प्रयोग करना चाहिए।

इसका प्रयोग जानने के लिए यह बात याद रखनी चाहिए कि जहां पर पाक और शोथ के साथ-साथ ज्वर का भी लक्षण हो Tosxmia हो वहां इसका प्रयोग करना चाहिए। वातश्लेष्म के विकारों में रक्त दूषित होने की दशा में यह गुण करता है। इन्जेक्शन प्रति दिन की अपेक्षा २-३ दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अन्तर से लगाना ठीक होगा। ऐसी औषधि के बारे में वास्तव में ऐसे योगों की आजकल नितान्त आवश्यकता है।

अरणी—

उसको अग्निमंथ भी कहते हैं, इसका क्रियाशील अंश इसकी छाल में माना गया है अतः रासायनिक विधि से इसकी छाल से ही इन्जेक्शनोपयोगी क्षारोद प्राप्त करने चाहिए।

इसका प्रयोग अधस्त्वगीय और मांसगत देना उपयुक्त होगा। सीधे रक्त में देने की आवश्यकता यूं नहीं है कि सम्भव है कि इससे Reaction होने की सम्भावना हो जाये, लिखा गया है कि इसका प्रयोग खाली पेट पर ही करना चाहिये। भरे पेट पर नहीं।

अहिफेन –

साधारण भाषा में अफीम कहते हैं, इसका योग पाश्चात्य वैद्यों ने मर्फीन नाम से निकाला है, और बहुधा व्यवहार किया जाता है अपने आयुर्वेद में इन्जेक्शन बनाने वालों ने इसकी विविध विधियां और मात्रा निर्धारित की हैं, कोई १ सर्षप (सरसों) बराबर अफीम को १ सी. सी. परिस्रुत जल में विलीन करके तब देना बताते हैं, कोई २ तोला अहिफेन को २० तोला परिस्रुत जल में घोल कर दो दिन बाद उसको फिल्टर करके पुनः उसकी रस क्रिया करके ४ तोला शेष रहने पर उसमें १ तोला रेक्टीफाईड स्प्रिट मिलाकर, इस निर्मित औषधि में से ५-२० बूंद तक १।२ या १ सी.सी. परिस्रुत जल में मिला कर दें। यह नहीं बताया गया कि ५–१० बूंद में अहिफेन की मात्रा कितनी होगी, आगे यह लिखा गया है कि इसी रस–क्रिया कृत औषधि को और गाढ़ा करके शुष्क करके पीस लें या टिकिया बनालें, और १।८ से १।२ ग्रेन तक ५क बार में परिस्रुत जल में मिलाकर प्रयोग करें। जो भी हो, अवश्य ही ऐसी विषैली औषधि का अत्यन्त सावधानी से निर्माण करना और व्यवहार करना चाहिए, उत्साही निर्माताओं को इसमें अभी और संशोधन करने की जरूरत है। उस समय तक यदि प्राप्त हो सके तो मार्फीन हाईड्रोक्लोर का प्रयोग करें। और जब तक अपने आयुर्वेदीय विधि से अहिफेन जैसी विषैली वस्तु के इन्जेक्शन का कोटि निर्धारण न हो तब तक कदापि भी प्रयोग करने का साहस न करें।

गुण—मार्फीन के समान है, जब रोगी वेदना से बेचैन हो, कहीं पर असह्य पीड़ा हो, नींद न आती हो, रोगी को सुलाना अभीष्ट हो, जहां पर अतिसार भी हो, यह अपना प्रभाव करती है। अहिफेन के सेवन में मधुमेह में शर्करा का आना कम हो जाता है, प्रमेह, पाण्डु रोग, आक्षेप, प्रलाप, श्वास आदि के रोगों में भी इसको देते हैं पर विशेष गुण इसका पीड़ाहरण के निमित्त होता है।

असावधानी से प्रयोग किए जाने पर और अधिक दिए जाने पर यह मृत्युकारक भी होजाता है, अधिक प्रयोग से धीमी सांसें आना, नाड़ी लुप्त होना, शरीर शिथिल पड़ जाता है और सन्यास सा होकर रोगी अचेतावस्था में होजाता है। अतः अत्यन्त सावधानी बरतने की जरूरत है, जब कभी ऐसा हो जाय तो, 'हींग' का इंजेक्शन प्रयोग कर देना चाहिए उससे तुरन्त होश आजाता है।

अहिफेन के जो-जो गुण होते हैं सभी इसके इन्जेक्शन से प्राप्त किए जा सकते हैं। परन्तु कुछ ऐसे भी विकार इसके सेवन से होने लगते हैं जो फिर आजीवन लोगों को अफीम का अभ्यस्त बना देते हैं, रोगी को मलबद्धता अधिक रहने लगती है। अतः जब इसके प्रयोग से अभीष्ट गुण प्राप्त होजांय इसको देना बन्द कर देना ही ठीक होता है।

विशेष विवरण पीछे मार्फीन के प्रकरण में देखें।

अमलतास—

यह मुख द्वारा विरेचन कराने के लिए काम आता है, ज्वर में पथ्य रूप से विरेचन करा सकते हैं। पर इसके क्षार के इन्जेक्शन से भी विरेचन हो सकेगा अत्यन्त संदेहात्मक बात है, अस्तु उसके पुष्प

CC-0. In Public Domain. Gurukul K...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या फलियों के अन्दर के गूदे द्वारा उपकारी इन्जेशन बनाने का प्रयत्न होना चाहिए, वैसे हमारी सम्मति में इसको प्रयोग करने की आवश्यकता तो शायद ही कभी आनी चाहिए और फिर विरेचन के लिए इंजेक्शन का प्रयोग कुछ उपयुक्त भी नहीं लगता, अम्लतास एक सौम्य विरेचक है, अपितु विरेचक गुण युक्त होने के साथ-साथ यह अन्य उपद्रव भी कर सकता है, अगर इंजेक्शन द्वारा यह मलनिस्सारण के प्रभाव से युक्त है।

इसके पुष्प की लुगदी १ तोला, रेक्टी. स्प्रिट १ तोला में मिला १ सप्ताह धूप में रखें, फिर फिल्टर करके पुनः ५ तोला रेक्टी. स्प्रिट मिलाकर छान लें और इसको १० बूंद शेष भाग परिस्रुत जल, सब मिलाकर १ सी. सी. करलें और अधस्त्वगीय या मांसान्तर्गत विधि से सप्ताह में एक बार दे सकते हैं। ऐसा लिखा हुआ मिलता है।

अजवायन—

प्रलाप, अनिद्रा, पागलपन, पीड़ा वेदना इत्यादि के लिऐ इसके बीजों द्वारा बना इन्जेक्शन प्रयुक्त करने को लिखा मिलता है। साथ में प्रमेह, श्वास का दौरा, स्वप्नदोष, सर्दी, जुकाम, खांसी आदि के लिए भी लाभदायक बताया गया है और यह कि संध्या समय इसका इंजेक्शन लगाने के उपरांत सारी रात रोगी चैन से सोता भी है।

अजवायन एक अत्युग्रौषधि है, इसका प्रयोग इन्जेक्शन द्वारा करने के पक्ष में हम अधिक नहीं, प्रयोग करने में स्थानीय उपद्रव, शोथ, जलन आदि होने की अधिक सम्भावना हो सकती है। इसकी तीक्ष्णता कम करके उपयुक्त मात्रा निर्धारित करके तभी प्रयोग की जानी चाहिए।

इन्द्रवारुणी —

यह ऊष्ण, कटुतिक्त लघु एवं विरेचक है, ये गुण विशेषकर मुखद्वारा देने पर ही ज्ञात होते हैं, इन्जेक्शन द्वारा इनकी आशा करने के लिए बिना चार बनाये वैसे ही यदि इसको बना लिया जाय (रेक्टी० स्प्रिट आदि द्वारा) तो सम्भव है गुण करे। इसका विशेष प्रभाव अण्डकोषों पर होता है, बृहदांत्र पर निस्सारण प्रभाव पड़ता है, अतः अण्डवृद्धि, उदर रोग, गुल्म, व्रण, कामला इत्यादि में प्रयुक्त होता है।

इसके मूल या फल का १ तोला स्वरस लेकर उसमें ५ तोला रेक्टी० स्प्रिट मिला लें और एक सप्ताह धूप में रखकर पुनः फिल्टर करके अन्त में २॥ तोला परिस्रुत जल और मिलाकर रखलें इस निर्मित औषधि में से १० बूंद तक ८-१० बूंद परिस्रुत जल मिलाकर मांसगत या अधस्त्वगीय विधि से इंजेक्शन देने का विधान मिलता है।

इन्द्रायण—

इसके ताजे फलों के स्वरस से औषधि बनाने का विधान मिलता है, और यह कि इसका स्वरस १ तोला, रैक्टी. स्प्रिट २॥ तोला, १ सप्ताह धूप में रखकर ५ तोला परिस्रुत जल मिलाकर फिल्टर करलें, और ८-१० बूंद लेकर ५-७ बूंद परिस्रुत जल मिलाकर अधस्त्वगीय विधि से लगाएं।

इसका प्रभाव अण्ड-कोषों के वृद्धि रोग पर होता है, आंत्र वृद्धि, अण्ड वृद्धि दोनों में यह समान रूप से लाभदायक माना गया है सप्ताह में १-२ बार लगाएं प्रयोग सावधानी चाहता है, क्योंकि दाहक प्रभाव युक्त है।

अदरक—

इसके कच्चे कन्द लेकर उसकी १ तोला लुगदी बनाएं, ५ तोला रेक्टी. स्प्रिट मिलाकर १ सप्ताह धूप में रखें, पुनः छानकर ५ तोला परिस्रुत जल मिलाएं, और फिल्टर करके रखलें।

लिखा है कि इसका विशेष लाभ प्लीहा, यकृत, आमाशय, उदर रोग, पित्ताशय, संग्रहणी, शोथ, प्रदर, वातज शूल के रोगियों के लिए होता है। विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि आयुर्वेद में वर्णित 'कुष्ठ पाण्डुवामयेकृच्छे' के अनुसार जहां-जहां आर्द्रक सेवन वर्जित है वहां वहां इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये। उपरोक्त गुण पाक द्वारा सेवन से अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो सकते हैं, इन्जेक्शन से उपरोक्त रोग दूर होंगे, इसमें संदेह है।

सप्ताह में दो बार से अधिक न दें। जलन अधिक करेगा। क्षार का बना इन्जेक्शन व्यर्थ है।

उशबा—

यह खून की खराबी को दूर करने के लिए प्रयुक्त होता है। यूनानी वैद्य सभी प्रकार के रक्त-दोषों में इसका व्यवहार खुलकर करते हैं। इसको इन्जेक्शन का रूप देने के लिए इसका स्वरस क्वाथ या लुगदी द्वारा रेक्टी. स्प्रिट में इन्जेक्शन तैयार करें, और प्रति तीसरे दिन मात्रानुसार १० बूंद तक अधस्त्वगीय दें। रक्त विकार में उत्तम प्रभाव करता है।

उशीर—

खस के नाम से प्रसिद्ध है, इसका इन्जेक्शन इसके मूल के क्षार से बनाने को लिखा है, पर वह व्यर्थ की चीज़ बनेगा, अस्तु, इसको चटनी की तरह बारीक पीस कर जरा से जल के साथ लुगदी बनावें और १ तोला स्वच्छ लुगदी को ५ तोला रेक्टी. स्प्रिट में एक सप्ताह धूप में रखें, पुनः छान कर रखलें। आवश्यकता पड़ने पर ५–१० बूंद, परिस्रुत जल मिलाकर अधस्त्वगीय, या मांसगत इन्जेक्शन दें। दिन में १ बार दे सकते हैं।

छर्दि तथा प्यास, वमन एवं पैत्तिक विकारों में विशेष लाभदायक होगा।

एरण्ड—

एरण्ड की जड़ से इन्जेक्शन बनावें, सदैव स्वरस द्रव, या तरल सत्व का प्रयोग करें, आमवात में वास्तविक लाभ करता है। सरल विधि स्वरस को फाड़ कर रस क्रिया करके सत्व बनावें। गाढ़ा गाढ़ा सत्व बनेगा इसमें रेक्टी. स्प्रिट या परिस्रुत जल के योग से फिर औषधि बनावें, और एक निश्चित कोट-निर्धारित करें, साथ में मात्रा का भी विचार रखें।

धन्वन्तरि में प्रकाशित होने वाले योगों में जो शायद श्री. रामप्रसाद जी गतौना वालों ने कभी १०-११ वर्ष पूर्व लिखे थे, मैंने अपने दो तीन रोगियों पर घन सत्व को ही परिस्रुत जल में मिलाकर इन्जेक्शन लगाए थे, और लाभ हुआ था। इन्जेक्शन मांसगत दें, सप्ताह में २–३ बार देना काफी होगा।

कस्तूरी—

एलोपैथिक औषधियों के प्रकरण में वर्णित मस्क के ही समान इसका गुण है, इसको कपूर के साथ भी मिलाकर निर्माण करते हैं, ईथर में १।२ या ¼ ग्रेन कस्तूरी को विलीन करके उसका प्रयोग करते हैं। इसका विशेष प्रभाव हृदयोत्तेजक, श्वास क्रिया को शक्ति देने वाला और शरीर की शीताङ्गावस्था में देते हैं। जब इसके साथ कपूर का मिश्रण होता है तब यह क्रिया और भी जल्दी होने लगती है, (Musk & camphor in ether)

जिस योग में कस्तूरी ¼ से १।२ ग्रेन तक हो उसका प्रयोग प्रति दिन आवश्यकता पड़ने पर दिन में ३-४ बार भी दिया जा सकता है। इन्जेक्शन अधस्त्वगीय दें।

इसका प्रयोग उपरोक्त अवस्थाओं के अतरिक्त वातज विकार, मृगी, हिस्टीरिया, कम्प वायु, शैथिल्यता, प्रसूति ज्वर इत्यादि सन्निपात की विविध दशाओं में करना चाहिये।

कपूर

एलोपथी में वर्णित केम्फर के प्रकरण में कपूर के इन्जेक्शन के विस्तृत गुण देखें, यहां केवल इतना कहना पर्याप्त होगा कि इसका प्रभाव मुख्यतया हृदय और फुफ्फुस के कार्य पर पड़ता है तथा अवसाद की अवस्था में यह अत्यन्त उत्तेजक योग है, शरीर में तुरन्त चेतना आ जाती है. हैजा के रोगी के लिए तथा जहां रोगी की नाड़ी डूब रही हो और उसको शीतांगता बढ़ रही हो ऐसे समय में कपूर का प्रयोग दिल खोल कर करना चाहिये।

जब पास में इसका इन्जेक्शन हो तो १ ग्रेन कपूर (शुद्ध) को १५ बूंद जैतून के गर्म तैल में मिलाकर शीतल करके, लगा दें। जैतून का तैल न हो तो ईथर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में मिलाकर लगादें, अधिक उपयुक्त इसके बने बनाये इन्जेक्शन होते हैं, जो प्राय: सुलभता से पीछे वर्णित नामों से मिल जाते हैं।

उपरोक्त रोगों के अतिरिक्त यह अन्य सर्दी के रोग जैसे इन्फ्लुञ्जा, निमोनियां, कास एवं शरीर शैथिल्य में अत्यन्त गुणकारी माना गया है। १-२-३ ग्रेन प्रति सी. सी. की शक्ति में आवश्यकतानुसार १-२ घण्टे के अन्तर से अथवा जिनमें ३-४ बार रोगी की दशा के अनुसार देना चाहिये। इन्जेक्शन अधः स्त्वगीय, और मांसपेशीगत भी दिया जाता है।

कुटकी—

इसका व्यवहार ज्वर, वमन, अतिसार, पैत्तिक विकार, रक्त के रोगों में होता है, इन्जेक्शन द्वारा इन गुणों की प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि बिना इसके क्षारोदों का नाश हुए ही योग उत्तम बन जाए। अतः क्षार के अतिरिक्त अन्य विधियों से इसे बनायें। इसको मांस या अधस्त्वगीय विधि से प्रति सप्ताह १-२ या १ बार तक देने का विधान है इसके प्रयोग से विषमज्वर, यकृत विकार, पाण्डु एवं रक्त हीनता इत्यादि रोगों में लाभ होने की आशा अधिक है।

कंटकारी—

यह दो प्रकार की होती है, छोटी और बड़ी, दोनों का समान प्रयोग प्राय: किया जाता है। अधिकतर छोटी कटेरी कास, श्वास, हृद्रोग, उदर, सर्दी के रोगों में प्रशस्त है, बड़ी का प्रयोग जरा कम किया जाता है, फिर भी दोनों ही प्रयुक्त करने में हानि विशेष नहीं।

क्षार द्वारा इन्जेक्शन तय्यार करने के बजाय यदि इसके पुष्प या पंचांगस्वरस द्वारा औषधि निर्माण की जावे तो लाभ होने की आशा होगी। स्वरस का सिद्ध द्रव भी दिया जा सकता है, अभाव में सुरा द्वारा निर्मित औषधि दें।

गुण—कास श्वास, सर्दी, निमोनियांप, पार्श्वशूल, वात श्लेष्मज रोग, पर विशेष प्रभाव करती है।

प्रयोग—अधस्त्वगीय या मांसान्तर्गत।

काकजंघा—

यह ऐसी औषधि है जिसका प्रयोग बाल शोष, यक्ष्मा की प्रथम द्वितीयावस्था, शरीर में चूने की कमी, अस्थि भग्न, अन्य शारीरिक विषों (Toxaemia) तथा धातुओं के विष (Matellic Poisoning) में अधिक होता है। यह धारणा है कि यह रक्त में स्थित यक्ष्मा के जीवाणुओं का संहार करती है, और शरीर में चूने का आत्मीकरण बढ़ा देती है, फल स्वरूप रोगी को लाभ होने लगता है।

इसके पंचांग से ही औषधि निर्माण करना चाहिए, और क्षार द्वारा बना इन्जेक्शन व्यर्थ होगा, जहां तक हो ताजे पंचांग से ही औषधि निर्माण करें। विधि सामान्यतया इसकी लुगदी, या स्वरस में रेक्टी. स्प्रिट को १:५ के हिसाब से मिलाकर धूप में १ सप्ताह रखकर; छानकर; सुरक्षित रखने की है।

इसके प्रभाव के बारे में यह लिखा मिलता है कि राजयक्ष्मा की प्रथम तथा द्वितीय अवस्था में शत-प्रतिशत लाभ करता है, और ३-३ दिन के अन्तर से प्रयोग करने पर ४-५ सप्ताह में पूर्ण लाभ कर देता है। फुफ्फुस, मस्तिष्क, हृदय एवं रक्त पर, आमाशय, वृहदान्त्र पर इसका प्रभाव विशेष रूप से होता है, ऐसा निर्माताओं का मत है।

इसको अधस्त्वगीय ही दें, मात्रा इसकी उपरोक्त विधि से सुरा साधित की ६-८ बूंद, शेष भाग परिस्रुत जल मिलाकर १ सी. सी. करके लगावें।

कुकर भांगरा—

इसको कुकुरौंधा भी कहते हैं और भारत में सभी जगह अधिक पाया जाता है। इसके पंचाग के स्वरस से इंजेक्शन पूर्व की विधियों के अनुसार बनाना चाहिए। कुकुरौंधा के सिद्ध द्रव को भी प्रयोग करना लिखा मिलता है, कोई कोई इसके सिद्ध द्रव को उड़ाकर शुष्क रूप में औषधि प्राप्त करके और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यकता पड़ने पर उसमें से रोगी की शक्ति के अनुसार १ ग्रेन से ५ ग्रेन तक गरम परिस्रुत जल में घोल कर प्रयोग करने के पक्ष में है, कोई भी विधि हो, इसके रासायनिक तत्व जिनके द्वारा यह अपना कार्य करती है नष्ट न होने पावे। इसका विशेष गुण धनुष्टंकार, आक्षेप लक्षणों से युक्त वातज विकार, सौषुम्नगत व्याधियों में किया जाता है।

विधि—अधस्त्वगीय विधि से दें, मांसगत भी प्रयोग कर सकते हैं।

कांचनार

कचनार का प्रयोग कण्ठमाला और 'ग्रंथियों' के शोथ युक्त विकार तथा कहीं कहीं राजयक्ष्मा की आरम्भिक अवस्थाओं में होता है। अभ्यान्तरिक ग्रंथियों के शोथ युक्त दशाओं और उनसे होने वाले ज्वर, कास, व्रण, पाक आदि में भी यह व्यवहार किया गया है, इसीसे इसके द्वारा बने इन्जेक्शन में भी वही गुण पाने की आशा से इसका इन्जेक्शन बनाया गया है। इस अभिप्राय के लिए इसके पुष्प स्वरस या इसकी छाल से बना हुआ ऐसा इंजेक्शन जिसमें इसके गुणों, रस, विपाक आदि का नाश न होसके, बनाकर प्रयोग करना चाहिए। विशेष प्रयोग कण्ठमाला पर होता है।

इसके पुष्पों की लुगदी १ तोला, रेक्टीफाइड स्प्रिट ५ तोला मिलाकर धूप में १ सप्ताह रखें, पुनः फिल्टर करके ५ तोला ऊष्ण परिस्रुत जल मिलावें और सुरक्षित रखें, इसमें से १० बूंद तक अधस्त्वगीय दें, सप्ताह में २-३ बार से अधिक न दें।

कटसरैया—

कटसरैया के पंचांग के सिद्ध द्रव या इसके सत्व द्वारा अथवा सुग साधित योग बनाकर इंजेक्शन उपयोगी औषधि निर्माण करें। अधिकांश निर्माताओं ने इसके क्षार द्वारा इन्जेक्शन बनाने की चर्चा की है, जो हमारे सिद्धान्तानुसार उपकारी नहीं होगा।

इसका मुख्य प्रभाव शरीर के समस्त श्लैष्मिक कलाओं पर शोथ निवारक गुण वाला पड़ता है। जहां कहीं भी श्लैष्मिक कला में शोथ जन्य उपद्रव जैसे प्रदर, मुख पाक, नेत्राभिष्यन्द, फुफ्फुसीय श्लैष्मिककला प्रदाह, जुकाम आदि हों तो वहां इसका प्रयोग करके देखें।

मात्रा-स्वरस की सिद्ध द्रव की ५-८ बूंद शेष परिस्रुत जल (१ सी. सी. पूरा करके) अधस्त्वगीय या मांसान्तर्गत लगायें। इसका उपयोग मसूरिका, बन्ध्यत्व, सर्वांग शोथ पर भी उपकारी माना गया है।

कुचला—

इसका विस्तृत विवेचन नक्सवामिका नाम में पीछे एलोपेथिक बयान में आगया है। इसके सत्व को स्ट्रिक्नीन नाम से पुकारा जाता है, जहां स्ट्रिक्नीन का विषय पीछे दिया गया है वहां ही इसके समस्त गुण दिए गए हैं। यह एक विषैली औषधि है, जो प्रायः सभी वैद्य जानते हैं, इसको विशेष रासायनिक विधि से बनाकर इससे इसका प्रभावकारी अंश strychnine निकाला जाता है, चूंकि यहां आयुर्वेदिक दृष्टिकोण को ही रखा जा रहा है और अत्यन्त आवश्यकता पड़ने पर ही पाश्चात्य मत का समावेश आयुर्वेदीय औषधियों में किया गया है। कहने का तात्पर्य यह है कि जितने भी ग्रंथकारों और निर्माताओं ने इसका प्रयोग दिया है, वहां इसको प्रयोग करने से पूर्व इन्जेक्शन उपयोगी रासायनिक द्रव्य निर्माण करने के लिए ऐसी विधियों और विधि का अवलम्बन किया है जो सर्व साधारण वैद्य के लिए, अत्यन्त कठिन होने के साथ साथ कुछ अंशों में भी आयुर्वेदीय नहीं मानी जा सकती, जो भी विधि इसका क्षारोद निकालने की दी है वह एकदम पाश्चात्य विधि है। अतः जब एलोपेथिक विधि से ही औषधि बनानी अभीष्ट हो तो फिर क्यों न बना बनाया स्ट्रिक्नीन का इन्जेक्शन विविध शक्तियों और अन्य द्रव्यों के योगों के साथ मिला हुआ लिया जाय। आयुर्वेदीय विधि कोई भी ऐसी देखने को नहीं मिली जिसमें स्पष्टतया यह अंकित कर दिया गया हो कि इसके द्वारा इस शक्ति का क्षारोद या एक सी. सी. में इतनी मात्रा और परिमाण में कुचले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के क्रियाशील तत्व हैं। अतः जब तक कुचले जैसी भयङ्कर विषैली औषधि का कोई विश्वसनीय और कोटिनिर्धारित योग ऐसा न बन जाए जो सर्वमान्य हो तब तक कुचले के बने बनाए योगों को ही व्यवहार में लाना चाहिए। क्योंकि एक साधारण और आयुर्वेदज्ञ वैद्य तथा अच्छे से अच्छे डाक्टर को आज इतना साधन उपलब्ध नहीं हो पाता जो वह कुचले का सत्व स्ट्रिकनीन के रूप में आसानी से निकालकर उसको जन साधारण में प्रयोग करने योग्य बनाकर व्यवहार कर सकें और यदि कोई ज्ञाता बनाकर व्यवहार कर सकें तो भी यह कहा जा सकता है कि उसका सही-सही कोटि-निर्धारण करना सुगम नहीं है। अतएव ऐसी विषैली औषधियों को स्वतन्त्रतापूर्वक निर्माण कर जनसाधारण के लिए वितरण करने के पूर्व राजकीय प्रतिबन्धों का पालन करना आवश्यक है।

कुचला विशेषकर अपना प्रभाव स्नायुमण्डल पर और मांसपेशियों पर उत्तेजक के रूप में करता है, सिर से पैर तक सभी अवयवों पर यह अपना कुछ न कुछ असर करता है, रक्त के कणों (रक्त) की वृद्धि होती है, हृदय को बल मिलता है, जब हृदयावसाद अवरोध एवं शक्ति का ह्रास होने लगे तब यह अमृत के समान तुरन्त उत्तेजना प्रदान कर विचित्र कार्य करता है नाड़ी मंडल को इतना बल मिलता है कि जिन नाड़ियों की क्रिया शक्ति नष्टप्राय होजाती है जैसे पक्षाघात आदि में, तब उनमें शनैः शनैः शक्ति आने लगती है। क्लैब्य, नपुंसकता जिसमें स्नायुविक विकार हों, श्वास, हैजा, हिस्टेरिया और विविध प्रकार के रासायनिक विषों, सर्पविष के प्रभावजन्य हृदय दौर्बल्य में यह नवीन शक्ति लाकर लाभ देता है। क्लोरोफार्म अफीम आदि के विषों में अवसादावस्था में उत्तेजना देता है।

इसका प्रयोग रोगी और रोग की दशा के अनुसार अत्यन्त सावधानी और ऐसे नियम के अंतर्गत होना चाहिये जिसमें कि इसके विषैले लक्षणों का कुप्रभाव न होने पावे।

विशेष विवरण स्ट्रिकनीन के अध्याय में देखें।

कुटज—

कुड़े की छाल प्रसिद्ध चीज़ है, जो एलोपैथी के एमेटीन के बराबर की चीज़ है। इसका प्रयोग एलोपैथी में kurechi के नाम से होता है और वहां इसके इन्जेक्शन भी विविध नामों से बन गए हैं। इसके क्षारोद का प्रयोग किया जाता है। इसकी ताजी छाल के स्वरस से इसका निर्माण होना चाहिए। स्वरस, अथवा गीली छाल की लुगदी से क्षारोद (न कि क्षार) अर्थात् Alkaloids बनाना ही श्रेयष्कर है, जो क्षार से बनाकर तब उसका व्यवहार करते हैं, गलती करते हैं, कुटज के अन्दर कुर्चीन और कुर्चीसीन नामक द्रव्य इसकी भस्म बनाने के उपरांत नष्ट हो जाएगा और उस राख से केवल क्षार, (न कि कुर्चीन या कुर्चीसीन) ही प्राप्त होगा जो अपना प्रभाव उपरोक्त रोगों में अर्थात् संग्रहणी, खूनी पेचिश, यकृत विद्रधि, आमाशय और आंत्रिक व्रणों पर, रक्तपित्त, रक्तप्रदर, रक्तार्श तथा अन्य प्रकार के रक्तस्रावों पर कदापि भी नहीं कर सकेगा। इसलिए इसके क्षारोद को ही बनाना चाहिए, जोकि यद्यपि साधारण चिकित्सक के लिए सुलभ और सम्भव नहीं तथापि बनाया जासकता है, जिसमें गंधकाम्ल अथवा लवणाम्ल के प्रभाव से कणरूप में विशेष क्रिया द्वारा वह बनता है। इसके बने बनाऐ इन्जेक्शनों की चर्चा चली भी थी; परन्तु विशेष व्यवहार में होते हुए अभी नहीं देखे जाते हैं। फिर भी इसके क्षारोद को १।२० से $\frac{1}{4}$ ग्रेन तक १ सी. सी. परिस्रुत जल में मिलाकर मांसान्तर्गत विधि से सप्ताह में २ बार देना चाहिए।

इसके अभाव में इन्द्रयव को लेना चाहिऐ।

काफी—

इसको कहवा कहते हैं, और चाय की तरह काफी देर उबाल कर तब पीते हैं। उबल जाने पर इसका तमाम क्रियाशील भाग पानी में आजाता है। अतः इसका इन्जेक्शन बनाने के लिये इसको ३०·

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२५ गुना पानी में खूब देर उबालो, जब १।३ शेष रह जाय तब उसको छानकर पुनः भाप द्वारा मन्द आंच पर उबालें, और शुष्क होने पर शुष्क सत्व को ग्रहण करें, इसकी मात्रा १।४ से १।२ ग्रेन तक देनी चाहिये यदि अभीष्ट लाभ न हो तो मात्रा और बढ़ाई जा सकती है; शेष भाग परिस्रुत जल १ सी. सी. मिला लिया करें।

गुण—काली खांसी, पुरानी खांसी, अफीम के विष के कम करने वाली, श्वास, अतिसार, शिरःशूल, एवं स्नायुविक उत्तेजना प्रदान करने वाली है। हृदय को थोड़ी देर के लिए उत्तेजना मिलती है। इसके प्रयोग से पसीना और मूत्र दोनों आते हैं। लिखा तो यहां तक है कि सभी प्रकार के शूलों में यह लाभ करती है, इसका इन्जेक्शन अधस्त्वगीय लगाना चाहिये।

खदिर–

खदिर का प्रयोग आदि काल से रक्त रोग विशेष कर कुष्ठ और यकृत इत्यादि के विकारों पर होता आया है। अतः इसकी अन्तर्छाल जो खूब पकी हुई हो टुकड़े करके उसका क्वाथ बना, रसक्रिया द्वारा या तो घनसत्व बनावें अथवा उस क्वाथ को गाढ़ा करके रेक्टी. स्प्रिट मिला पीछे लिखी विधियों के अनुसार सुरासाधित सार बनालें, क्षार का प्रयोग व्यर्थ है।

कुष्ठ पर प्रयोग करके विशेष लाभ उठाया जा सकता है, परन्तु इसके क्षारोद का अगर प्रथकीकरण हो जाय तब यह और भी उपकारी हो सकता है।

खुरासानी अजवाइन–

खाने के उपरान्त इसका विशेष प्रभाव उदरस्थ क्रिमियों पर पड़ता है, साथ में यह एक प्रकार का निद्राकारक भी गुण करती है, इसी से इसका प्रयोग निर्माताओं और अन्य लेखकों के मत में सन्निपात की उन अवस्थाओं में जहां रोगी को सुला देने और उत्तेजना शान्त करने की अत्यधिक आवश्यकता हो करना चाहिये।

इसको मृगी, उन्माद में भी देते हैं। पागलपन में जब नींद नहीं आती, रोगी का रक्तचाप बढ़ गया हो तब इसके प्रयोग से सुनते हैं नींद आकर रोगी ५ घण्टे तक सोता रहता है।

इसके पत्तियों के स्वरस को फाड़कर उसका सिद्ध द्रव तैयार करना चाहिये और या तो उसको ही ५–६ बूंद में ८-१० बूंद परिस्रुत जल मिलाकर दें। कोटिनिर्धारण आवश्यक है, क्योंकि अत्यधिक मात्रा में प्रयुक्त कर देने पर इसका कुप्रभाव होजाने की आशंका होती है।

गांजा—

यह मादक वस्तु है जो चिलम में रखकर पीयी जाती है, वैसे अफीम की तरह भी इसको खा लेते हैं, दोनों प्रकार से इसका नशा हो जाता है। अस्तु नशे की हालत में शारीरिक पीड़ा का अनुभव नहीं होता, और रोगी सो जाता है, शरीर में जहां भी पीड़ा हो बंद हो जाती है जब असर जाता रहता है पीड़ा का अनुभव पुनः होने लगती हैं। लिखा है कि रक्त प्रदर के लिए यह रामबाण है, अतः अन्य रक्तस्रावों में यह उपयोगी कही जा सकती है, गांजे का प्रयोग इन्जेक्शन द्वारा अत्यन्त सावधानी और एक ऐसी मात्रा द्वारा आरम्भ करते हुए होना चाहिए जिससे रोगी पर कोई भी घातक प्रभाव उपद्रव रूप में न पड़ सके, क्योंकि रक्त में मिल जाने पर यदि यह अधिक मात्रा में पहुंच गई तो रोगी के प्राणों को हरने की चेष्टा करेगी अतः इसकी मात्रा निश्चित करके तब व्यवहार करें।

इसको जल में पहले धीमी आंच पर उबाल लें। जब उसका अंश पूर्णतया जल में आगया समझें तो उसको फिल्टर करके भाप पर रख कर रस क्रिया द्वारा घन सत्व बनालें और सम्भव हो तो एक हानि रहित मात्रा प्रति सी. सी. में निश्चित् करके इसको परिस्रुत जल में घोल करके एम्पुलों में बंद करलें, या उतनी मात्रा को १ सी. सी. में घोलकर तब इन्जेक्शन लगा दें। हमेशा याद रखें कि यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक अत्यन्त मादक विष है। बच्चों, दुर्बल व्यक्तियों, वृद्धों को तथा वातपैत्तिक प्रकृति वालों को इसका प्रयोग बहुत सावधानी से करें, जब तक अन्य उपायों से काम चल जाए तब तक ऐसे उपायों की शरण लेने से सदैव बचते रहने की नीति अपनानी चाहिये।

गुडूची--

आम भाषा में गिलोय कहते हैं, इसका व्यवहार अधिकतर दाह, पैत्तिक ज्वर, विषम ज्वर, प्रायः सभी प्रकार के ज्वरों पर, प्रमेह, क्षय, बालरोग, रक्तदोष, कुष्ठ, विसर्प, यकृत, प्लीहा के विकार, पाण्डुरोग अर्थात रक्त हीनता, वातरक्त, क्रिमि, श्वास एवं मूत्र-कृच्छ के ऊपर होता है। अब यह देखना है कि इसका इन्जेक्शन इतने गुणों को करेगा अथवा नहीं, इन रोगों में से अनेक रोग ऐसे हैं जिनका सम्बन्ध आमाशय से है, और वहां अमृता जब मुख द्वारा सेवन की जाती है तब वह आमाशय आंतों इत्यादि को ठीक करके अधिकांश रोगों को दूर कर देती है, जिन रोगों का सम्बन्ध रक्त से है जैसे दाह ज्वर, रक्तदोष, प्रमेह, प्रदर, इत्यादि इन पर सम्भव है इन्जेक्शन द्वारा शीघ्र प्रभाव पड़े।

इसके सत्व को विधि-पूर्वक स्वच्छ बना कर घुलनशील बनाएं, यह सौम्यगुण वाला होगा, और अगर स्वरस का सिद्ध द्रव बनाकर उसका प्रयोग करें तो इससे अधिक तेज और शीघ्र गुणकारी होगा, और अपने समान क्षारोद के कारण गुण करेगा। यदि रासायनिक विधि से इसके क्षारोद निर्माण हो सकें तो अत्यन्त ही उपकारी हो सकता है।

इसके सत्व की मात्रा १ सी. सी. परिस्रुत जल में १।४ ग्रेन से १।२ ग्रेन तक सिद्ध द्रव की ५-६ बूंद, शेष परिस्रुत जल (१ सी. सी. पूर्ण करने के लिए) देना पर्याप्त होगा।

गिलोय आयुर्वेद में वास्तव में एक रसायन है, इसका यदि इसी के समान रसगुण वीर्य युक्त, अथवा इसके क्रियाशील तत्वों का इन्जेक्शन निर्मित हो सके तो अत्यन्त उपकारी वस्तु बन सकती है।

घृतकुमारी--

घी ग्वार के नाम से प्रसिद्ध है। ग्रंथकारों ने इसके क्षार से औषधि निर्माण करने की सम्मति दी है, जो कि सर्वथा अनुपयुक्त है, इसके स्वरस को ही फाड़ कर सिद्ध द्रव बनायें और उसका प्रयोग करें या उसका घन सत्व घुलनशील बनाकर प्रयोग करें, इसका मदरटिंचर बनाकर ५ बूंद तक प्रयोग करें, तभी अभीष्ट गुणों की प्राप्ति होगी। गिलोय की तरह यह भी आयुर्वेद में विशेष महत्व की औषधि है जिसका प्रभाव यकृत, प्लीहा, रक्त, मासिक के विकार और ऐसे मासिक सम्बन्धी विकार जहां रजोधर्म की अल्पता रक्तहीनता को छोड़ कर अन्य कारणों से हो, यह अपना विशेष प्रभाव दिखाता है। प्रसवोपरान्त इसको देना ठीक होता है, प्रसवपूर्व या गर्भिणी स्त्रियों को इसका प्रयोग अधिक मात्रा में वर्जित है।

गुण—रजोविकार, दृष्टि रोग, प्लीहा, यकृत, उदर रोग, शोथ इत्यादि के लिए हितकर है, इसका प्रयोग नितम्ब के मांसभाग में गहरा करना चाहिए।

चोवचीनी--

इसकी लकड़ी को यवकुट करके क्वाथकर घन सत्व बनालें, और उसमें पांच गुना रेक्टीफ़ाइड स्प्रिट मिलाकर पांच सात दिन धूप में रखें, और बाद में छानकर फिल्टर करके रखलें, और आवश्यकतानुसार ५ बूंद से १० बूंद परिस्रुत जल मिलाकर काम में लावें, इन्जेक्शन अधस्त्वगीय दें। इसका प्रयोग सुजाक की प्रत्येक दशा में गुणकारी होता है, जब वृक्क शोथ के लक्षण तीव्र हों तब न दें, अन्यथा सम्भव है वृक्कों को अधिक कार्य करने के कारण शोथ और भी बढ़ जाए।

चूना (Calcium)

एलोपैथिक के केलसियम के समान इसके गुण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते हैं, और इच्छा तो यही है कि अन्य विधियों से बनाये जाने वाले आयुर्वेदीय चूने के योगों के संशयात्मक योगों स्थान पर (जबतक इनका पूर्ण रूपेण संशोधन न होजाय तब तक) एलोपैथी के कॅलशियम के विविध प्रकार के आने वाले इन्जेक्शनों का व्यवहार किया जाए। चूने के बारे में एक घटना याद आ गई।

एक व्यक्ति के बगल के पास एक बैल ने सींग मार दिया, सींग पैना था, अस्तु फेफड़ों तक छेद हो गया, उस व्रण में से फुफ्फुसीय वायु और रक्त प्रत्येक श्वास में आता था, मैं उस गांव में एक रोगी देखने गया हुआ था, तुरन्त मुझे सूचना मिली, रक्त को रोकने के लिये मेरे पास कोई भी इन्जेक्शन नहीं था, अतः रोगी की दशा शोचनीय देख कर कोई उपाय सोचना चाहा कि तभी एक बर्तन जिसमें पान के लिए चूना भिगोया हुआ था देख कर विचार हुआ कि क्यों न इसके पानी का इन्जेक्शन लगादूं। और तुरन्त स्वच्छ चूने का पानी लेकर मैंने शिरा द्वारा १० सी. सी. चढ़ा ही दिया। यद्यपि यह ठीक नहीं था, फिर भी कुछ न कुछ किये बिना नहीं रहा गया, शहर १० मील था, उसके लगते ही रक्त का आना रुक गया। टांके लगा कर रोगी को फिर शहर के लिए रवाना कर दिया गया, वहां उन्हीं टांकों पर मरहम पट्टी होती रही और वह ठीक हो गया, कहने का तात्पर्य यह है कि चूना प्रयोग किया जा सकता है इस प्रकार भी, परन्तु उसकी प्रतिशत मात्रा का विचार और परिमाण का ज्ञान अवश्य होना चाहिए।

आयुर्वेद में असंख्य भस्में ऐसी हैं जो एक दम चूने का दूसरा रूप है जैसे कपर्दिका, प्रवाल, शंख, गोदंती, शुक्ति, मुक्ता इत्यादि इनका योग बनाकर इनके प्रथक-प्रथक गुणों को देखा जा सकता है।

चूने को ५%. से १०%. की मात्रा में, क्रमशः १-१० सी. सी. तक आसानी से दिया जा सकता है। अधिक मात्रा देने के लिए इसको मांसगत प्रयोग करना चाहिए। शिरा द्वारा भी इसको देते हैं। विशेष विवरण पीछे एलोपैथिक औषधियों के प्रकरण में कॅल्शियम का विवरण देखें।

चिरायता—

ज्वरों के लिए एक विख्यात औषधि है, इसमें विशेष गुण यह है कि इसके अन्दर टेनिन नामक द्रव्य नहीं होता, और यह प्रत्येक के ज्वर, यकृत रोग तथा रक्त दोष के लिए रामबाण सिद्ध हो चुका है। इसके स्वरस, या घन सत्व अथवा मदर टिंचर द्वारा ही योग तैयार करके अभीष्ट गुणों को पाने की आशा करना चाहिए। यह भी ध्यान में रखना जरूरी है कि इसका इतना व्यापक प्रभाव इसके कड़वा होने के कारण है, यकृत को तथा रक्त को शुद्ध रूप देने का यही कारण है, रक्त में स्थित दोषों को भी यकृत ठीक होजाने पर ठीक होजाना स्वाभाविक होता है। अतः इन्जेक्शन की अपेक्षा मुख द्वारा भी उपयुक्त मार्ग होसकता है वैसे इसका क्षारोद Alkaloid निर्माण करके प्रयोग करना चाहिए, तब और भी अधिक लाभ की आशा हो सकती है, और अनेकों और रोगों को भी यह ठीक कर सकेगा।

ताड़ पुष्प—

ताड़ के पुष्पों के द्वारा इसका निर्माण रेक्टीफ़ाइड स्प्रिट द्वारा करें, क्षार द्वारा इन्जेक्शन व्यर्थ होगा। इसका प्रयोग वृद्धि रोग या मोटापे के लिए लाभदायक लिखा गया है। जो वस्तु शरीर का कर्षण करने वाली हो, उसका प्रयोग अत्यन्त सावधानी से और मात्रावत करना चाहिए। हमको इसके प्रयोग में संशय है कि यह लाभ भी कर सकेगा।

तुलसी—

भारत की एक अत्यन्त प्रसिद्ध वनस्पति है जो प्रायः वात श्लेष्म के विकारों, ज्वरों और फुफ्फुसी शोथ, इत्यादि में अधिकतर व्यवहार में लाई जाती है। इसका क्षारोद अथवा लवण यदि व्यवहार किया जाए तो अधिक लाभ होने की सम्भावना हो सकती है। जिसके लिए क्षारोद बनाने की प्रक्रिया अपनानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ेगी, अथवा फिर इसके सिद्ध द्रव की मात्रा प्रति-बार में अधिक से अधिक ५ बूंद देनी चाहिए, और इसको अधस्त्वगीय या मासान्तर्गत देना चाहिए। सप्ताह में ३-४ बार देना पर्याप्त होगा। इसको उचित विधि और मात्रा में प्रयोग करने से खांसी, नजला, इन्फ्लूएञ्जा काली खांसी श्वास और वात श्लेष्मिक ज्वर के अनेकों उपद्रव शान्त हो जाते हैं, ऐसा लिखा मिलता है।

तुवरक (चॉलमोगरा)—

एलोपेथी के चावल मोगरा के प्रकरण में इसके बारे में काफी लिखा गया है, अतः उसी मात्रा के अनुसार इसका प्रयोग, और प्रयोग विधि होनी चाहिए। इसके शुद्ध तैल का ही प्रयोग कुष्ठी के रोग ग्रस्त भागों और अन्य भागों में जैसे अधस्त्वग, शिरागत देना चाहिए। प्रथम इसको स्थानीय ग्रसित भाग में ५ बूंद से १५ बूंद तक क्रमशः बढ़ाते हुए प्रयोग करें फिर शिरा द्वारा क्रमशः बढ़ाते हुए प्रयोग करें। जब ज्वर इत्यादि के रूप में प्रतिक्रिया होने लगे तब इसको बन्द कर देना चाहिए। यदि तैल का प्रयोग असह्य हो तो विदेशी योगों में से जो सह्य हो उनको क्रमशः बढ़ाते हुए प्रयोग करें। कुष्ठ और अनेकों रक्त स्थित रक्त दूषित करने वाले रोगों, विशेषकर राजयक्ष्मा, कुष्ठ, शिराकाठिन्य Varicose Veins में इसके विविध प्रयोग वरते जाते हैं। वैसे यह रसायन, बल कारक, प्रमेह, वातव्याधि, व्रण इत्यादि रक्त दोषों में प्रशस्त है। इसके जो अच्छे से अच्छे योग इन्जेक्शन द्वारा प्रयोग होने वाले पाश्चात्य मतानुसार चिकित्सा करने वालों ने बनाए हैं, उनसे आगे यदि कुछ प्रगति की जा सकती है तो अच्छा है, नहीं तो उन्हीं योगों को प्रयोग करना चाहिए।

दारचिकना—

आयुर्वेद में कम व्यवहार किया जाता है, यूनानी वाले अधिक उपयोग में लाते हैं, इसका प्रयोग विशेष कर डमरू यन्त्र द्वारा जौहर उड़ाकर मुख द्वारा उपदंश एवं इसके अन्य उपद्रवों में किया जाता है। मुख द्वारा दिये जाने पर यह यदि मात्रा से अधिक दे दिया जाय तो घातक परिणाम पैदा हो जाते हैं अतः यदि इसको इन्जेक्शन विधि से देना चाहें तब तो और भी अधिक विचार और सावधानी पूर्वक व्यवहार करना चाहिए। इसको प्रयोग करने से पूर्व इसका जौहर उड़ा लें, पहले रेक्टी. स्प्रिट में खरल करके डमरू यंत्र में रखकर तब जौहर उड़ालें, और ऊपर लगे शुद्ध दारचिकना को सुरक्षित रखें।

लिखा तो यों मिलता है कि १ ग्रेन से ३ ग्रेन तक क्रमशः बढ़ाते हुए इसको प्रयोग करें, और यह कि पहले इसका १ भाग लेकर १० भाग ग्लीसरीन में घोटकर रखलें। फिर इसमें से १-२० बूंद तक प्रति सप्ताह १ बार या २ बार सहन शक्ति के अनुसार ५-१० बूंद ग्लीसरीन और मिलाकर प्रयोग करें, फिर क्रमशः घटाते हुए पहली मात्रा पर आ जावें। इस प्रकार प्रयोग करने पर उपद्रव रूप से स्थानीय Local और सामान्य General प्रतिक्रिया विषैले लक्षणों के रूप में कभी कभी हो जाया करती है, अतः ऐसे योग को चिकित्सक अपनी ही जिम्मेदारी पर प्रयोग करें, इसमें पहले परीक्षण के उपरान्त मात्रा और इसका विषैलापन Toxicity का निश्चय करके तब इसका प्रयोग आरम्भ करना चाहिए। अन्यथा लाभ के स्थान पर हानि होने की अधिक सम्भावना है। यह विधि सुधार और अनुसंधान चाहती है।

दूर्वा श्वेत—

सफेद दूब, प्रायः सभी जगह मिल जाती है। इसके स्वरस को या लुगदी को रेक्टी. स्प्रिट समान भाग में मिला १ सप्ताह धूप में रखें, बाद में फिल्टर करलें। इसमें से ५-७ बूंद का अधस्त्वगीय रोगानुसार प्रतिदिन या सप्ताह में १-२-३ बार तक भी दे सकते हैं। इसका प्रभाव मस्तिष्क, स्नायु मण्डल, यकृत रक्त, प्लीहा, वृक्क, मूत्राशय, इत्यादि पर अधिक होता है जिन रोगों को इनसे लाभ होता है उनकी संख्या अत्यधिक लिखी गई है, राजयक्ष्मा, मधुमेह,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसूतिज्वर, त्रिदोष, रक्त-विकार, हिक्का, चर्मरोग, सुजाक, वृक्कशोथ, मासिक धर्म के विकार, कुत्ते का विष, अर्बुद, रक्तस्राव, श्वेत एवं रक्तप्रदर, आध्मान, अण्डकोष वृद्धि, सीहा यकृत, रक्तहीनता, अर्धावभेद, आमवात, गठिया, विशूचिका, वमन, अतिसार, अजीर्ण, सेग, निमोनियां, धनुषटंकार, मृगी, लकवा, शिरोरोग, का गुण वर्णन किया गया है। श्वेत दूर्वा का अमरीका में चूर्ण बनाकर उसके जीवनीय तिक्तों (विटामिन) को नष्ट नहीं होने दिया और और वह खाने के लिए प्रयोग किया गया, अधिकांश दशाओं में उसका प्रभाव पौष्टिक हुआ, मगर एक साधारण दृष्टि उपरोक्त रोगों की सूची पर डालने से, तथा जो और लिखने से रह गए रोगों का वर्णन देखने से यही धारणा बैठती है कि यह अकेली ही अमृतधारा की तरह सभी रोगों को निर्मूल कर देगी, सो बात मन में नहीं बैठती। अतः उपरोक्त विडम्बना में न पड़कर इसकी निर्माण विधि और गुणों को जानने में भी विधि परिवर्तन करना पड़ेगा। इसकी लुगदी बनाकर ३ गुनी रेक्टी. स्प्रिट मिलाकर एक सप्ताह तक रखें। पुनः फिल्टर करके और ३ तोला रेक्टी. स्प्रिट मिला दें। इसमें से ५ बूंद तक प्रयोग करें, और लाभ देखें। हमारा विचार है कि यह रक्त-स्थापक और मूत्रकारक गुणों से विशेष युक्त है, अतः ऐसी अवस्थाओं में प्रयोग कर देखें। निमोनियां क्षय, सेग, विशूचिका में जहां एक दम प्रभावकारी औषधि की जरूरत है, यह विशेष गुण और चमत्कार नहीं दिखा सकेगी।

दशमूल—

इसकी दशों औषधियों के गुणों को पहले इस प्रकार देखना चाहिए कि उनके क्षारोद परस्पर विरोधी गुण धर्म वाले (Incompitable) तो नहीं हैं, फिर इसके इन्जेक्शन का निर्माण उनके क्षारोदों से करें, अथवा इसके अर्क का प्रयोग करें। दशमूल १० तोला, जल २ सेर, वारूणी यंत्र द्वारा अर्क खींचें, और अर्क १ सेर खींचें, पुनः इस अर्क में १० तोले दशमूल भिगोयें, और अर्क ३० तोले खींचें, अब इसमें आधी छटाक दशमूल भिगोकर पुनः १० तोले खींचें, और इस अर्क का कोटि निर्धारण, और शक्ति का पता निम्न प्राणियों पर करें। उनके अन्दर विविध रोग जो दशमूल से साध्य हैं उत्पन्न करके दशमूल का प्रयोग करें। परीक्षार्थ बन्दर और चूहे, या सफेद खरगोश लें। जब परीक्षण पूरा और ठीक उतरे तब उनके शरीर भार और मनुष्य के शरीर भार की तुलना से इसकी मात्रा निर्धारित करें। दशमूल के क्षार द्वारा इन्जेक्शन का निर्माण करना बुद्धिमानी नहीं, इससे लाभ नहीं होगा।

धतूरा—

काले धतूरे को लेना चाहिये इसका प्रयोग प्रायः श्वास के दौरे को रोकने के लिए होता है परन्तु साथ-साथ यह विषैला भी है, रोगी को अत्यधिक नशा हो जाता है, अधिक मात्रा देदेने पर श्वास और हृदय की गति इतनी मंद पड़ सकती है कि मृत्यु होने का भय हो जाय। अतः इसके निर्माण में प्रथम तो विशेष सावधानी और प्रति मात्रा उसकी शक्ति का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। इसके पुष्पों, पत्र स्वरस, फल स्वरस, या पंचाङ्ग की गीली लुगदी से बनाना चाहिये। क्षार का कुछ भी प्रभाव नहीं होता। इसके अन्दर से जो भी विकारी भाग हैं उनका विश्लेषण कर प्रथक कर देना चाहिये, और तब क्रियाशील अंश का कोटिनिर्धारण करें, वैसे यह अपना गुण एलोपैथिक बेलाडोना के समान करता है, और श्वास के रोगी को इसका धुआं सूंघने से काफी लाभ पहुंचता है, श्वास नलिकाएं प्रसारित हो जाती हैं, और रोगी को चैन पड़ जाता है, अतः फुफ्फुस की श्वास नलिकाओं और हृदय की गति पर इसके क्षारोद अथवा विषैले धूंए का प्रभाव पड़ने से ही रोग के लक्षण कुछ देर को शान्त हो जाते हैं। श्वास रोग की यह अमोघ औषधि नहीं मानी गई है, केवल दौरे के समय प्रयोग करने से दौरा शांत हो जाता है। इसके अतिरिक्त रोगी को पीड़ा से थोड़ी देर के लिए मुक्त कर नींद ले आता है। और बढ़ी हुई उत्तेजना, तथा आक्षेपक रोगों में बड़ा जरा सी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तेजना, मात्र से ही दें रे, शरीर का ऐंठना आरम्भ हो जाता है, और प्रलापक सन्निपात में उत्तेजना रोकने के लिए ज्वर में इसको देते हैं, विशेष लाभ तो श्वास पर होता है।

यह भी चूंकि विष है अतः अवश्य ही इसके योग का भली प्रकार एक कोटिनिर्धारित करके तभी प्रयोग करना चाहिये और प्रयोग भी विशेष सावधानी से मात्रा इत्यादि का विचार करके करना ठीक होगा।

नमक—

साधारण लवण जिसे कहते हैं, इसका विस्तृत विवेचन जहां सेलाईन का उल्लेख हुआ है वहां काफी लिखा जा चुका है, यहां अधिक लिखना व्यर्थ है पाठकों को पीछे देखना चाहिये। Saline लवणोदक के विषय को देखें।

निम्बू—

निम्बू में स्वयं स्वरस होता है, इसके स्वरस को विशेष पूतिकृत शुद्धि द्वारा ग्रहण करके और फिल्टर से छान कर २-४ बूंद, शेष १२-१५ बूंद परिस्रुत जल मिलाकर लगाएँ। यदि स्थानीय उपद्रव और प्रतिक्रिया करे तो थोड़ी मात्रा में सोडाबाइ कार्ब मिलाकर जब प्रतिक्रिया हो जाय तब उसे पुनः फिल्टर से छान कर ५ बूंद यह और १५ बूंद जल मिलाकर गहरे मांस में इन्जेक्शन लगावें। अथवा सुरासाधित निम्बू का मदर टिंचर Mother tin. २-५ बूंद प्रयोग करें, परन्तु यह अधिक दाह और पीड़ा करने वाली बन जाएगी।

गुण— विशेष करके रक्त विकार, व्रण, अतिसार, रक्तपित्त और कुष्ठ के लिए प्रयोग करने को लिखा है।

निर्गुण्डी—

इसके अन्दर विशेष गुण मूत्र लाने का है, तथा कुछ अंशों में वात वेदना को भी शमन करती है अतः जहां भी मूत्र और रज प्रर्वतन इच्छित हो वहां इसका प्रयोग करें। प्रभाव में यह सौम्य है. अतः जहां हल्की क्रिया की आवश्यकता हो वहां ही इसको दें। इसके अभाव में अपामार्ग को दे सकते हैं।

इसकी मूल के स्वरस या लुगदी को ५ गुने रेक्टी. स्प्रिट में मिलाकर १ सप्ताह बंद शीशी में धूप में रखें पुनः फिल्टर करके छान लें, और इसमें से ५ से ७ बूंद तक १०-८ बूंद परिस्रुत जल मिलाकर मांस या अधस्त्वगीय इन्जेक्शन दें। ऐसा लिखा है कि यह सभी शोथ को दूर करता है सम्भव है मूत्रल गुणों के कारण अधिकांश में जलीय भाग निकल जाता हो ऐसी औषधि की जो विविध प्रकार की शोथ में उपयोगी सिद्ध हो जाए अवश्य ही उत्तम रीति से निर्माण करके, मात्रा शक्ति आदि के उल्लेख सहित वैद्यों तक आनी चाहिये।

पाषाण भेद—

सभी जानते हैं कि अश्मरी को नष्ट करने के लिए इसका प्रयोग होता है। इसके पंचांग का घन सत्व निर्माण करें. अथवा क्षारादि बनाएँ या सुरा साधित द्रव, उसको उचित परिमाण और मात्रा में परिस्रुत जल मिलाकर प्रयोग करें। विशेष आशा की जा सकती कि यह पथरी को निकाल या गला देगा, अगर इसका हानि रहित योग ऐसा उपकारी बन जाए तो। साथ साथ यह भी आशा है कि यकृत की पित्ताश्मरी और मूत्रकृच्छ्र में भी लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

वैसे गुण इसके अनेकों हैं पर उपरोक्त प्रधान गुण हैं. इन्जेक्शन मांस, या अधस्त्वगीय दें, और क्रमशः बढ़ाएँ।

दारुहल्दी—

दारुहल्दी का प्रयोग अभ्यान्तरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार होता है, बाह्य प्रयोग चर्म के रोगों और चर्म को पुष्ट करने के लिए त्वचा को स्वस्थ रखने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अभ्यान्तरिक प्रयोग यकृत तथा रक्तदोषों के लिए प्रमेह, आमाशय के विकारों में उपयोग होती है। अतः रक्त रोगों और पैत्तिक विकारों, प्रमेह की कुछ अवस्थाओं में भी यह प्रयुक्त होती है। इन्जेक्शन द्वारा इस ध्येय पर पहुंच सकते हैं या नहीं यह विचारणीय है, इसके काथ में इसके गुण आजाते हैं। अतः काथ को रसक्रिया द्वारा घन सत्व के रूप में परिवर्तित करके ६ब रेक्टी स्प्रिट ५ गुने में उसको एक सप्ताह तक रख कर पुनः फिल्टर करके तब मात्रा को निर्धारित करें, परीक्षा करें और प्रयोग करें, इसकी ऐसी बनी औषधि की मात्रा ५ बूंद से आरम्भ करें, रक्त में होने वाले परिवर्तनों की परीक्षा करते रहें, आशा है कि थोड़ा बहुत लाभ करेगा, प्रतिदिन देने की अपेक्षा प्रति दूसरे-तीसरे दिन अधस्त्वगीय मांसान्तर्गत विधि से दें।

पितपापड़ा--

ज्वरघ्न, विशेषकर दाह, प्यास और पैत्तिक सम्बन्धी ज्वरों तथा विकारों में विशेषकर के प्रयुक्त होता है। इसमें टैनिन के कारण आमाशय इत्यादि में और रक्तस्थित विकार क्षारोदों को निर्विष करके Tenates में परिवर्तित कर देता है, और दाहादि शान्त हो जाते हैं। इसका प्रभाव आमाशय पर मुख द्वारा सेवन करने पर अति शीघ्र होता है, इन्जेक्शन से यह प्रभाव सम्भव है देर से हो, हां रक्ताश्रित जो दोष हैं उनको अवश्य शान्ति देता होगा।

इसके गाढ़े काथ में, अथवा ताजी लुगदी से इन्जेक्शन निर्माण करने की बात सोचनी चाहिए। क्षार इत्यादि से नहीं। हमने इसकी परीक्षा नहीं की अतः कुछ भी सम्मति नहीं दे सकते, अन्यत्र लिखा मिलता है कि यह यकृत, फुफ्फुस, प्लीहा इत्यादि पर अपना प्रभाव डालता है। यकृत को लाभ पहुंच सकता है। इन्जेक्शन द्वारा इसको और भी सौम्य तथा अत्यन्त उपयोगी बनाया जाना चाहिए। तभी गुण कर सकेगा।

पीपल--

पीपल एक तो वह जो कणा, मागधी, कृष्ण नाम से प्रसिद्ध है, दूसरी पीपल जिसका वृक्ष होता है। हमारी सम्मति में पहले वाली पीपल का इन्जेक्शन बनाना सहज नहीं, और फिर अत्यन्त दाहक गुणों से वह युक्त होगा, स्थानीय पीड़ा के मारे रोगी छटपटाता रहेगा, अतः इसका प्रयोग मुख द्वारा ही श्रेष्ठ है, दूसरे प्रकार के पीपल का उपयोग इन्जेक्शन के लिए किया जा सकता है। यह अत्यन्त पित्तनाशक और विशेषकर रक्तस्थापक गुणों से युक्त है, मुख द्वारा सेवन करने पर वमन और अतिसार को लाभ देता है। प्रमेह और रक्तपित्त में प्रशस्त है, इसमें Tanin अधिक होता है, मल्ल के विष को हरता है, सर्प के विषों में इसकी टहनी कानों में ही केवल देने से सर्प विष चला जाता है। अतः विशेष करके अधोगत रक्त पित्त, और रक्त पित्त प्रदर, तृष्णा, सर्पविष और मल्ल के विष पर, तथा अन्य विषों के लिए, जिनके क्षारोद विषैले होते हैं, यह विशेष उपकारी हो सकता है। इसके अत्यन्त स्वच्छ सिद्ध द्रव को समान भाग रेक्टीफाईड स्प्रिट में मिलाकर ५ दिन दूध में रखें और पुनः फिल्टर करके तनक सा एक कांच की परखनली में लेकर उतना ही परिस्रुत जल मिलाकर देखें यदि घोल गदला होकर फटा सा हो जाए तो सेवन योग्य बनाने के लिए इसको ४-५ बूंद मांसगत ही दें, परिस्रुत जल न मिलावें, सात्म्य हो जाए तो अगली बार ८ बूंद तक दें, प्रथम मात्रा और प्रतिक्रिया को निर्धारित करें, तथा अपने योग की उत्तमता की परीक्षा करलें।

और जो पुस्तकों में पिप्पली के गुणों का उल्लेख इन्जेक्शन के लिए मिलता है वह आयुर्वेदीय निघण्टु तथा मुख द्वारा सेवनोपरान्त शान्त होने वाले रोगों की प्रसिद्ध फैली हुई है, उनका उल्लेख है, मुख द्वारा देने पर मुख से लगा गुदा तक निरन्तर इसका चरपरापन सतत जलन Counter Irritating करने वाला रहता है और इन अवयवों को अपना कार्य करना अनिवार्य होकर शरीर को लाभ सा होता है। पिप्पली के क्षार द्वारा या अन्य विधि से इन्जेक्शन बनाए गए हैं उनसे लाभों की आशा नहीं कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते हैं। अतः अश्व-त्वक से ही इन्जेक्शन बनाकर लाभ उठाने की कोशिश करनी चाहिए।

बांसा--

बांसा एक महान उपकारी और अधिक गुण सम्पन्न औषधि है, आयुर्वेद की पुस्तकों में रक्तपित्त, क्षय, कास, श्वास इत्यादि पर यह अमोघ औषधि वर्णित है। इसके पत्र, स्वरस, क्वाथ, घन सत्व और क्षार का भी कहीं-कहीं प्रयोग होता है, अन्य क्षारों की तरह कास में यह भी मुख द्वारा देने से लाभ करता है, इन्जेक्शन द्वारा शायद न दें, यद्यपि कास पर बांसाक्षार देने का चलन है, पर इन्जेक्शन द्वारा यह क्यों लाभ नहीं करेगा इसमें वही सैद्धान्तिक बात रस गुण वीर्य विपाक की है, क्षार आध्मान को पेट में पहुंचते ही दूर कर देता है वह इन्जेक्शन द्वारा यह कार्य (आध्मान-नाशक) कभी नहीं करेगा; अस्तु बांसाक्षार के बारे में यही कह सकते हैं, पेट के विकार जन्य जो कास होगी वह तो शमन हो जायेगी, परन्तु जो ऐसी वैसी और कारणों से है, वहां यह निष्फल हो जाती है। इसी से मूल औषधि से ही इन्जेक्शन बनाने का प्रयास होना चाहिये।

पुटपाक स्वरस, स्वरस अथवा स्वस्थ पचाङ्ग के क्वाथ से औषधि निर्माण करनी चाहिए। सभी दशाओं में शरीर के अंदर जाने वाले क्रिया शील भाग की मात्रा समान होनी चाहिए।

इसके सिद्ध द्रव के साथ लशुन, या दुग्धनीर मिलाकर इसकी शक्ति बढ़ाई जा सकती है, बांसा सीधा फुफ्फुस पर प्रभाव करे इसके लिए इसको अन्य फुफ्फुसीय रोगों में प्रशस्त औषधियां जैसे केल्शियम इत्यादि के साथ देने की व्यवस्था करनी चाहिए। एक मात्रा निश्चित होजाने के उपरान्त इसका प्रयोग किया जा सकता है। अभी तक बांसा का विश्वसनीय प्रयोग नहीं बन पाया है जो इन्जेक्शन में भी बांसा की तरह काम दे सके।

ब्राह्मी--

यह रसायन, और मेधावर्धक, स्वरयंत्र सुधारक, कास शोथ के लिए प्रयुक्त होता है। मगर क्षार से निर्मित इन्जेक्शन जैसा कि कुछ निर्माताओं ने अपनी पुस्तकों में लिखा है, ये गुण कदापि भी नहीं दिखा सकते। अतः सिद्ध द्रव, या इसका मदरटिंचर बनाकर, क्षारोद बना कर ही प्रयोग करें, वैसे नहीं। आयुर्वेद में इसकी अत्यन्त महिमा बखान की गई है तथा जन साधारण में भी इसके गुणों की चर्चा अधिक है अस्तु इसका उपयोगी और विश्वसनीय उपकारी तथा कोटि निर्धारित योग बनाने की जरूरत है। जो आजकल इन्जेक्शन बने हुए इसके आते हैं उनके बारे में कुछ भी निश्चित रूप से हमको निर्माता बताने में सम्भव है संकोच करें, और उनके योग, जैसे कि उन्हों ने लिखा है कि इसके क्षार का इन्जेक्शन बनाकर प्रयोग करें, क्षार द्वारा ही बना हुआ हो, ऐसे इन्जेक्शनों को न व्यवहार करना ही ठीक है।

बाराहीकंद--

बाराहीकंद के क्षार से इन्जेक्शन बनाने की सूझ भी दी गई है जो एक दम बल, वीर्यवर्द्धक औषधि के बारे में निःसंकोच रूप से लिख दिया गया है। हमको पढ़ते हुए लेखक की लेखनी पर तरस आया, जब उन्होंने इसके गुणों की चर्चा की कि यह परमरसायन, वीर्य वर्द्धक, बल, वर्णकारक, वर्ण स्वर को हितकारी इत्यादि, और इसके रस स्वभाव का वर्णन जहां इन्होंने किया है वहां लिखा है कि मधुर, स्निग्ध तथा पुष्टिकारक है, क्या वे लेखक महोदय बता सकेंगे कि ये गुण इसके क्षार में भी होंगे। हम डंके की चोट कहते हैं कि इसका वे कभी उत्तर नहीं दे सकेंगे। अस्तु यहां लेखक ही नहीं हम प्रकाशकों का भी जो स्वयं पुराने वैद्यों में हैं, इसमें दोष मानते हैं कि उन्होंने आंख खोलकर

[शेषांश पृष्ठ ६०६ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कतिपय आयुर्वेदिक पेटेण्ट इन्जेक्शन

इस प्रसंग में हम केवल उन्हीं इन्जेक्शनों का उल्लेख करेंगे जो आज भारत में विविध आयुर्वेदिक इन्जेक्शन निर्माता अपने पेटेण्ट नामों से बना रहे हैं इनके विषय में कहीं कहीं पर तो यह उल्लेख मिल जाता है कि ये क्षार, या सिद्ध द्रव अथवा सत्व. घन-सत्व द्वारा तैयार किये गए हैं, परन्तु कहीं कहीं कुछ भी उल्लेख नहीं मिलता। क्षारों द्वारा बने इन्जेक्शनों के विषय में हमारा मत है कि वे हानिकर और अनुपयोगी हैं, अन्य विधियों के विषय में इस विशेषांक के पूर्व खण्ड में उल्लेखनीय चर्चा हो चुकी है। अस्तु यहां पुनः लिखने की आवश्यकता नहीं। पिछले प्रकाशित इन निर्माताओं के लेखों से यह अवश्य मालूम हो जाता है कि वे अधिकांश में क्षारों द्वारा ही इन्जेक्शन बनाने के पक्ष में हैं। वे कहां तक उपयुक्त मार्ग पर हैं, यह धन्वन्तरि के पाठकों को हमारे और उनके मतों, और प्रमाणों से विदित होगया होगा।

निम्न इन्जेक्शन विश्वस्त फार्मेसी महेन्द्रगढ़ द्वारा निर्मित और प्रस्तुत हैं—

जूड़ीना (विश्वस्त) (चिरायता, सप्तपूर्ण कुटकी इत्यादि का मिश्रण) सर्व ज्वरों पर, विशेषकर मलेरिया, सप्ताह में २-३ बार त्वचा, या मांसगत प्रयुक्त करना चाहिए।

कष्टालीन--(वि) (कुचिलु, अकरकरा, पीपलामूल इत्यादि) सम्पूर्ण शारीरिक दर्द पर मार्फिया के स्थान पर प्रयुक्त करना चाहिए। १ सी. सी. मात्रा में त्वचा या मांसान्तर्गत विधि से लगावें।

अर्शोल--(वि) (सूरण, रसोन इत्यादि)। अर्श पर प्रयुक्त होता है, रक्तस्राव, जलन, दर्द, खुजली इत्यादि जो खूनी और बादी दोनों प्रकार की अर्श में प्रायः होते हैं बन्द हो जाते हैं १२ सी.सी. त्वचा, मांसान्तर्गत विधि से सप्ताह में दो तीन बार तक प्रयोग करें।

श्वासारि--(वि)-(कायफल, भारङ्गी, इत्यादि) श्वास दमा के लिए। १ बार मे दौरा शान्त हो जाता है। सप्ताह में २-३ बार त्वचा या मांसगत दें।

वातारि—(वि)-(कुचला, अश्वगंधा इत्यादि) आमवात संधिवात, एवं अन्य वातरोगों पर, उपरोक्त विधि से ही दें।

रसायन—(वि) (अश्वगन्धा-शिलाजीत इत्यादि), प्रमेह, स्वप्नदोष, धातुस्राव, शीघ्रपतन आदि में, उपरोक्त विधि से दें।

प्रदरारि—(अशोक, लोध इत्यादि)-प्रदर, गर्भाशय का विकार, प्रयोग उपरोक्त के अनुसार।

खांसीना—(बहेड़ा, नागपात्र इत्यादि)-कास, श्वास-प्रणाली के विकार पर, उपरोक्त विधि से प्रयुक्त होता है।

उष्णवातोल—(शीतलचीनी, चन्दन इत्यादि) सुजाक, मूत्रकृच्छ्र पर। उपरोक्त विधि के अनुसार दें।

यकृत्प्लीहारि—(पलवा कुटकी इत्यादि) जिगर और तिल्ली की वृद्धि एवं विकार पर। उपरोक्त विधि से दें।

मधुरारि—(मुनक्का खूबकला इत्यादि) मंथर ज्वर की प्रत्येक दशा पर। सप्ताह में तीन बार उपरोक्त विधि से।

खुजलीना—(रुधिर, बावची इत्यादि) सूखी गीली खाज पर उपरोक्त विधि से दें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेहोज़—(गुड़मार शिलाजतु) मधुमेहपर उपरोक्त विधि से।

सन्निपातोल—(कस्तूरी अभ्रक इत्यादि) सन्निपात की प्रत्येक अवस्था में नाड़ी की गति क्षीण होने पर भी प्रयुक्त है। विधि-मांस या शिरागत विधि से २४ घण्टे में दो तीन बार प्रयोग करें।

उपदंशोल—(स्वर्णक्षीरी रीठा इत्यादि) उपदंश की प्रत्येक दशा में इसे दें। मांस या त्वचा द्वारा सप्ताह में १ सी. सी. से २ सी. सी. तक दें।

रजः कष्टारि—(कसीस एलुवा इत्यादि) स्त्रियों के मासिकधर्म सम्बन्धी कष्ट के लिए सप्ताह में तीन बार १ सी. सी. की मात्रा में दें।

विशूचिकान्तक—विशूचिका में प्रत्येक ४-४ घण्टे पर मांस वा शिरागत १-२ सी. सी. मात्रा में दें।

विषहरण—समस्त विषों पर, विषैले जन्तुओं पर प्रयुक्त होता है। ½ से १ सी. सी. तक दंश स्थान पर मांस या त्वचा द्वारा प्रविष्ट करें।

व्रणान्तक—(चोबचीनी कचनार इत्यादि) दूषित व्रणों की पूय सुखाने के लिए १-२ सी. सी. सप्ताह में २-३ बार प्रयोग करें।

कल्पद्रुम--शरीर में केल्शियम की कमी को दूर कर प्रारम्भिक क्षय, श्वास, प्रमेह, रक्तपित्त, हृदय की जलन, पैत्तिक रोगों में, १-२ सी. सी. सप्ताह में ३ बार मांस या शिरा द्वारा दें।

निम्न इन्जेक्शन त्वचा एवं मांसान्तर्गत विधि से प्रयुक्त होते हैं जिन पर + निशान लगा हुआ है उन्हें शिरान्तर्गत भी प्रयुक्त कर सकते हैं, ऐसा संकेत मिलता है, और यह कि ये इन्जेक्शन जड़ी बूटियों द्वारा निर्माण किए गए हैं। और झांसी के जी. ए. मिश्रा भा० फार्मेसी द्वारा निर्मित एवं प्रस्तुत हैं—

स्पेशलकालरा--हैजा के लिए।

स्पेशल खुजलीना—खुजली खाज के लिए।

स्पेशल पैरालेशिन—पक्षाघात, ध्वज भंग, निमोनियां, वातव्याधि के लिए।

स्पेशल रक्तारिन—रक्तविकार, श्वान—दंश विष मसूरिका में।

स्पेशल शूलारिन--सर्वाङ्ग शूल में।

स्पेशल स्वासिन--श्वास दमा में।

स्पेशल क्षुधारिन--भूख की कमी में।

स्पेशल क्षय—राजयक्ष्मा में।

स्पेशल नाय--मलेरिया में बहु प्रशस्त है।

तम्बाकू - दंत रोग, वृश्चिक दंश, हिक्का, अश्मरी में।

एक नवीन आयुर्वेदिक इन्जेक्शन निर्माता 'मार्तण्ड फार्मेस्युटिकल्स' नाम से बड़ौत Baraut, U. P. में स्थापित हुई है। उनका कथन है कि उन्होंने वनस्पतियों के क्रियाशील तत्वों से ही इन्जेक्शन निर्माण किए हैं और क्षारों द्वारा बने इन्जेक्शन बेकार और भ्रमोत्पादक हैं। अपने प्रयास में निर्माणशाला इसी से अब तक थोड़े से ही इंजेक्शन बना सकी है, जिनको पूर्ण प्रभावशाली होने का भी उन्होंने उल्लेख किया है, उनके निम्न इंजेक्शन हैं—

१-कुर्चीनम--कुटज, इंद्रयव, कुटकी, घातकी पुष्प, लोध्र, अर्क मूल त्वक् द्वारा यह निर्मित है।

गुण—प्रवाहिका, ग्रहणी, रक्त पित्त, उदर विकार, रक्तातिसार, हैजा, मरोड़ा, राजयक्ष्मा जन्य अतिसार, अर्श, आध्मान।

[पृष्ठ ६०४ का शेषांश]

इन पुस्तकों के मेटर पर गम्भीर पूर्वक विचार नहीं किया लेखक क्या गा रहा है और आयुर्वेद क्या कहता है। अतः उनके, अपने, आयुर्वेद, तथा जन साधारण, छोटे वैद्यों के हित के लिए उनको यह नीति छोड़ देनी चाहिए। बाराहीकंद का उपयोग इन्जेक्शन द्वारा करने की बात है अच्छी, पर इस तरह नहीं, कोई और विधि निकालें जिसमें योग में भी मधुर, स्निग्ध और पुष्टिकारक गुण पाए जासकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विधि—मांसपेशीगत सप्ताह में ३ बार १ सी. सी.।

२-पुनर्नवा-इसमें पुनर्नवा, पारिभद्र, कालमेघ का योग है।

गुण—शोथ, पाण्डु, रक्तहीनता, सर्वांग शोथ, यकृत प्लीहा वृद्धि, अरुचि, मूत्र की कमी, गर्भाशयिक दुर्बलता, प्रमेह में दिया जाता है।

विशेष—पाण्डु रोग से उत्पन्न हुआ मुख हाथ पांव उदर इत्यादि के शोथ पर विशेष गुणकारी है।

विधि—प्रति तीसरे दिन मांस पेशीगत देना चाहिये। २ सी. सी.।

३-क्लीबान्तक-इसमें नक्राण्ड, जातीफल, गोखरू, क्षीरकाकोली के क्रियाशील सार हैं।

गुण – नपुंसकता, लिंग की शिथिलता, शीघ्रपतन, स्वप्नदोष, जननेन्द्रिय का पतलापन, शारीरिक दुर्बलता, अपूर्ण जननेन्द्रिय विकास, इन्द्रिय स्थूलीकरणार्थ।

विशेष—पूरा कोर्स १८ इन्जेक्शन का है, ६ इन्जेक्शन के उपरांत लाभ होने लगता है।

विधि—सप्ताह में दो या अधिक बार मांसांतर्गत विधि से दें। १ सी. सी.

४-खटिक—खटिक, शुक्ति, प्रवाल युक्त यह योग है।

गुण—शरीर में चूने की कमी, राजयक्ष्मा की प्रथमावस्था, अस्थि वक्रता, अस्थि मृदुता, क्रिमि दन्त, फुफ्फुसावरण शोथ, रक्तपित्त।

विधि—मांसपेशीगत सप्ताह में ३ बार तक दें। २ सी. सी.

५-दुग्ध प्रोटीन-(Milk proein) (वसा एवं क्रिमि रहित दुग्ध द्वारा निर्मित)

गुण—तीव्र एवं जीर्ण शोथ, सर्व संधि शोथ, अर्बुदीय संक्रमण गर्भाशयिक शोथ, पेडू का दर्द, प्रदर, कुष्ठ, खाज, पामा, बिसर्प, चर्मरोग, फोड़ा, पकी फुंसियों में।

विशेष—प्रदर के लिए १२, खाज के लिए १-६ इन्जेक्शन पर्याप्त हैं।

विधि—सप्ताह में तीन या अधिक बार मांस पेशीगत दें।

६-प्रवाल—मूंगा, मुक्ता, शम्बूक का मिश्रण है। मात्रा-२ सी. सी.

गुण—शुष्ककास, शीत पित्त, गर्भावस्था की मूर्च्छा, यक्ष्मा जन्य अतिसार, कामला, स्वरभेद, टांसिल वृद्धि, कंठ शालूक, शरीर चूने की कमी, अस्थि-रोग, गर्भ के पुष्ट करने के लिए, प्यास इत्यादि।

प्रयोग—प्रतिदिन अथवा सप्ताह में ३ बार मांसगत दें। २ सी.सी.

७-महारशी —रसोन सत्व, काकजंघा, धूप वृक्ष, कालनिर्यास का योग है।

गुण—आमवात ज्वर एवं वेदना, स्नायुशूल स्नायु-शोथ, संधि शोथ, पक्षाघात, वातरक्त, अर्दित, कंठ शालूक, गृध्रसी, वात कफ ज्वर।

विशेष—इसका एक ही इन्जेक्शन आमवात में दर्द एवं ज्वर को कम कर देता है।

विधि—रोगानुसार प्रतिदिन या सप्ताह में ३ बार मांसपेशीगत दें। २ सी. सी.

८-स्मृतिदा-द्वीपांतर वच, पारसीकयवानी, लक्ष्मणा, अपराजिता, शंखपुष्पी का योग है।

गुण—अति प्रलाप, उन्माद, हिस्टीरिया के दौरों पर, मानसिक विकार, मस्तिष्क को शान्ति देने के लिए।

विधि-मांस या त्वचांतर्गत २० घण्टे में दो से अधिक नहीं अथवा सप्ताह में तीन बार दें। १ सी. सी.

९-सोमा—कंटकारी, सोमकल्प, कृष्णतुलसी, बांसा, ब्राह्मी युक्त योग है।

गुण—नवीन एवं पुरातन श्वास में, मूर्च्छा, हृदय की अवस्थित गति में, बलगम सूख जाने पर, शीत-पित्त पर, श्वास की गति ठीक करने के लिए, सर्प विष, कास, हृत्शूल में देना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विधि—आवश्यकतानुसार त्वचा एवं मांसान्तर्गत विधि से दें। २ सी. सी.।

१०-शरपुंखा—शरपुंखा, कालमेघ, देवदाली का योग।

गुण—यकृत प्लीहा वृद्धि, पाण्डु, हलीमक, अग्निमांद्य प्रमेह, कामला, अजीर्ण, अर्श, क्रिमि रोग, आध्मान।

विधि—सप्ताह में दो बार तक मांसपेशीगत दें। २ सी. सी.।

११-शूलान्तक—स्वर्णवल्ली, भूम्यामलकी, भूर्जपत्र, जलशील, गिरीबूटी (Atropa belledonna) का योग है।

गुण—वातरक्त और आमवात में तीव्र पीड़ा हो रही हो, स्नायुविक शोथ, अपस्मार अर्धावभेद, शिरःशूल, गृध्रसी, दन्त एवं नेत्र नाड़ी का तीव्र शूल, वमन, हिक्का, कफज कास, कफ प्रसेक, कुकुर कास, विशूचिका, बहुमूत्र, स्वप्नदोष, कष्टार्तव, बच्चों का बिस्तर पर मूत्र त्याग, स्तनों का दूध सुखाने के लिये, वातज एवं नाड़ी-शूलों पर, गर्भिणी वमन, हिस्टिरिया इत्यादि में दिया जाता है।

विशेष—इसका प्रतिकार (antidote) सोया है, जिन लोगों को बार बार मूत्र त्याग होता है, उन लोगों को इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

मात्रा एवं विधि—युवक को १ सी. सी. १२-१६ वर्ष तक १२ सी. सी. ५० वर्ष से ऊपर शरीर दशा और स्वास्थ्य के अनुसार मात्रा कम ही देनी चाहिए। ५ वर्ष से कम शिशु को इसका प्रयोग वर्जित है। मांस या त्वचान्तर्गत विधि से प्रयुक्त करें।

१२-हिरण्य—बांसा, करंज, मुक्ता, सोमकल्प, कृष्ण-तुलसी का योग है।

गुण—श्वास दमा, सर्व प्रकार के श्वास, जीर्ण कास, काली खांसी, श्वास काठिन्य, फुफ्फुसावरण शोथ में, हृच्छूल में प्रशस्त है।

विशेष—दमे के तीव्र दौरे के समय विशेष उपकारी है, साथ में सोमा का भी प्रयोग कर सकते हैं। विशेष कर हृदय और श्वासगति उत्तेजक है।

मात्रा मार्ग—१ सी. सी. त्वचा अथवा मांसान्तर्गत विधि से दें।

१३-तापीकर—कुचले का योग है।

गुण—उत्तेजक, श्वासगति स्थिरकारक, फुफ्फुस एवं हृदय को बल देता है कास, जीर्ण कास, निमोनियां में, कम्पवात, लकवा, अर्दित, शरीर गतवात, कम्प निरोधक, अजीर्ण नाशक, क्षुधा-वर्धक, आध्मान नाशक है।

विधि—सप्ताह में दो या तीन बार त्वचान्तर्गत १ सी. सी. दें।

इन इन्जेकशनों में यह विशेषता है कि योग में मिश्रित प्रत्येक घटक का मान ग्राम प्रति सी. सी. में अंकित है, और यह कि व्यवहार में रोग अवस्था, विशेष का निषेध जहां आवश्यक है निर्दिष्ट किया गया है। इस निर्माता ने कुल ये तेरह इन्जेकशन निर्माण किये हैं।

निम्न इन्जेक्शन एम० ए० बी० आयुर्वेदिक इन्जेक्शन नाम से आयुर्वेदिक इन्जेकशन सप्लाई कम्पनी द्वारा प्रस्तुत, घन सत्व, क्षार स्राव, रसक्रिया और होम्योपेथिक औषधि द्वारा निर्मित हैं। इनमें आयुर्वेदिक इन्जेकशनों की अवधि ३ वर्ष तक है, यदि इनमें किसी प्रकार के कण न दिखाई दें तो ५ वर्ष तक प्रयोग कर सकते हैं, कण पड़ने पर व्यवहार नहीं करना चाहिए। क्षार द्वारा बने इन्जेकशन लाभकारी होंगे इसमें हमें शंका है।

१—काला जारीना—कालाजार (Kalazar) पर प्रयुक्त होता है, इसमें एन्टीमनी (सुरमा) का प्रयोग नहीं है। इसके २-३ बार के प्रयोग से ज्वर घटना आरम्भ होता है, ५-७ इन्जेकशनों में प्लीहा यकृत म होकर सामान्य हो जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्तहीन दशा में विशेषरूप से दिया जाना चाहिए।

विधि—सप्ताह में २-३ बार मांसान्तर्गत दें, शीघ्र-गुणकारी होने के लिए शिरा द्वारा बच्चों और जिनकी शिरा उभरी न हों उन्हें मांसगत दें। मांसान्तर्गत देते समय बराबर का परिस्रुत जल मिला लेना चाहिए। ऐसा करने से दर्द, शोथ लहर इत्यादि उपद्रव नहीं होते।

मात्रा—१ वर्ष के बच्चे को ½ सी. सी., के २ इन्जेक्शन देकर मात्रा बढ़ाकर १ सी. सी. कर दें। ४-६ वर्ष के बालक को १ सी.सी. से २ सी.सी. तक ११ वर्ष से पूर्ण वयस्क को १ सी. सी. का प्रयोग करके २ २ सी. सी. फिर ३-३ सी. सी. दें।

२-मैलेरीना—मलेरिया के रोकने के लिए नवीन या पुरातन मलेरिया में प्रशस्त।

मात्रा—१ सी. सी. से २ सी. सी. तक दशा के और अवस्था के अनुसार, सामान्यतया मांसपेशीगत, और यदि दुर्बलता, हृद्रोग न हो तो शिरागत भी दे सकते हैं।

३-फेबरीन—औषधि स्वेदकारक है, ज्वर उतारने के लिए मांसगत १।२ सी. सी. से १ सी.सी. तक।

४-चिरेन्थिन—(अपामार्ग का योग है), उदरशूल, परिणामशूल, जलोदर, विलम्बित प्रसव, अश्मरी, श्वास, भस्मक, रक्तप्रदर, मंथर, नेत्ररोग, मलेरिया, रक्त-विकार, इत्यादि में।

मात्रा विधि—मांसान्तर्गत, शिरान्तर्गत, आधा सी. सी. से २ सी. सी. तक सप्ताह में २-३ बार दें।

५-ड्रोप्सीना—शोथ अथवा जलोदर के लिए (पुनर्नवा, अपामार्ग इत्यादि) इसको सदा मांसगत देना चाहिए, १।२ सी. सी. से २ सी. सी. तक सप्ताह में २-३ बार तक दें।

६-सोलो मंजष्ट—(वांसा कंटकारी इत्यादि का योग है) श्वास, कास, रक्तपित्त, निमोनियां, नवीन या जीर्ण कास में दें। १।२ सी. सी. तक सप्ताह में २-३ बार तक मांसगत दें।

७-प्रवालामृत—(प्रबाल, अमृता का योग) एलोपैथिक केल्शियम के इन्जेक्शन के समान, और उन्हीं गुणों के लिए इसे प्रयोग करते हैं। बालशोष, प्रमेह, रक्तपित्त, पैत्तिक वृद्धि में और निमोनियां में देने का आदेश है।

मात्रा विधि—१ सी. सी. से ३ सी. सी. तक सप्ताह में २-३ बार तक दें। (मांसान्तर्गत विधि)

८-डिसेन्ट्रीना—(कुटज, बिल्व, इन्द्रयव इत्यादि) आमातिसार, रक्तातिसार एवं प्रवाहिका इत्यादि में १।२ सी. सी. से २ सी. सी. तक मांसान्तर्गत विधि से सप्ताह में २-३ बार दें।

९-रियूमेटीना—(रास्ना दशमूल, रसोन इत्यादि) सब प्रकार की वातव्याधि में, अर्द्धांगवात, संधिवात इत्यादि में १।२ सी. सी. से ३ सी. सी. तक सप्ताह में २-३ बार तक मांसान्तर्गत विधि से दें।

१०-गोम्बोसल—(चोक, चोबचीनी, उशबा इत्यादि) उपदंश की प्रत्येक दशा के लिए रक्तविकार, में भी प्रयुक्त होता है। १।२ सी. सी. से ३ सी. सी. तक मांसान्तर्गत तथा शिरान्तर्गत विधि से प्रयुक्त करें। सप्ताह में २-३ बार।

११-गोनोलीना—(चन्दन, शीतलचीनी इत्यादि) सुजाक, मूत्रकृच्छ्र इत्यादि में किया जाता है। २ सी. सी. मात्रा में सप्ताह में २-३ बार मांसान्तर्गत दें।

१२-ल्यूकोरीना—श्वेत, रक्तप्रदर, रजोविकार, वृक्कशोथ, गर्भाशय शोथ, वृक शोथ, च्युति, गर्भाशय शैथिल्य इत्यादि में-१ सी. सी. से ३ सी. सी. तक मांसान्तर्गत वा शिरान्तर्गत विधि से सप्ताह में २-३ बार तक दें।

१३-सुतिकालीना—स्त्रियों के प्रसूतिरोग के लिए-सूतिका ज्वर, वातज्वर, वात-व्याधि इत्यादि में १ सी. सी. से २ सी. सी. तक शिरा या मांसान्तर्गत विधि से दें। सप्ताह में २-३ बार तक।

१४-कोलेरीना—(कर्पूर, पोदीना इत्यादि) हैजा की प्रथम व द्वितीय अवस्था में देते हैं। त्वचान्तर्गत,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मासान्तर्गत विधि से १।२ से २ सी. सी. तक दें।

१५-ब्रेनो—(ब्राह्मी, शंखपुष्पी इत्यादि) मस्तिष्क की दुर्बलता, उन्माद, पागलपन स्वरभङ्ग इत्यादि में देते हैं। इससे मूत्र-त्याग अधिक होता है। सप्ताह में २-३ बार मांसान्तर्गत विधि से १।२ सी. सी. से २ सी. सी. तक दें।

१६-हृदोल—(अर्जुन अश्वगंधा इत्यादि) हृदय की प्रत्येक बीमारी में, धड़कन, सांस फूलना, निद्रानाश, हृत्शूल इत्यादि हृदयगत रोगों में, १ सी. सी. से २ सी. सी. तक मांसान्तर्गत सप्ताह में २-३ बार दें।

१७-अस्थामीन—श्वास, तमकश्वास में दिया जाता है। १।२ सी. सी. से २ सी. सी. तक मांसान्तर्गत विधि से दें।

१८-प्रवर्तनी—रजोलोप, रजःस्राव पुनः खोलने के लिए दिया जाता है। १ सी. सी. से २ सी. सी. तक मांसगत दें।

१९-गिलोय—पौष्टिक, अग्निवर्धक, दाह एवं ज्वर नाशक, जीर्ण ज्वर, यकृत सीहा रोग, पित्ताशय एवं आमाशय के रोगों में देते हैं। अन्य औषध जन्य दाह, रोगजन्य प्रदाह में अमृता प्रशस्त है।

मात्रा-१-३ सी. सी. तक, सप्ताह में २-३ बार मांसान्तर्गत विधि से दें।

२०-कम्फोरीना—(कर्पूर का योग) नाड़ी गिरने की दशा में इसे देते हैं। १ सी. सी. की मात्रा में १-१ या ३-३ घण्टे पर दें।

२१-कैम्फर—(कर्पूर का इन्जेक्शन) जहां-जहां पीछे वर्णित कर्पूर के तैल (Comphor in oil) का प्रयोग हो वहां-वहां इसे दें। १।२ सी. सी. से २ सी. सी. तक दें।

२२-बृहत्कस्तूरी भैरव—शास्त्रीय प्रयोग बृहत्कस्तूरी भैरव रस का इन्जेक्शन है, यह उत्तेजक, वायुनाशक, आक्षेप निवारक, मूत्रल एवं स्वेदल तथा कामोद्दीपक है। रोगी की अन्तिम दशा में जब नाड़ी गिर रही हो, हृदय दुर्बल हो ऐसे समय में इसको १ सी. सी. १-१ या २-२ घण्टे बाद देना चाहिए।

२३-स्वर्ण चन्द्रोदय—हृदय को बल देने वाला, शक्ति बल रक्तवर्धक, राजयक्ष्मा, जीर्ण ज्वर, कास श्वास, प्रमेह, स्नायुविक दुर्बलता, इत्यादि रोग जन्य दुर्बलता में प्रशस्त-१ सी. सी. से २ सी. सी. तक त्वचान्तर्गत मांसान्तर्गत विधि से सप्ताह में २-३ बार दें।

जनरल टॉनिक-

रोग पश्चात् दुर्बलता, यकृत सीहा वृद्धि जन्य शोथ, पाण्डु, हलीमक, कामला इत्यादि में, एवं रक्त की कमी, निर्बलता में दिया जाता है। इसके अतिरिक्त मलेरिया, कालाजार, सीहा, यकृत रोग, शोथ इत्यादि दूर होजाते हैं। बल देने वाला योग बताया गया है। मासान्तगत सप्ताह में २-३ बार १ सी. सी. मात्रा में प्रयुक्त करें।

इन इन्जेक्शनों के अतिरिक्त निम्न में संक्षेप से इन निर्माताओं के विविध प्रकार की वनस्पतियों एवं द्रव्यों के भी इन्जेक्शन निर्माण किये हैं जिनके गुण इस प्रकार उन्होंने लिखे हैं। इनके द्वार द्वारा बने इन्जेक्शनों की उपादेयता के विषय में शंकाएं हैं।

तुलसी—कफज्वर, हिक्का, अश्मरी, स्नायुशूल, लकवा।

अदरख—अजीर्ण, मलबद्धता, वमन, शूल, कास।

अजवायन—सन्निपात, प्रलाप, निद्रानाश, आंतों की ऐंठन।

अपराजिता—गलगण्ड, घेघा, हृदय की दाह, कामला, हिक्का।

अर्जुन—हृद्रोग, भग्न, क्षत, व्रण।

अमलतास—कब्ज, सुन्नता, गठिया, हरिद्राप्रमेह

अनार—क्रिमि, तृष्णा, दाह, कुष्ठ रोग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अशोक—रजोविकार, प्रदर, अपची, शोथ।
अग्निमंथ—शीत पित्त, शोथ, अग्निमांद्य।
अर्कमूल—श्लेदल, श्वास, उपदंश, व्रण, कुष्ठ।
अपामार्ग—अपच, उदर रोग, पथरी, बिलम्बितप्रसव, दन्तशूल।
इन्द्रायण—अण्ड वृद्धि, अर्बुद, जलोदर, श्लीपद।
इन्द्रयव—वातज्वर, अतिसार, आमातिसार रक्तार्श।
उशीर—मूत्र कृच्छ्र, शोथ, छर्दि, अम्लपित्त, विसर्प, मसूरिका
उशवा—रक्तविकार, कण्डु, दाह, रक्तपित्त, शोथ।
एरण्ड—आमवात, वातजशूल, रक्त पित्त, शोथ।
कपूर—विशूचिका, हृदयावसाद, नेत्ररोग, तृष्णा, शुक्र-वर्धक
भृंगराज—मूर्च्छा, शिरोरोग।
काकजंघा—क्षय, क्रिमि, व्रण, चर्म-शून्यता।
केशर—कण्ठरोग, शिरःपीड़ा, कान्ति-हीनता, अर्द्धावभेद।
कण्टकारी—कास, रक्तपित्त, श्वास।
कटसरैया—मसूरिका, रक्तविकार, शोथ, रजोदर्शन, कास।
काञ्चनार—गण्डमाला, मुखपाक, रक्त मूत्र।
खदिर—कुष्ट, रक्तदोष, प्रमेह, पाण्डु, रक्तपित्त।
गिलोय—अम्लपित्त, दाह, शिरोरोग, ज्वर, पैत्तिक विकार।
गोबर—पारद विष, मूढ़गर्भ।
गोखुर—मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, दाह, बलवर्धक शीतल।
घृतकुमारी—हैजा, मासिक धर्म का रुकना, गर्भपात-कारक।
चोबचीनी—उपदंश, भगन्दर, चर्मरोग, कण्ठमाला।
चालमोगरा—कुष्ठ, रक्त रोग, चर्मगत रोग।
चिरायता—ज्वरदाह, तृषा, प्रदर, पित्तकरोग, रक्तार्श।
सूरणकन्द—अर्श, गुल्म, प्लीहा, क्षुधा वर्धक।
तालपत्र—मेद वृद्धि, वातपित्त, दाह, शोथ, विष।
दशमूल—प्रसूत, वातव्याधि, सन्निपात, कास।
दुरालभा—अतिसार, विषमज्वर, गुल्म, रक्त विकार।
श्वेतदूर्वा—मूर्च्छा, कण्ठरोग, वमन, तृषा, कफ-पैत्तिक दाह।
नीलकण्ठी—हृदयावसाद, शूल, रोग, कण्डु, आमवात
नीम्बू—रक्त विकार, मलबद्धता, मंदाग्नि
निर्गुण्डी—मूत्रावरोध, एकाहिक, कण्ठगत शोथ
निम्ब—क्रिमि, शोथ, हृद्दाह, रक्त रोग
पुनर्नवा—शोथ, श्लीपद, अर्श, पाण्डु, विषविकार
पञ्चकोल—ग्रहणी, अग्निमांद्य,
पित्तपापड़ा—पैत्तिक ज्वर, अरुचि दाह, रक्त-पित्त,
पीपल—कफ ज्वर, रोग, क्षय, श्वास, कुष्ठ, भगंदर
पटोलपत्र—कफ पैत्तिक ज्वर, कुष्ठ, कास, रक्त विकार,
पलाश—सर्पप्रमेह, मूत्रावरोध, क्रिमि रोग
पाषाणभेद—मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, वस्ति विकार, गुल्म,
वनगोभी—वृक्कशूल, विषविकार, हृदय दौर्बल्य, रक्त-विकार
वासा—रक्तपित्त, कास, क्षय, कामला, ज्वर
वरुण—गुल्म, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, वातरक्त.
ब्राह्मी—उन्माद, स्वरभेद, रसायन
बिनौला—धतूरविष, भ्रम,
बेल—आमाशयगत रोग, अतिसार, संग्रहणी,
वायविडंग—पाण्डु, क्रिमि, गुल्म, आध्मान,
भूम्यामलकी—प्रदर, स्त्रीरोग, मूत्रदोष, हिक्का, क्षय
मालकांगनी—समस्त उदररोग, जलोदर, कुष्ठ, वर्ण-दायक
कौफी—शिरःशूल, अहिफेन विष, कफज कास, कुकुर-कास
रास्ना—गठिया वात, वातव्याधि, वातरक्त, वातशूल
रक्तश्वघ्ना—मूर्च्छा, सर्पविष,
रसोन—प्रत्येक वातव्याधि, वातश्लेष्मज रोग
शरपुंखा—प्लीहा, यकृत विकार, गुल्म, रक्तदोष
शंखपुष्पी—अपस्मार, प्रमेह, सर्व शिरोरोग, उन्माद,
स्वर्णक्षीरी—उपदंश, रक्त विकार, मूत्रविकार,
सूर्यमुखी—योनिशूल, विस्फोट, पाण्डुरोग, क्रिमि
शतावर—नेत्रशूल, स्तनों में दुग्ध की कमी, प्रमेह
शोभाञ्जन—वात कफज व्याधि, अपची, विद्रधि, गण्ड-माला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सनाय-उदर-विकार, मलावरोध, मंदाग्नि,

सोमलता (Ephedra.V.)-त्रिदोष, श्वास, कास, कुकुर कास, शोथ

हल्दी-त्वग्रोग, व्रण शोधक, प्रमेह,

हिंगु-अहिफेनविष, अजीर्ण, आध्मान, शूल,

त्रिफला-उदर, नेत्र-विकार, प्रमेह

इत्यादि इत्यादि

इतने योगों और वनस्पतियों के इन्जेक्शनों की नामावली गुण प्रयोग निर्माण-विधियाँ जो हमने अनेकों पुस्तकों से निकाल कर पाठकों के सन्मुख दी हैं उन्हीं से पाठक अन्दाज लगा सकते हैं कि इनमें वास्तविक तथ्य क्या है। इसका हम आगे और उदाहरण न देकर केवल औषधियों के नाम ही लिखे देते हैं, जिनका प्रयोग इन्जेक्शन के रूप में निर्माणकर्ताओं ने किया है, वे अभी कसौटी पर पूरे-पूरे उतरे हुए नहीं कहे जा सकते, जब तक हमारे दिसम्बर १६५० के लेख के आधार पर हमारी संतुष्टि नहीं हो जाती, हमारे अतिरिक्त अन्य असंख्य उन वैद्यों और चिकित्सकों की संतुष्टि नहीं हो जाती जो मेरी तरह कुछ कहना चाहते हैं इन आयुर्वेदीय इन्जेक्शनों के बारे में; पर उनका मैदान में आने का और इन आयुर्वेदीय इन्जेक्शनों के आविष्करक, आचार्यों के विरोध या गुणगान करने का साहस नहीं होता। मैंने जो भी पीछे इन औषधियों के बारे में लिखा है वह मेरा मत नहीं था केवल इन पुस्तकों में वर्णित विधियों और गुणों प्रकार प्रयोग के ढंगों का खुलासा और उस पर अपनी ओर से सुझाव मात्र है।

इनके अतिरिक्त, वत्सनाभ, सप्तपर्ण, सूर्यमुखी, वरुण, भूम्यामलकी, भांग,सोमलता, शतपत्री, मुण्डी, शीतलचीनी, मुलहठी, अजवायन, सर्पगंधा, शरपुंखा, हींग, बिनौला, वायविडंग, सत्यानाशी, बैरोजा, बेल, रक्त कनेर इत्यादि अनेकों औषधियों के इन्जेक्शन यत्र तत्र मिलते हैं। इनमें से बहुत थोड़ा बहुत काम करते हैं जिनको बनाते समय उनका वास्तविक गुण और रसगुण वीर्य विकार नष्ट होने नहीं दिया जाता, जैसे सत्यानाशी, लहसुन, भूम्यामलकी, सोमलता, हींग, रक्तकनेर इत्यादि। अतः इनके जो गुण हमको आयुर्वेद ग्रंथों में मिलते हैं उन्हीं को प्रायः ये भी करते हैं, निर्माण विधि के लिए इन औषधियों के वे ही भाग ग्रहण किये जाते हैं जिनमें क्रिया शक्ति अंश अधिक मात्रा में विद्यमान हैं आयुर्वेदीय इन्जेक्शनों पर जो प्रगति और अनुसन्धान हम कर रहे हैं और करना चाहते हैं, उसका एक-एक भेद, एक-एक संस्कार और परीक्षा फल, वर्णन धन्वन्तरि के द्वारा पाठकों की सेवा में फिर देते रहेंगे। फिर उनकी आलोचना,और पुनः उस आलोचनाओं, पाठकों के प्रभाव के आधार पर उस इन्जेक्शन को उसकी विस्तृत रिपोर्ट सहित चिकित्सा विशेषकर आयुर्वेदीय चिकित्सा से सम्बन्धित राज्य के अधिकारियों के पास भेज दिया जाएगा, उस पर विचार विनमय होने के उपरान्त अपने देश वासियों के लिए उसे सामान्य वैद्य चिकित्सकों को प्रयोग करने के लिए दिया जायगा, ऐसी हमारी योजना है।

और अगर वास्तव में देखा जाए तो जितने भी वैद्यों से मेरा इस विषय में विचार विनमय हुआ है और दिसम्बर १६५० के मेरे लेख निकलने के बाद उनसे मैं मिला हूं मुझे सर्वत्र यही सुनाई देता है कि हमारे आयुर्वेदीय इन्जेक्शनों में या तो एक दम सुधार हों, या फिर इनको तुरन्त बंद कर दिया जाए और बिना राज्य के प्रमाण और आज्ञा के इस प्रकार के व्यर्थ की वस्तुओं से अनभिज्ञ वैद्यों और जन साधारण के धन का हरण रोका जाए। आयुर्वेद को ये नए कदम वास्तव में गौरव प्रदान करने वाले हैं, यदि इनके अन्दर भी आयुर्वेदीय सिद्धान्तानुसार संस्कार और रसगुण वीर्य विपाक का ध्यान रखा गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होम्योपैथिक और बायोकैमिक इन्जेकशन

विविध प्रकार की नवीन पुस्तकों में होम्योपेथिक और बायोकेमिक इन्जेक्शनों के निर्माण और उनके प्रयोग पर काफी रोशनी डाली गई है, और एक-एक रोग के लिए एक-एक औषधि को भी चुन लिया गया है, फिर उस रोग के लिए वही औषधि निश्चित कर दी गई है।

होम्योपेथी और बायोकेमिष्ट्री भारत में बाहर से आई । यद्यपि इनका मूल सिद्धान्त हमको आयुर्वेद में सूत्र रूप से कहीं न कहीं मिल सकता है, पर उससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं, हमने कई होम्योपेथ और बोयोकेमिस्टों से बातें कीं और सभी लगभग हमारे इस सिद्धान्त से सहमत से हो गये कि होम्योपेथी में एक औषधि एक रोग के लिए पेटेंट नहीं है रोगी के लक्षणों को पहले खूब देख भाल लेना चाहिए, और उन लक्षणों के आधार पर ही औषधि को निश्चित करना पड़ता है अतः खांसी के लिये जैसे कुछ पुस्तकों के ग्रंथकारों ने बेलाडोना, फास्फोरस, और कालीबाईक्रोम को लिखा है, मगर होम्योपेथी में ये औषधियां अन्य रोगों पर लक्षण मिल जाने पर व्यवहृत होती हैं, और उधर खांसी के लिए एकोनाईट, Ipecac, Cina, Sulphur, Calearea carb, Lachesis, Sanguinaria, Gels, Bellod, Acid Nitric, Antim, Tart., Bryonia, Rumex, Sticta, Mahganum Acet, Drosera, Arnica, Ars. Alb, Causticum Conium, Spongia, Heper Sulph, Hyoscyamus, Ignatia, Kali Bichrom, Merc. Sol., Noxvom, Phosph, Puls, Corallium, Ruberum, Brom, Ammon. Carb, Allium cepo, Iodium, Lobelia, Sonega एवं Stannum का प्रयोग एक किताब में मिलता है ।

हम उन लेखकों के आधार पर तीन औषधियों के इन्जेकशन को रखें अथवा इन ३७ औषधियों को रखें, फिर इन औषधियों के द्वारा ठीक होने वाले खांसी के रोगी के लक्षणों को रटें, तब कहीं हमको खांसी की चिकित्सा में सुगमता हो सकती है। अतः होम्योपेथी की चिकित्सा और औषधि गुण शास्त्र ज्ञाता, तथा उस वैद्यक के करने वाले चिकित्सकों के ही बस का काम है, अन्य सर्व-साधारण वैद्य या डाक्टर को अपना औषधालय या डिस्पेंसरी एक होम्योपेथिक औषधि संग्रहयुक्त भी बनाना होगा। अतः सर्व प्रथम होम्योपेथिक इन्जेकनों के बारे में इन प्रकाशित इन्जेक्शनों की पुस्तकों में हमको इतना भी नहीं मिलता है जो एक कूंए जल में एक लोटे जल के बराबर हो फिर उन पर विश्वास करना भी होम्योपैथिक सिद्धान्तानुसार आसान नहीं।

इस लिए हम अगर चाहें तो अपने पास रखी हुई होम्योपेथिक की पुस्तकों में से औषधियों के लक्षण, रोगों के लक्षण इत्यादि असंख्य बातों के बारे में लिखकर पाठकों का समय तथा धन्वन्तरि के पृष्ठों को खराब कर सकते हैं, परन्तु ऐसा नहीं करना चाहते हैं, अनेकों नव प्रकाशित पुस्तकों में आपको होम्योपेथिक, बायोकैमिक इन्जेक्शन की चर्चा और नाम मिलेंगे, उनको विस्तृत रूप से जानने वाले जिज्ञासुओं से हमारा सादर निवेदन है कि वे होम्योपेथी की दो-चार पुस्तकों को मंगाकर उनका अध्ययन करके तब होम्योपेथी के इन्जेक्शनों के बारे में अपनी धारणा बनायें कि यहां उन इन्जेक्शनों को यदि सही अर्थ में देने की चेष्टा कीजाय तो यह विशेषांक होम्योपैथिक मेटीरिया मेडिका बन सकता है, जैसा कि अन्य लिखने वालों ने अपनी पुस्तकों में इनका वर्णन अन्य पुस्तकों के आधार पर बिना अपनी निजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मति के और मौलिक विवेचना के लिख मारा है। ऐसे साहित्य के झमेले में पड़कर एक आयुर्वेद प्रेमी और चिकित्सक भूल-भुलैयां के ऐसे बन में पहुंच जाता है जहां उसको निकलने का रास्ता दिखाई नहीं देता और यही कारण है जो आज आयुर्वेद में लगा हुआ ऐसा कोढ़ आयुर्वेद को पंगु बनाए हुए है। हमारा यह तात्पर्य नहीं है कि हम इन लेखकों या प्रकाशकों के साथ बैर बांधें या इनको नुकसान पहुंचावें, पर इनसे हम और हमारे जिज्ञासु पाठक जनसाधारण कुछ पाने की इच्छा इतनी प्रबल रखता है कि इसका अनुमान वैद्यों के बीच में जाकर जनसाधारण के समाज में जाकर वार्तालाप करके जाना जासकता है। अतः इसी कारण हमने होम्योपेथिक इन्जेक्शनों और वायोकेमिक के इन्जेक्शनों के बारे में अत्यन्त सामिग्री होते हुए भी लिखना उचित और उपयुक्त नहीं समझा।

अन्त में अपने पाठकों से निम्न पंक्तियों को लिखकर हम अपना भी भार हल्का करना चाहते हैं कि इस विशेषांक में अपना मौलिक विवेचन और आलोचना, इन्जेक्शनों की चर्चा, औषधि गुणधर्म, एलोपेथ, आयुर्वेद, होमियो इत्यादि के बारे में जो भी लिखा गया है वह एक विशेषांक के रूप में, हमारी एक शंका भी है और एक बड़ा भारी प्रश्न है, जो नम्र और कटु शब्दों में पाठकों के आगे इस उद्देश्य से भी नग्न रूप में रखा गया है कि हमारे प्रकाण्ड विद्वान, मित्र, विचारक, निर्माता, संस्थाएं, चिकित्सक और जनसाधारण उन तमाम शंकाओं को निवारण करने का प्रयत्न करें। इस विशेषांक में असंख्यों जगह पर त्रुटियां होंगी, सिद्धान्तों का ग़लत अर्थ मैं लगा गया हूंगा, बहुत सी भूलें कर बैठा हूंगा, मगर उसको पाठक और उपरोक्त वर्ग प्रेमपूर्वक सुधार कर, विचारों का आदान-प्रदान करके मुझे मेरी त्रुटियों से अवगत करके, भ्रम जाल में फंसी आयुर्वेद की नौका को पार लगाने में सहायता करें। प्रत्येक आक्षेप और आलोचना को, जो युक्त या अनुपयुक्त होगी हम सहर्ष संग्रहीत करके आगे वास्तविकता पर पहुंचने का प्रयास करेंगे। इस विशेषांक के ऊपर पाठकों की निजी सम्मति का चाहे वह मेरे विरोध में ही क्यों न होगी हम इकत्रित करके उसका वास्तविक अर्थ निकालकर पुनः धन्वन्तरि के पाठकों के सम्मुख रखने में अपने को कृतज्ञ मानेंगे।

बादाम रोगन की मशीन

सुन्दर, मजबूत और उपयोगी है। वजन ७ सेर है, आप स्वयं बादाम रोगन आसानी से निकाल सकते हैं। जयपाल आदि तैलीय अंश युक्त पदार्थों का तैल भी निकाल सकते हैं। चिकित्सक एवं अत्तार अगर असली बादाम रोगन प्राप्त करना चाहते हैं तो इस मशीन को मंगाकर स्वयं निकालें। यह मशीन बहुत मजबूत और सुन्दर है। आप इसे प्राप्त करके अवश्य प्रसन्न हो जायेंगे।

मूल्य-५०)

नोट—मशीन रेल पार्सल से भेजी जासकती है, अतएव आर्डर के साथ १०) पेशगी अवश्य भेजें तथा अपने पास का रेलवे स्टेशन अवश्य लिखें।

पता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ [अलीगढ़]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सकोपयोगी

१—आंख धोने का ग्लास- ।।)
२—गले व जबान देखने की जीबी (Tongue-depressure) १।।)
३—स्तन से दूध निकालने का यंत्र- २)
४—डूस-चीनी का डूस, रबड़ की नली तथा २ टोंटनी सहित, २ पिंट का ५) ४ पिंट का ७।।)
५—कान धोने की पिचकारी-धातु की २ औंस की ७), ४ औंस की ८।।)
६—कान देखने का आला- १५)
७—इन्जेक्शन सिरिंज-कम्पलीट मयसुई सम्पूर्ण कांच की २ सी.सी. २।।), ५ सी.सी. ४)
रेकार्ड (जर्मनी) २ सी.सी. ८) ५ सी.सी. १०)
,, सर्वोत्तम २ सी. सी. १०।।) ५ सी. सी. १४)
८—थर्मामीटर (तापमापक यंत्र) जापानी २।।)
जील का सर्वोत्तम ४।।)
९—एनीमा-सिरिंज (वस्ति-यंत्र) रबड़ का जर्मनी ५।।) भारतीय उत्तम ३।।)
१०—रबड़ के दस्ताने- १ जोड़ा २)
११—गरम पानी की थैली- ५)
१२—ज ली- २।।)
१३—दवा नापने के ग्लास-
बूंद नापने का ।।=)
१ औंस का ।।।)
२ औंस का ।।।=)
४ औंस का १)
१४—स्टेथिस्कोप (वक्ष परीक्षा यंत्र) मूल्य १५)
सस्ते वाला १०)
१५—चीनी के गोल खरल-
नं० १-२।। इंची १।)
नं० २-३ इंची २)
नं० ३-४ इंची २।।)
नं० ५-५ इंची ३।।)
१६—कांच का गोल खरल-
नं. १-३।। इंची ४)
१७—सुजाक की पिचकारी कांच की जनानी ।।–) मर्दानी ।।)
१८—मूत्र कराने की नली (कैथीटर) ।।।)
१९—मोतीभरा देखने के शीशा-बढ़िया क्वालिटी (नए मंगाए हैं) बड़ा बढ़िया ३) छोटा बढ़िया २), बड़ा साधारण २) छोटा साधारण १)
२०—स्प्रिट लेम्प-धातु की २ औंस की ३।।)
४ औंस की ४।।) कांच की २)
२१—आंख में दवा डालने की पिचकारी
१ दर्जन ।।।≈) १ पिचकारी –)।।
२२-दर्द में लगाने का ग्लास-(Couping glass) बड़ा १।।।) बीच का १।।) छोटा १)

नपुंसकता निवारक यन्त्र (Organ developer vaccum pump)

यह मनुष्य की नपुंसकता को दूर करने वाला फायदेमंद यंत्र है। जो पुरुष अपने पुरुषत्व को खो देता है उसे यह पम्प (नल) व्यवहार कराने से शीघ्र लाभ होता है। यह जवानी की सच्ची अनुभूति पैदा करता है। चिकित्सकों को भी मंगाकर रखना चाहिए तथा अपने रोगियों पर व्यवहार करना चाहिए। मूल्य १८)

मंगाने का पता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नपुंसक—मनुष्य

के लिए गृहस्थ कलहपूर्ण एवं लज्जापूर्ण बन जाता है। वह मनुष्य अन्य सभी प्रकार से स्वस्थ होते हुए भी अपने को सर्वथा हेय एवं अयोग्य समझता है तथा अपने जीवन को उजड़ा हुआ। कतिपय नपुंसक रोगी तो आत्महत्या तक करने को उद्यत हो जाते हैं। उनके लिए—

नपुंसकत्वहर सैट

की औषधियां वरदान स्वरूप हैं। इनके विधिवत् सेवन से हजारों नपुंसक रोगी लाभ उठा चुके हैं तथा सैकड़ों वैद्य अपने रोगियों को इन्हें व्यवहार करा नामर्दी के सफल चिकित्सक कहलाने लगे हैं। आप या आपके मित्र या रोगी कोई भी इस लज्जापूर्ण रोग से परेशान हों तो उनको इन औषधियों का परिचय दें और आग्रह करें कि वे इसका सेवन कर लाभ उठावें। इस सैट में तीन औषधियां हैं—

१—मकरध्वज वटी

इनके सेवन से हर प्रकार के प्रमेह रोग, कमजोरी, वीर्य-विकार नष्ट होता है, भूख खुल कर लगती है, भोजन का पाचन समुचित रूप से हो जाने के कारण रस रक्त आदि सप्त-धातुओं का शुद्ध रूप में निर्माण होकर मनुष्य में नवस्फूर्ति का संचार होता है। यह सभी आन्तरिक विकृति को दूर करती हैं। मूल्य ४१ गोलियों की शीशी २॥=)

२—कामदीपक तिला

इसको लिंग पर लगाने से नसों की सभी खराबियां दूर होती हैं। इन्द्री का टेढ़ा होना, पतला हो जाना, नसें उभड़ आना ये विकृतियां दूर होकर नवचेतना का संचार होता है। १ शीशी २॥)

३—क्लीवत्वहर पोटली

इनसे इन्द्री की सिकाई की जाती है। जिससे नसें ढीली पड़ जाती हैं तथा विकृति शीघ्र नष्ट होती है। १० पोटली की दवा का एक डिब्बा का मूल्य २)

पूरी सेवन विधि साथ भेजी जाती है। उपर्युक्त तीनों औषधियां मिलाकर "नपुंसत्व हर सैट" कहलाता है। मूल्य ६) मात्र पोस्ट पैकिंग व्यय १।) पृथक।

पता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ [अलीगढ़]

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

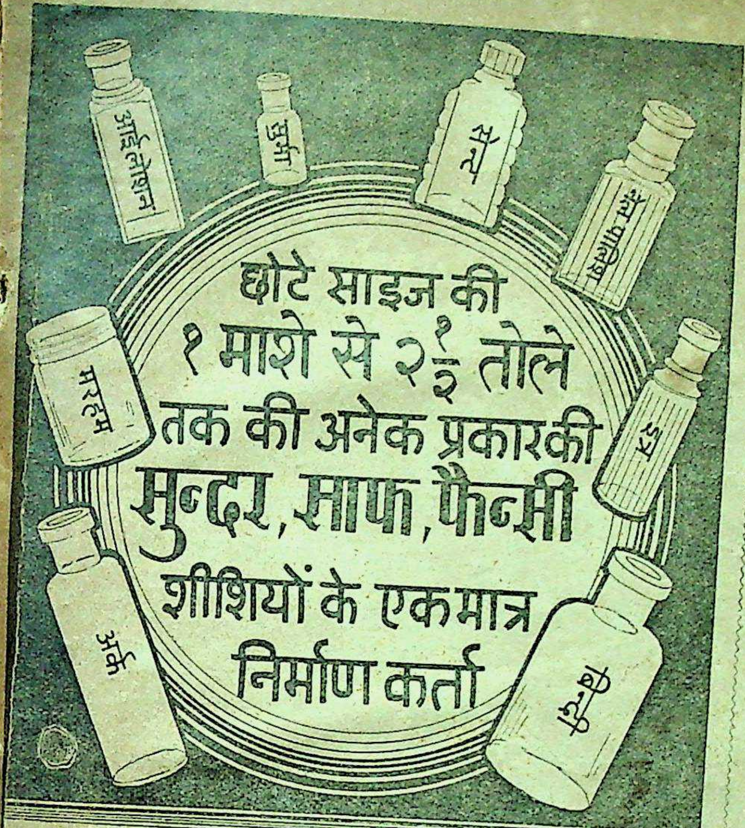

श्री राठी ग्लास वर्क्स
मुरसान (अलीगढ़)

कुमारकल्याण घुटी

बालकों की मीठी घुटी है बच्चे आसानी से पीते हैं। बालकों के सभी रोगों को नष्ट कर उनको मोटा-ताजा बनाती है। आप अपने बच्चों को नियमित पिलाइये। बच्चा स्वस्थ और सुन्दर-सुडौल बन जायेगा तथा कोई रोग उसे न सता सकेगा।

१ शीशी ।-) १ दर्जन २।।।-)

निर्माता—
धन्वन्तरि कार्यालय
विजयगढ़ (अलीगढ़)

एजेंसी लीजिए—

"धन्वन्तरि कार्यालय" गत ५३ वर्षों से सर्वोत्तम आयुर्वेदिक औषधियां निर्माण कर चिकित्सक समाज को सप्लाई करता आरहा है। अब अपनी अत्युत्तम औषधियों को जनता के हाथों में पहुंचाने के लिए बहुत सरल एवं लाभप्रद एजेंसी के नियम बनाये हैं। आप भी सूचीपत्र तथा एजेंसी नियमावली मंगाकर अवलोकन करें और अपने शहर में एजेंसी चालू कर पर्याप्त धन पैदा करें। थोड़ा रुपया लगाकर परिश्रम कीजिए आपको पर्याप्त लाभ मिलेगा।

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

वैद्य देवीशरण गर्ग द्वारा धन्वन्तरि प्रेस विजयगढ़ में मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ वैद्य यह नहीं जानते !!

हाँ भाई, तुमको महान कष्ट है, दुबले-पतले हो गये हो, तुमसे
भी नहीं जाता, हरे-पीले दस्त तंग करते हैं। दाँत निकलते स
तुम्हें अनेक व्याधियाँ परेशान करती हैं। पर इसमें तुम्हार
क्या है? क्योंकि इसका उपाय तुम्हारी माँ या तुम्हारा
चिकित्सक नहीं जानता।

पर मेरे साथ ऐसी बात नहीं है। मेरी माँ और मेरे वैद्य
भली प्रकार जानते हैं कि "कुमार कल्याण घु
के नियमित सेवन से हमारी सभी व्याधियाँ नष्ट हो कर
सुन्दर-सुडौल बन जाते हैं।

क्या यह बात आपके
कोई नहीं सु

बाजार में विज्ञापन के आधार पर बिकने वाली निरर्थक घुट्टियों को
होनहार बालकों को सेवन करा कर उन्हें परेशान न कीजियेगा। कु
कल्याण घुट्टी गहन अध्ययन एवं अनुभव के फल स्वरूप बा
समस्त रोग नाशार्थ निर्माण की गई है, और आज तो उसके गुणों
दुंदुभी पिट गई है। इसका प्रयोग भी "बालरोग चिकित्सा" (
नामक पुस्तक में स्पष्ट दिया गया है। अपने रोगीले बच्चे को
नियमित सेवन करा कर चमत्कार देखिये तो, उसके स्वास्थ
ज़मीन आसमान का अन्तर पायेंगे।

एक मात्र निर्माता

धन्वन्तरि कार्यालय बिजयगढ़ (अलीगढ़)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५८६.

श्री. आदर्श कुमार जी
C/o श्री युत. नन्दलाल जी
१२१३.
नाई की मण्डी
आगरा
दरबार शाह जी

SAMPLE STOCK VERIFICATION
1988
VERIFIED BY

Entered in Database
Signature with Date

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या 55.6/54 आगत संख्या 27905

पुस्तक वितरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30 वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए अन्यथा 50 पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

55.6

Signature with Date

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

विषय संख्या ५५.६ / ५५ आगत नं० 27105

लेखक तेजबहादुर चौधरी

शीर्षक धनवन्तरि

दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि न लगायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

gitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGango

पुस्तकालय, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार
५४.६
२८
26904

Date	No.	Date	No.
9 SEP 1960		67 / 2	
7 MAY 1965 225/2			
7 AUG 1965 254/2			
14 DEC 1982 2712			
31 JAN 1983 2712			

C-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridw

gitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGango

Date	No.	Date	No.

C-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridw

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar